



सचित्र असली-

बृहद् बूटी-प्रचार





प्रकाशक—

ठाकुरप्रसाद एण्ड सन्स ... सेलर

फोन ६३६५ ग... राजा, वाराणसी । ... मूल्य

श्रीं धन्वन्तरये नमः

❀ असली ❀



बूटी बृहत्सचित्र-प्रचार

जिसमें

जड़ी-बूटियों के चित्र सहित उनके गुणागुण का विवेचन और सार्वदेशिक भाषाओं में उनके नाम एवं अनुभूत नुस्खों का अपूर्व संग्रह

संग्राहक—वैद्यक संग्रह आदि विविध विषयों के अनेक ग्रन्थों के लेखक—

पं० रामलगन पाण्डेय "विशारद"

प्रकाशक—

ठाकुरप्रसाद एण्ड सन्स बुकसेलर

राजादरवाजा, वाराणसी।

सन् १९८१

संशोधित मूल्य

१४)

हर प्रकार की पुस्तक मिलने का पता—

ठाकुरप्रसाद एण्ड सन्स बुकसेलर

राजादरवाजा, वाराणसी।



सन् १९८१ ई०

लेखक के दो शब्द

जड़ी बूटियों द्वारा चिकित्सा का सुन्दर प्रबन्ध होनेसे ही हमारी अनेक बीमारियाँ दूर हो सकती हैं। यद्यपि इधरके दिनोंमें बूटियों को तो कौन कहे, आयुर्वेदके परिपक्व विधियों और कुशल वैद्यों द्वारा तैयार की हुई औषधियों को अपनानेमें हमारे देशवासी उदासीनता ही दिखलाते आये और यह किसी कारणवश वस्तु-संगत भी प्रतीत होता था। क्योंकि जब अन्यान्य देशोंसे चूर्ण, स्वरस, अवहेल और गुटिकाके रूपमें नाना प्रकार की पौष्टिक औषधियाँ अपनी तड़क-भड़कके साथ आकर देश को सुशोभित कर रही हैं तब उनको त्याग कर भाँगरा और भटकैया को कौन लेने जाता है? परन्तु हम अपने घर को भूल जायें, यह कितनी खराब बात है। हम यह नहीं सोचते कि समय की गतिके साथ-साथ हमें न जाने कितने कुचक्रों का सामना करना पड़ेगा और आज हम जिस गतिविधि को अपनाये हुए चल रहे हैं और दूसरे का पता भी नहीं लेते, वही आगे चलकर हमारे लिए खेद का विषय होगा।

यों तो पाश्चात्य प्रयोगोंके साथ-साथ हमारे देशमें भी बहुतसे परिवर्तन हुए और पाश्चात्य देशोंसे बनकर आनेवाली दवाओंसे टक्करसे टक्कर भिड़े। देखने में आया कि दोनोंकी चमक-दमक और लाभमें भी काफी समानता है और पेटेन्ट औषधियोंने भी अपनी खूबी दिखलाई। हमारे देश भारतमें दो-चार ऐसे अच्छे फर्म भी खुले जिन्होंने और इङ्गलैंडके वैज्ञानिकों को भी मात किया, परन्तु वह इतने कम हुए कि उससे देश की विशाल जनताका भरपूर कल्याण नहीं हो सकता था। आखिर वह भी समय आया, जब देशको अपनी औषधियोंकी आवश्यकता प्रतीत हुई और अपने पाँओं खड़ा होना पड़ा। परन्तु इससे क्या हो सकता था, जब हमने अपनी उस शक्तिको जाग्रत ही नहीं किया कि जिससे हमारी आपत्तिकालमें भी रक्षा होती। सृष्टिमें विकास होता गया। प्रजा बढ़ती गई। संघर्ष अनिवार्य हो गया। समयने लाकर एक दूसरेसे भिड़ा दिया। बड़े-बड़े वैज्ञानिक अपना चमत्कार दिखानेके लिए रंगमंच पर आये। क्या-क्या हुआ, गत पाँच-छः वर्षों को संसारने आँख पसार कर देखा। अभी उस दिन की बात है कि आजाद हिन्द फौजके प्रधान सेनानी मि० शाहनवाज साहब फर्मा रहे थे कि हम जहाँ अपने अन्यान्न साधनोंसे कमजोर थे, वहाँ हमारे साथियों एवं सैनिकोंमें भीषण व्याधि भी फैल गई थी और हम उसका कोई निराकरण नहीं कर सकते थे। कहना न होगा कि यदि हम अपने देश की जड़ी बूटियों का ध्यान रखते, हमारे देश का बच्चा-बच्चा अपनी बातोंसे परिचित होता अपनी घरेलू दवाइयों का ध्यान रखता तो शायद आजाद हिन्द फौजको कमसे कम इन जड़ी बूटियोंके द्वारा काफी सहायता मिलती और रोगोंके लिये ही क्या, बल्कि अन्यान्य खाद्य सामग्रियोंके अभावमें भी उन्हें प्राण-रक्षाके अनेक साधन उपलब्ध होते और वस्तुतः ऐसी अवस्थामें

जब कि वे पहाड़की दुर्गम घाटियों एवं भयानक बनोंसे ही चल रहे थे उन्हें किसी प्रकार का कष्ट नहीं होता। ओफ ! कैसा भीषण संहार हुआ। औषधियोंके अभावमें और अपनी अनभिज्ञतामें फौजोंमें ही तो क्या सिविलियन बस्तियोंमें भी कैसी महामारी फैली। सर्वतोमुखी युद्धके कारण देशका सहायकार्य तो बन्द ही हो गया था और हम अपनेको भूल भी बैठे थे, फिर हमारा दुर्दमनीय ह्रास क्यों न होता ? बड़े-बड़े बह गये। कितनोंकी कड़ियाँ टूट गईं, दवाओंका स्टाक साफ हो गया। होमियोपैथी, एलोपैथी सभी एक-सी साँस लेते रहे। जिस मेडिशनकी जरूरत पड़े, वही गायव। कलकत्ता, कराँची कहीं नहीं। उनके अभाव में, उन्हीं पर भरोसा रखनेवाले कितने मरीज कालके घाट उतरे। चारों ओर संहार मच गया। विषमता तो विषमता ही ? जब तक चारों ओरसे न आवे, आनेके अर्थ ही क्या? रोग-दोष अलग, पेट की ज्वाला अलग। इस प्रकार कालचक्रने बेदर्द काम किया। जब लोगों ने देखा कि अब इस तरह भी काम नहीं चलता और विदेशी औषधियाँ नहीं मिल सकतीं तब अन्तमें वही गंगाजल और तुलसी का पत्ता, कटाईके चूर्ण फिर सेवनमें आने लगे। परन्तु इन्हें तो देश पहले ही से भूल बैठा था, समय पर उतने याद से उपकार ही कितना होता ? अस्तु वही हुआ जो होना था ? कहने का अभिप्राय यह कि ऋषियोंने हमारे लिये जो-जो मार्ग प्रशस्त किये हैं वे किसी भी कालमें सेवनीय और सर्वथा ही नवीन हैं। इसलिए हमें उसी पर चलना चाहिए।

प्रस्तुत पुस्तक "बूटी-प्रचार" इसी ध्येयसे तैयार की गई है। कहना न होगा कि मैं इस महान् कार्यके सर्वथा ही अयोग्य था। परन्तु वस्तु स्थिति भी कोई चीज है, वह अपना करके ही छोड़ती है। बस, इसी नियमसे जैसे भी हुआ मैं इस महत् कार्यमें लगा। एक बार और भी मुझे ऐसा मौका मिला था। परन्तु जैसा मैं चाहता था ठीक रूपमें वैसा न हो सका। मेरे और प्रकाशक महोदयमें कुछ मतभेद सा हो गया। इसलिए चाहे जैसे भी होता लोकोपकारी दृष्टिसे उसे मैंने फिर एक नवीन रूप देना ही उचित समझा। बाबू ठाकुर प्रसाद जी एक अच्छे प्रकाशक हैं और वह बहुत दिनोंसे यह चाहते थे कि बूटियोंके सम्बन्धमें ऐसे कुछ नुस्खों का संग्रह किया जाय कि जिससे आयुर्वेदके विकासके साथ-साथ बूटियोंके द्वारा घरेलू दवाइयों का अच्छा प्रचार हो जावे——मैंने इसका यह नवीन रूप इनको दिया। अब यह पुस्तक के रूपमें आप सबके हाथ है। यदि इससे जनता जनार्दन का कुछ भी लाभ हुआ तो मैं अपना परिश्रम सफल समझूँगा।

ओम् शान्तिः शान्तिः शान्तिः

काशी
चैत्र रामनवमी
बुधवार १० अप्रैल १९४६

सुहृद-सज्जन-समाज-सेवक—
रामलग्न पाण्डेय 'विशारद'

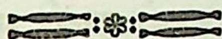
विषय सूची

॥ इति ॥

❀ श्रीगणेशाय नमः ❀

बृहद् बूटी प्रचार वैद्यक

(जड़ी बूटियों द्वारा चिकित्सा का अपूर्व संग्रह)



अंकोल

इसे संस्कृत में अंकोट, दीर्घकील, अंकोल और निकोचक कहते हैं। हिन्दी में ढेरा, टेरा, अँकोल। बंगला में घल, आकोर। मराठी में आंइल। तेलगू, उड़ीके। गुजराती में अंकोल और अंग्रजी में एलोन्जियम लेमारकी आय कहते हैं।

यह कटु, तीक्ष्ण, स्निग्धोष्ण, कषैला, हल्का रेचक और विषघ्न गुणोंवाला होता है।

इसको प्रयोग करने से कृमि, शूल, आम, सूजन, ग्रह पीड़ा, विसर्प और कफजन्य रक्तपित्त रोग अच्छे होते हैं। इससे सर्प और मूसे का विष दूर होता है।

इसका फल शीतल, स्वादु, कफनाशक, पुष्टिकर्ता, भारी, बलकारी और रेचक है।

यह वात, पित्तजन्यदाह, क्षय-रोग और रक्तदोष को भी निवारण करता है।

ज्वर की दवा

अंकोल वृक्ष के जड़ की छाल का ५० ग्रेन की मात्रा में लेकर काढ़ा कर देने से ज्वर शान्त हो जाता है और इससे उल्टी भी होती है।

इसकी छाल बड़ी कड़वी होती है। त्वचा पर रखने से बहुत ही असर करती है।

पेट के कीड़े दूर हों

अंकोल की जड़ का रस काढ़ा करके पीने से जुलाब लाता है और पेट के कीड़ों को मल द्वारा बाहर निकाल देता है।

यह जलंधर रोग में भी काम आता है तथा इसकी जड़ को पीसकर पिलाने से सर्प काटने का विष उतर जाता है।

यदि शरीर के किसी सन्धि में (जोड़ों में) दर्द हो तो अंकोल वृक्ष की पत्ती लाकर उसकी पुल्टिश बना लेवे और उस पुल्टिश को उस स्थान पर बाँधे तो दर्द जाता रहता है।

अगस्त

इसे संस्कृत में अगस्त्य, वंगसेन, मुनिपुष्प और मुनिद्रुम कहते हैं। हिन्दी में अगस्तिया और हथिया नाम है। बंगला में बक, मराठी में हदगा, गुजराती में अकथियों, तेलगू में अनीसे, तामिल में अगति। लेटिन में लार्ज फ्लावर्डए गेडा और अंग्रेजी में ग्रांडी फ्लोर कहते हैं।



इसका वृक्ष लम्बा होता है और इस पर पत्ते वाली बेल अधिक चढ़ती है। इसके पत्ते इमली के समान छोटे होते हैं और इसका फूल सफेद, पीला, लाल और काला इस प्रकार चार जाति का होता है। यह केसूला के फल के

समान बाँका और उत्तम होता है। इसकी फली लम्बी, पतली और चिपटी होती है।

गुण में—यह शीतल, रुक्ष, वातकर्ता और कड़वा है।

इसके सेवन से पित्त, कफ, चातुर्थिक ज्वर और शिर का दर्द दूर होता है।

शिर दर्द की दवा

अगस्त के पत्तों का रस निकालकर नाक में दो-तीन बूँद टपकाने से छींक आवेगी और नाक से पानी निकलेगा जिससे मस्तक की पीड़ा और भारीपन दूर हो जाता है।

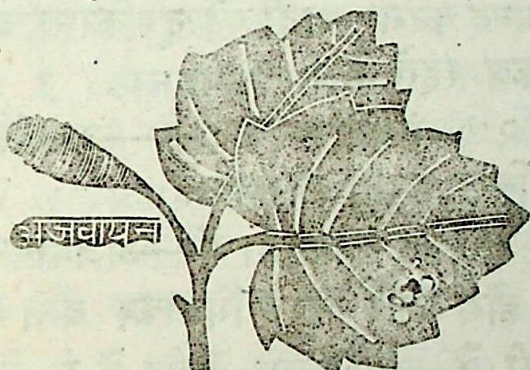
अगस्त के फूलों का शाक बनाकर खाया जाता है। इसकी छाल पाचनशक्ति को बढ़ाती है। इसके पत्तों को गरम जल में भिगोकर देने से जुलाब आता है।

आँख में जाला पड़ने की दवा

अगस्त के फूल का रस आँख में डालने से नजला दूर होता है।

अजवायन

इसे संस्कृत में यवानिका, उग्रगंधा, ब्रह्मदर्भा, अजमोदिका, दीप्यका दीप्या और दवसाह्लया कहते हैं। हिन्दी में अजवायन, बंगला में अयमानी, मराठो में ओंवा, क० ओंडु, गु० यवान, जवाइन, बोडी, अजमों, तै० वायु, ता० अमन, फा० नानथाँ और अंग्रेजी में ओयसप्लन कहते हैं।



गुण—इसका रस चरपरा और तीक्ष्ण है। यह अग्नि दीपक और कफ तथा वात के रोगों में अत्यन्त लाभदायक है। यह उष्ण-वीर्य, दाह-कर्ता, हृदय को हितकारी, वृष्य, बलकारी, हल्का, नेत्र रोग हितकारी, कफ विकार नाशक, वमन, हिचकी और वस्ति (मसाने) की पीड़ा को दूर करती है। इसकी प्रतिनिधि सौंफ है अथवा पार्वती

अजमोदा है। इसके फल की मात्रा नौ माशे है। और काइ का फूल तथा मस्तगी इसका दर्प-नाशक है।

(१) अजवायन में मिरचों अथवा राई की तीक्ष्णता, चिरायते की कड़वास और हींग का ऐंठन बन्द करना, बादी को दूर करना, यह तीन गुण एकत्र रहते हैं।

(२) संधियों के दर्द में—अजवायन का तेल मालिश करना लाभप्रद है।

(३) पेट की पीड़ा में—अजवायन, सेंधा नमक, हींग और हरड़ मिलाकर देना अत्यन्त लाभकारी है तथा इससे शरीर में से निकलता हुआ प्रवाह बन्द होता है और इसका पानी अंजन वगैरह बनाने में उपयोग किया जाता है।

(४) फेफड़े के और गले के पास नली में सूजन आ गई हो और कफ अधिक निकलता हो तो अजवायन देने से बन्द हो जाता है और अजवायन को पीस उसकी पुल्टिश बाँध देने से दर्द बिलकुल नष्ट हो जाता है।

(५) अजवायन बदहजमी और दस्त की बीमारी में अत्यन्त उपयोगी है तथा खराब स्वादवाली दवा अजमोद के पानी के साथ देने से उल्टी आने की सी शंका नहीं होती है इससे ये सब दवा पेट में शूल होने की सी शंका को बन्द करती और लार अधिक निकालती है।

(६) अजवायन खाने से पाचन शक्ति बढ़ती है। यह भूख प्रदीप्त करनेवाली है।

(७) सुश्रुत संहिता में अजवायन को वात-कफ नाशक, अरुचि नाशक, दीपन, गुल्म-शूल नाशक और आमपाचक कहा गया है।

सफेद कुष्ट की दवा

अजमोद पहले दिन चार माशे फिर एक माशे प्रतिदिन अधिक करके प्रातःकाल शीतल जल के साथ फाँके यहाँ तक कि आठ माशे तक पहुँचा देवे। यदि दो मास में गुण प्रकट न हो तो तीसरे मास में एक माशे वायविडङ्ग नित्य खावे और बादीवाली चीजों को न खावे। चने की रोटी खाना गुणदायक है।

तथाच—

अजमोद दो भाग, गेरू एक भाग कूट छानकर दो माशे नित्य खावे और बिना घृत के अलोनी रोटी खावे तो सफेद कुष्ट (बहकुष्ट) जो बाह्य त्वचा में उत्पन्न होते हैं और मांस तथा त्वचा के भीतर भी प्रवेश कर जाते हैं, अच्छा हो जावे ।

उपदंश अथवा गर्मी की दवा

खुरासानी अजवायन, अकरकरा, मुर्दाशंख और झंझर की फली एक माशे पीसकर बेरकी लकड़ी की आँच पर धूनी ले ।

जोड़ों में दर्द होने पर तेल

अजवायन को पीसकर मीठे तेल में (तिल्ली के तेल में) मिलाकर जहाँ दर्द हो मालिश करे तो सब प्रकार का बादी दूर होता है ।

अडूसा

इसे संस्कृत में वासक, वासिका, वासा, भिषङ्माता, सिंहिका सिंहास्य, वाजिदंत, आटरूष, वृषताम्र और सिंहपर्ण कहते हैं। हिन्दी में अडूँस, रूसा, वासा। बंगला में बासक। मराठी में अडूलसा, तैलगू में आड़ासोरे, वाडायाकु, तै० अधघोड़े, गुजराती में अडूरसी, ला० आधारोढ़ा, वासीका।



यह एक क्षुप जाति की वनस्पति है। यह एक या डेढ़ गज की ऊँचाई होता है। इस वृक्ष के लम्बे पत्ते अनीदार आमने-सामने चक्कर में होते हैं। इसका फूल सफेद रंग का नागफेन के समान होता है और फल मोंगरा के समान होता है। इसमें से पिस्ते के समान चार फल निकलते हैं और वह चपटे होते हैं। इसके दो भेद हैं। काला

और सफेद। यह बड़ा कटु होता है इससे इसे १० वर्ष से कम आयुवाले को नहीं देना चाहिए।

गुण—यह वातकारक, स्वरशोधक, कड़वा, कषैला, हलका और शीतल है। यह कफ को बढ़ाता, रक्तपित्त, तृषारोग, श्वांस, खांसी, ज्वर, वमन, प्रमेह, कोढ़ और क्षय इन रोगों को दूर करता है तथा दाँतों को मजबूत करता है। इसके पत्ते और फूल प्रयोग में लिये जाते हैं।

(१) राजनिघंटु में लिखा है कि अडूसे के वृक्ष की छाल में कड़वास है और छाल पत्तों को दीपन, रोचक और आमनाशक वर्णन किया है और इन गुणों के कारण यह पुरानी संग्रहणी और कफ के ऊपर दिया जाता है। छाल का क्वाथ (काढ़ा) दो से लेकर तीन औंस की मात्रा में देने से बदहजमी दूर होती है।

(२) अडूसे की छाल को ज्वर की बीमारी में काढ़ा करके देने से पर्याप्त लाभ होता है और प्रसव होने के बाद स्त्रियों को देने से (छाल तथा

पत्तों का काढ़ा) अद्भुत लाभ होता है।

हृद्रोग की दवा

अड़ूसे का छोटा पेड़ जड़-पत्तों सहित छाया में सुखाकर कूट-छान फंकी बनाकर एक हथेली भर नित्य खाए तो हृदय की समस्त शिकायतें दूर हों।

दाँत दर्द की दवा

अड़ूसे के पत्ते औटाकर कुल्ले करे तो दाँत और मसूड़ों का दर्द दूर हो जाता है।

भगंदर रोग की दवा

अड़ूसे के पत्ते पीसकर उसमें थोड़ा लवण मिलाकर भगंदर के घाव पर छिड़के तो शीघ्र लाभ हो।

अरंड

संस्कृत में एरंड को आमंड, चित्र, गन्धर्व, हस्तक, पंचागुल, बर्द्धमान, दीर्घदण्ड, अदंदक, वागरि, तरुण और सबूक कहते हैं। हिन्दी में अन्ड, अरन्ड, अन्डीआ। ब० शुक्ल एरन्डव्वारेन्दा। म० एरडू आंडछके, गु० एरन्डो, तैं० आमुडामु, अ० खरूप,

फा० येदमञ्जीर, तुरकी० करचक, ला० रिसनस और अंग्रेजी में कैस्ट्राइल कहते हैं।



यह लाल और सफेद दो जाति का होता है। अरंड का वृक्ष मंजरी युक्त, पुष्पहस्तपर्ण और चित्रविचित्र फलवाले होते हैं। इसके प्रत्येक डोंड़ों में तीन तीन तीन अंडी निकलती हैं और वे डोंड़ों काँटेवाले अथवा बिना काँटे के भी होते हैं और उनके ऊपर बहुत से रुआँसे-रुआँसे होते हैं।

गुण—दोनों प्रकार के अरंड मधुर, गरम और भारी होते हैं। अरंड के पत्ते वातनाशक,

कृमिनाशक और रक्तपित्त का कुपित कर्ता है। इसके फल अत्यन्त गरम, वातनाशक, चरपरे और अत्यन्त अग्निदीपक हैं।

दोनों प्रकार के अरंड शूल, सूजन, कमर और मस्तक रोग, उदर रोग, ज्वर, व्रण (बद) श्वास, कफवृद्धि, अफरा, खाँसी, कोढ़ और आमवात रोगों को नाश करते हैं।

अरंड के पत्ते मूत्रकृच्छ्र रोग को नाश करते हैं और इसके आगे के कोमल-कोमल पत्ते गोला, वास्तिशूल, कफ, बादी, कृमि और सात प्रकार की अंडवृद्धि को दूर करते हैं। अतएव गोला, शूल, यकृत, प्लीहा, उदररोग और अर्शरोग में इसका फल देना चाहिए।

अरंड की मज्जा (बीज के अन्दर का सफेद बीज) बादी कफ और उदररोग को नष्ट करता है। इसकी जड़, पत्ते, तेल और बीज सभी प्रयोग में लाये जाते हैं। इसकी सेवन की मात्रा दो माशे की है।

दवायें

(१) अंडी के तीन बीज या छः बीज अथवा नौ बीजों को पीस शहद में मिलाकर चाटे तो कफ और वात को निकलकर उस प्राणी की देह शुद्ध हो जावे।

(२) अंडी को लोहे की सलाई में छेदकर जलाकर कज्जल पाड़े तो जिसको नींद न आती हो उसको नींद आवे और त्रिदोष रूप सर्प को मारने में यह गरुड़ के समान है। यह हृदय को अत्यन्त अप्रिय है। इसका दर्पनाशक कतीरा है और प्रतिनिधि मूली के बीज अथवा निगुंण्डी के बीज हैं।

बवासीर की दवा

अरंड के पत्ते जल में औटाकर बफारा लें।

वायु शूल की दवा

अरंड की जड़ और सोंठ प्रत्येक साढ़े तीन माशे, हींग, सोंचरनोन प्रत्येक एक माशे, सोंठ और अरंड की जड़ तीन पाव पानी में औटाये।

जब आधा पाव रहे तो छानकर पहिले हींग और नोन को बारीक पीस कर गोली बना कर लें। फिर ऊपर से काढ़ा पीवें।

वायु और पेट की पीड़ा में

अरंड की लकड़ी जलाकर उसकी राख को एक फंकी लेने से दर्द जाता रहता है।

तथा च

अरंड की जड़ तीन तोले चार माशे और हरी हो तो छः तोले आठ माशे लेकर आधा सेर जल में औटावें जब चतुर्थांश शेष रहे छान-कर अरंडी का तेल दो तोले और हींग तीन माशे सबको मिलाकर गुनगुना २ पीवें तो वह वायुशूल जो प्रकृति के साथ सर्दी से होवे तो अजीर्ण सहित दूर हो जावे।

कमर की पीड़ा में

अरंड का बीज, सेंधा नमक, देवदारु की लकड़ी प्रत्येक एक तोला, हींग छः माशे, गेहूँ का आटा आधा पाव सबको परस्पर पीस मिलाकर

रोटी पकावे जब एक ओर पक जाय तो उसे पीड़ा के स्थान पर बाँधे।

नासूर की चिकित्सा में

अरंड की नवीन कोंपल (हरी, कच्ची, कोमल पत्तियाँ) को लाकर उसे पानी में पीस डालें, फिर मेंहदी की तरह लगावे।

अग्नि से जलने पर

अरंड के पत्ते का रस या धावा के फूल जलाकर सरसों के तेल में मिलाकर लगावे तथा अरंड की सफेदी मीठे तेल में मिलाकर लगावे।

अतीस

विषा, अतिविषा, निश्वा, शृङ्गी, अरुणा, शुक्लकंदा, उपविषा, मंगुरा और घुणवल्लभा इसके संस्कृत नाम हैं। हि० अतीस, बं० आतइच, म० अतिविष, गु० अतिवखीनकली, क० अतिविषा, तै० अतीवासा, ला० एकोनाइट्स हैटराफाइलम् कहते हैं।



यह एक क्षुप जाति की औषधि है जो करैले के शाक के समान होती है। इसके नीचे कंद होता है और यह तीन जाति की होती है।

अतीस का गुण गरम, कटु, तिक्त, पाचनी और दीपनकर्ता है। यह पुराने ज्वर में, अतिसार में, आमवात में, विष, खाँसी, वमन और कृमि-रोग में परम गुणकारी है।

अँतरिया ज्वर की दवा

अतीस का चूर्ण कुनेन के समान है। इसकी

मात्रा ५ माशे से लेकर ३॥ माशे तक की मानी जाती है।

अतीस तीन प्रकार की—सफेद, लाल और काली होती है। रस वीर्य और विपाक में तीनों ही समान हैं, परन्तु सफेद जाति की अतीस उत्तम होती है।

अदरक

इसे संस्कृत में आर्द्रक, शृंगवेरी, कटुभद्र और आद्रिका कहते हैं। हि० अदरक—ख, बं० आंदा, म० आलें, क० अल्ले गु० आदु, फा० जंजबीलता, अरबी; जजबीलरतब, अंग्रेजी जिंजर ला० जंजीबर आफिसिनेली कहते हैं।



यह गुल्म जाति की वनस्पति का कन्द है।

यह रेतीली जमीन में जल के किनारे बहुत होती है। यह रस में कटु, गुण में तीक्ष्ण, रूक्ष, भेदक, भारी, अग्निदीपक, उष्ण, पाक में मधुर और वात, कफनाशक है। जितने गुण सोंठ में होते हैं उतने ही अदरक में भी होते हैं।

भोजन के पहले अदरक और सेंधा नमक का सेवन सदैव करना चाहिए। यह अग्नि को दीपन करती है, रुचिवर्द्धक और जिह्वा और कंठ को शोधन करती है।

कुष्ट, पांडु, मूत्रकृच्छ्र, रक्तपित्त, व्रण, ज्वर और दाह इन रोगों में तथा गरमियों और शरद्-ऋतु में अदरक का सेवन वर्जित है। इसकी मात्रा दो माशे की है।

दाँत के दर्द में

अदरक के पत्तों पर नमक छिड़क कर पीड़ा युक्त दाँतों के बीच में रक्खे तो सर्दी की दन्त पीड़ा दूर हो।

आधा शीशी की दवा

अदरक को थोड़े से पानी में पीसकर छान ले और तीन बूँद नाक में टपकावे और सूर्य की ओर मुँह करके बैठे तो अधकपारी दूर होवे ।

अदरक-पाक

अदरक १ सेर लेकर उसके छिलके उतार पिट्ठी बनावे अनन्तर दो सेर दूध में खोवा करे फिर आधा सेर घी मिलाकर उसे भून ले। पश्चात् दो सेर कन्द अथवा शक्कर की चासनी कर पाक बनावे। फिर मिर्च, पीपर, पीपरामूल, चित्रक, नागकेसर, मोथा, पत्रज और दालचीनी यह सब एक-एक तोला भर डाल दे। यह अदरक पाक दो तोला से एक छटाँक नित्य सेवन करे तो कमर, पाँवों की पीड़ा दूर होवे और शीत, पित्त व खाँसी, श्वास, बस रक्त-गुल्म, क्षीणता इन रोगों में हितकारी है। यह दीपन-पाचन और जठराग्नि को बढ़ाने वाला है।

अनार

इसे संस्कृत में दाडिम, करक, दंतबीज और लोहितपुष्पक कहते हैं। हिन्दी० अनार, गु० दाड़यम्, क० दालिंब, तै० दालिं बाकाया, दानिमचेट्टु ता० मादतलई चेहेड्डी; उड़िया दालिंब अ० सम्मान और इंगलिश में प्रोंग्रानेट कहते हैं।



यह मीठा, खट्टा और खटमिट्ठा तीन प्रकार का होता है। अनार त्रिदोषहर है और प्यास, दाह, ज्वर, हृदयरोग, कंठरोग और मुख की गंध को नष्ट करता है। यह तृप्तिकर्ता, शुक्रकर तथा हल्का, कषायरस, ग्राही, स्निग्ध, स्मरण शक्ति-वर्द्धक और बलकारक है। किन्तु खट्टा और मीठा अनार अग्निको बढ़ानेवाला, रोचक और थोड़ा पित्तजनक है और केवल खट्टा अनार पित्तकारी, वात-कफ नाशक है।

अनार के रस को केसर के साथ मिलाकर शीतल प्रयोग में देने की प्रशंसा है। दस्त और कब्जियत की शिकायत न हो तो नेत्रपीड़ा में अनार की पत्ती पीसकर टिकिया बनाकर सोने के समय नेत्रों पर बाँधे।

अँतड़ी के रोग में

अनार के फल की छाल और फूल, लौंग, तज, धनियाँ और काली मिरीच आदि खुशबूदार पदार्थों के साथ मिलाकर देते हैं।

अनार का फूल, फल और छाल भी प्रयोग में लाया जाता है और अनार के जड़ की छाल तो अन्य सर्व भागों से अधिक ग्राही है तथा—

पेट के कीड़ों को मारने की दवा

अनार के जड़ की ५ तोला छाल दो सेर पानी में डालकर आँच पर चढ़ावे जब एक सेर पानी शेष रहे तब उतार लेवे और शीतल होने पर इसमें से एक-एक प्याला आधी-आधी घड़ी में जहाँ तक सब निबट जाय तहाँ तक पीने को

देवे । जब कई बार इस प्रयोग को किया जाता है तो पेट से कीड़ों के निकलने की सी शंका होती है और थोड़े ही देर में पेट के तमाम कीड़े निकल जाते हैं ।

पेट की ऐंठन में

अनार के बीज और बीजों का रस पेट की ऐंठन को नष्ट करता है ।

दस्त की बीमारी में

अनार के छाल का काढ़ा बनाकर उसमें थोड़ी सी अफीम डालकर देने से बहुत उत्तम लाभ होता है।

डाक्टर कर्क पेट्रीक का कहना है कि अनार के फल की छाल पाचनशक्ति को बढ़ाने को और ग्राही तथा प्राचीन मरोड़ा के रोग में उसको लौंग के साथ औटाकर देने से अन्य औषधियों से यह अधिक लाभदायक है ।

चरक में लिखा है कि अनार वमनकारक और रुचि को उत्पन्न करके शरीर को उत्तेजन देनेवाला है ।

सुश्रुत कहता है कि अनार वातनाशक, मूत्रदोषहर, तृषानाशक और रुचिकी है।

सर्दी के शिर दर्द में

अनार की जड़ को पानी में पीसकर शिर पर लेप करे।

मुँह आने पर

अनार और बबूल की छाल और सफेद कत्था औटाकर गरगरा करे।

मसूड़ों और दाँत दर्द के लिए

अनार और अनार की कली और माजूफल एक-एक या दो-दो और सबको बराबर मसूर पीसकर औटाकर कुल्ले करना मसूड़ों को मजबूत करता है तथा रुधिर को बन्द करता है।

कर्ण रोग में

खट्टे अनार का रस शहद में मिलाकर कान में टपकाना गरम पीड़ा का गुण करता है।

वमन में

अनार का शरबत वमन को बन्द करता है।

मीठे अनार का रस और बराबर घी चीनी की चासनी बनाकर देवें।

स्त्री-धर्म में अधिक रक्त रोकने को

अनार का छिल्का औटाकर एक तोला पिये।

अफीम

-इसे संस्कृत में खसफलक्षीर, आफूक और अहिफेनक कहते हैं। हि० अफीम, अमल, आफ बं० अहिफेन, म० अफू आफू, गु० अफीण, तै० नाल्लामंदु क० अफेन, फा० अफयून, तियार्क अ० लेबनुलक्खसखाश, ला० ओप्पस, अंग्रेजी ओप्यम और ग्रीक वाले ओपाआन कहते हैं।

यह मालवा, खानदेश, पटना और सिंध में बहुत होती है। यह क्षुप जाति की एक वनस्पति है। इसके फल में चीरा देने से जो रस निकलता है उसको अफीम कहते हैं।

यह गुण में शोषक, ग्राही, कफनाशक, वात-वर्द्धक, पित्तजनक, आक्षेप-वातनाशक, मादक, स्वेदजनक और वेदना नाशक है।

प्रयोग—यह मूत्रातिसार, खाँसी, श्वास,

अतिसार और रक्तस्राव को निवारण करता है और विशेषकर जो-जो गुण पोस्ते के ढोंड़ों में होते हैं वही-वही गुण अफीम में होते हैं।

अफीम चार प्रकार की होती है। जारण, मारण, धारण और सारण। इनके लक्षण ये हैं कि सफेद रंग की अफीम जारण है। काले रंग की मारण, पीले रंग की धारण और चित्र-विचित्र रंग की अफीम सारण है।

जारण अफीम किये हुए भोजन को भस्म करती है और मारण मारती है। धारण अफीम अवस्था का संगठन करती है और सारण अफीम मल तोड़ देती है अर्थात् दस्त कराती है।

मात्रा—अफीम की मात्र एक मसूर के बराबर अथवा दो मसूर या पाव रत्ती की है। अफीम को मारने वाला घी है।

नेत्र पीड़ा में

अफीम एक माशे, भुनी फिटकरी दो माशे, इमली की पत्तियाँ दश माशे सबको महीन पीसकर

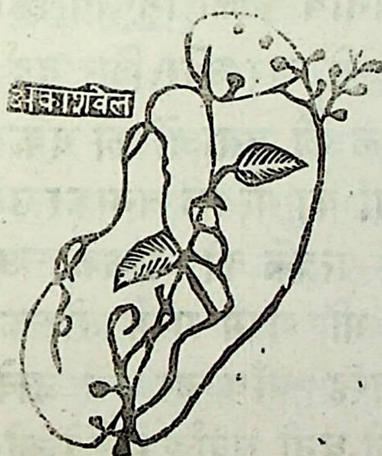
पोटली बाँधे और पानी में भिगोकर नेत्रों पर फेरे और भीतर टपकावे।

कान के दर्द में

एक रत्ती अफीम जलाकर उसकी चार चावल भस्म गुलरोगन में घोरकर कान में टपकावे।

अमरबेल

इसे संस्कृत में आकाशवल्ली; अमरवल्ली और खवल्ली कहते हैं। हिन्दी में अमरवेल; आकाशवौंर, आकाशबँवरी। म० आकाशवेल, का० नेदमुदवल्ली, तै० इन्द्रजाल और अ० अफ़तीमून कहते हैं।



यह लता है। वृक्षों के ऊपर पील रंग की सूत सी लटकी रहती है, इसीसे इसको अमरबेल कहते हैं। यह जिस वृक्ष पर चढ़ती है उसको नष्ट कर देती है।

यह गुण में ग्राही, तिक्त, पिच्छल (चिकनी), कषैली, अग्निकारक और हृदय को सुख कारक है। यह पित्त, कफ, आम और नेत्र के रोगों को नष्ट करती है। इसका सर्वांश लिया जाता है। मात्रा इसको चार रत्ती से डेढ़ तोले तक की है। इसके दर्पनाशक सेव, कतीरा, बादाम और रोगन हैं और प्रतिनिधि काली निसोथ है।

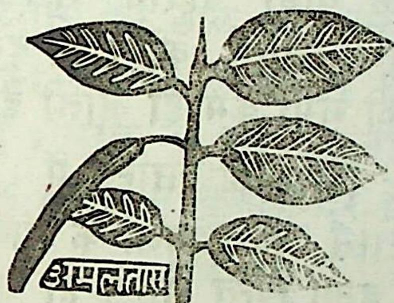
जुकाम के ज्वर और शिर दर्द में—

अमरबेल की लताओं को एक पाव लाकर महुवे के पत्तों का पत्तल बनाकर उस पत्तल पर घी लगाकर पत्तल को सेंककर अमरबेल की लताओं को भी गरम गरम सेंककर शिर पर पगड़ी की तरह बाँध कर सो जावे और पुनः अजवायन की धूनी सर्वाङ्ग में लेवे और कोई थोड़ा

या अधिक वस्त्र जैसा कि मौसम हो ओढ़ कर सो जावे तो जुकाम का ज्वर आदि दूर हो जावेगा।

अमलतास

इसे संस्कृत में आरग्वध कहते हैं। बंगला में सोंदाल, मराठी में बाहवा, गुजराती में गरमालो, फारसी में खियार शंबर डाक्टरी में कासिया फिसटूला कहते हैं।



यह ठंढा है, भारी है, मधुर और दस्तावर है। इसके पत्ते दस्तावर, कफ मेदनाशक हैं और इसका फल दस्तावर, रुचिकारी, पित्त, कुष्ट, कफ ज्वर, वात रक्त, उदावर्त और शूल को नाश करता है। इसका पेड़ पाँच पंखुड़ी का मधुर, शीतल, तिक्त, वीर्यवर्द्धक होता है और मल को संग्रह करने वाला है।

अमलतास के फल का गूदा लेना चाहिए। इसकी मात्रा चार माशे की है। जुलाब में डेढ़ तोला तक डाला जाता है।

हृदय की पीड़ा में

अमलतास की कलियों को कुछ गरम कर गूदा निकाल थोड़ा बादाम रोगन के साथ मिलाकर देने से छाती की पीड़ा दूर हो जाती है। रुधिर की गर्मी कम हो जाती है।

पित्त की शान्ति में

अमलतास को इमली के साथ मिलाकर देने से बढ़ा हुआ पित्त शान्त हो जाता है।

वात रोग की पीड़ा में

अमलतास से सन्धि वात की पीड़ा शान्त होती है। जहाँ पीड़ा हो वहाँ पीस कर चुपड़ देवें।

उलटी के लिये

अमलतास के पाँच सात बीजों को पीसकर देने से उल्टी होती है।

प्रसव के लिये

अमलतास के फली के ऊपर का छाल, केशर और मिश्री को गुलाबजल के साथ पीसकर देने से स्त्रियों को तुरन्त प्रसव होता है।

फोड़े में

अमलतास की छाल और पत्तों को तेल में पीसकर फोड़ा के ऊपर लगाने से फोड़ा अच्छा हो जाता है। चरक में इसे दद्रु नाशक कहा है अर्थात् इसके लगाने से खुजली दूर हो जाती है।

दाद पर

अमलतास की हरी पत्तियाँ मलने से दाद दूर होती है।

अमलतास का वृक्ष बड़ा होता है। पत्ता बड़े और द्रुमाशदार होते हैं और आमने-सामने उगते हैं। इसके फूल पाँच२ पंखड़ी के हरदी के समान पीले और प्रत्येक डाली पर बहुत से होते हैं। इसकी फली एक फुट अथवा दो फुट लम्बी

होतो है। इसके भीतर गूदा और इमली के से चीआँ निकलते हैं।

अरहर

इसे संकृस्त में आटकी, तुवरी और शणपुष्पिका कहते हैं। हिन्दी० अरहर रहर। म० तुरी, गु० में तुरनी, दाल; कनाडी कटला कटु तौगरी, तै० कादुलू, फा० शखुल, अंग्रेजी पीजी अनपी।



यह गुण में कषैली, रूक्ष, मधुर, शीतल, हलकी, ग्राहिणी, वातकर्ता, वर्णकारक, पित्त, कफ और रुधिर के विकारों को शान्त करती है।

फूली की दवा

अरहर की जड़ घिसकर नेत्रों में लगावे तो

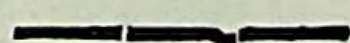
फूली दूर हो।

सोजिश जुबाँ (जीभ की जलन) पर

अरहर और मसूर की दालों को औटाकर छान के और कपूर मिलाकर कुल्ला करे तथा (१) अरहर की पत्तियों का रस निकालकर उससे कुल्ला करे। (२) अरहर की दाल भिगो-कर उसके पानी से कुल्ला करे।

हिचकी की दवा

अरहर की भूसी तमाखू के प्रकार से हुक्का में पीवे।



अलसी

इसके अलसी, नीलपुष्पी, पार्वती, उमा और क्षमा से संस्कृत नाम हैं। हि०—अलसी, तिसी, मसीना। म०—जवज, का० असगे, तै०—नल्लस गमिचेट्टु, अ०—वजरुलू कतान, फा०—तुख्मेकतान, अं०—कायक्स्लेख सीडसू कहते हैं।

यह गुण में तिक्त, स्निग्ध, पाक के समय कटु, भारी, गरम, दृष्टि को बिगाड़ने वाली, शुक्र और बादी की नाशक तथा कफ और पित्त को नाश करती है।

कफ की खाँसी और श्वास में

अलसी और असगंध बराबर पीसकर दूने शहद मिलाकर नित्य एक तोले चाटे। तथा च—

१—भुनी अलसी आध पाव, काली मिर्च तीन तोले लेकर तिगुने शहद में मिलाकर चाटे तो कफयुक्त खाँसी में अद्भुत लाभ पहुँचे। मिर्च के बदले पोदीना लिया जा सकता है। पोदीना न रहे तो निरा अलसी ही शहद में चाटे।

असगंध

इसे संस्कृत में वाराहकर्णी, बरदा, बलदा, कुष्ठगंधिनी, हिन्दी में असगंध, नागौरी असगंध, म० आसंध, का० अंगूर, आसंधिका, गु० आखोद, तै० पिल्लीआंगा, इ० विंटरचेरी, फा० बेहमन, ला० फिसेलिस सोम्नाफेर कहते हैं।



यह गुण में बलकारक, रसायन, तिक्त, कसेली, गरम और अत्यन्त शुक्रकर्त्ता है। इसके द्वारा बादी, कफ, सफेद कोढ़, सूजन, खुई रोग, आमवात, व्रण, खाँसी और श्वास के रोग नष्ट होते हैं।

यह रास्ना के समान होती है और इसकी जड़ प्रयोग में ली जाती है। इसी से अत्तार और पंसारी लोग असगंध के बदले रास्ना की लकड़ी देते हैं।

अशोक

अशोक का वृक्ष लम्बा होता है। अशोक, हेमपुष्प, वंजुल ताम्रपल्लव, कंकेलि, गंधपुष्प और नट इसके संस्कृत नाम हैं। म० अरुपाल, गु० आसोपालव।

यह गुण में शीतल, तिक्त, ग्राही, व्रणकर्ता और कसेला है।

यह वातादि दोष, अपची, तृषा, दाह, कृमि, रोग, शोथ, विष और रुधिर के विकारों को दूर करता है।

आक सफेद और लाल

श्वेत आक के ये नाम हैं—संस्कृत अलर्क गणधूप, मंदार, श्वेतपुष्प, सदापुष्व, वलार्क और प्रतापस। हिन्दी—आक, अकौवा, मदार, बंगला—श्वेत आकंद; म० रुई, गु० आकडो, तै० तेलाजल्लीड्डे, फा० खर्क, अ० उषर, ला० केलाट्रोपीस, जारगारिया



रक्तार्क के नाम अर्कर्षण, विकारण, रक्तपुष्प, शुक्लफल और स्टोफ। हि० आक, अकौआ, आकड़ा और सब नाम श्वेत आक के ही समान समझना चाहिए।

गुण—दोनों आक दस्तावर और वायु-नाशक है।

प्रयोग—इनके सेवन करने से कोढ़, खुजली, विष, व्रण, तिल्ली, गोला, बवासीर, कफ, उदर रोग और मल के कृमि नष्ट होते हैं।

सफेद आक का फूल बलकारक, हल्का, अतिदीपन और पाचक है।

प्रयोग—इससे अरुचि, मुख से लार का बहना, बवासीर, खाँसी और श्वास दूर होते हैं।

लाल आक का फूल—मधुर, कड़वा, कफ-नाशक और संग्राही है।

प्रयोग—यह कोढ़, कृमि, विष, रक्तपित्त, गोला और सूजन रोग में दिया जाता है। आक का दूध कड़वा, गरम, नमकीन, रसयुक्त और श्रेष्ठ विरेचन है।

इसके द्वारा कोढ़, रोग और उदर रोग नष्ट होता है।

आक की जड़ कफ को निकालनेवाली, पसीना लाने वाली और वमनकारक है। इसके सेवन करने से श्वास, खाँसी, अतिसार, प्रवाहिका, रक्तपित्त, संग्रहणी और कफजन्य समस्त व्याधियाँ दूर होती हैं।

बिच्छू के मारने पर

१—आक की जड़ को या फल-पत्ते किसी

को लेकर लेप करने से विष दूर होता है।

२—चक्रदत्त में लिखा है कि आक की जड़ की छाल देने से देह के भीतर का प्रवाह अधिकता के साथ निकलता है। त्वचा के रोग में तथा पेट के भीतर के अवयव मोटे हो गये हों या पेट के जोव, खाँसी, जलन्धर आदि रोगों में उत्तम असर करता है।

३—आक का दूध देने से तीव्र जुलाब लगता है और देह में लगाने से चमड़े लाल हो जाते हैं। इसके फूल पाचनशक्ति बढ़ानेवाले और ताकत देनेवाले हैं। पेटका दर्द निश्चयपूर्वक नाश हो जाता है तथा खाँसी, श्वास, सरकेफ और अरुचिमें दिया जाता है। इसको जड़को छाल आक के दूधमें भिगो-कर सुखा लेवे, फिर इस छाल को आग में डाल कर इसकी धूनी श्वासके साथ में लेने से खांसी जाती रहती है।

४—श्लीपद और अंडवृद्धि के रोग में

आक की जड़ की छाल को पीसकर लगानेसे लाभ पहुँचता है।

५—आक का दूध त्वचा को लाल करके फफोला उठानेवाला, कफ को बढ़ानेवाला, बालों का नष्टकर्ता तथा समग्र जाति के दूध सदृश रसों में सबसे अधिक तेज गिना जाता है। औषध की तरह से दाद को मिटाता, बवासीर को जड़ से नाश करता और दाँत पोले पड़ गये हों और दर्द होता हो तो इसका दूध शहद के साथ मिला कर उसमें थोड़ी सी रुई भिगोकर दाँतके नीचे रखे।

६—आक के दूध को कोढ़के रोग में तथा कलेजा और तिल्ली बढ़ गई हो तो देने से अद्‌भुत लाभ पहुँचता है। इसके देने की यह रीति है कि नाज के दानों को उसमें भिगोकर सुखा लेवे और फिर उन्हें रोगी को खाने को देवे तो संधि का दर्द दूर हो और सूजन के ऊपर लगाने में दूध साधारण इलाज के तरीके पर व्यवहार में आता है। थोड़े के आक के पत्ते लेकर उसे सेंक-कर बांधे।

७—शरीर के जिस भाग में लकवा मार गया हो उसी भाग पर पत्ते तेल में सेककर उस तेल को लगावे।

८—घाव में अंकुर न आता हो तो आक के सूखे पत्तों का चूर्ण घाव पर बुरके।

९—डाक्टर एन्सली का कहना है कि आक के पत्ते और जड़ आदि में से जो दूध के समान रस निकलता है वह सुखाने के बाद देने से बहुत जल्दी जुलाब लाता है और शरीर सुधारनेवाला समझा गया है। तामिल वैद्य इसे सफेद कोढ़ में अत्यन्त गुणकारी गिनते हैं।

१०—मि० फ्लेफेर लिखता है कि आक की छाल में शरीर सुधारने का, जागृत करने का और शरीर से बिगाड़ निकालने का गुण है।

११—डा० डीमक का कहना है कि छाल की बनिस्बत दूध या रस को सुखा देने से अधिक उत्तम असर करता है। इसमें उल्टी लाने का भी गुण है।

१२—यह कृमि हर, व्रणशोधक और वात विकार नाशक है—ऐसा सुश्रुत का मत है।

आम

इसे संस्कृत में आम्र, रसाल, सहकार, अति सौरभ, कामांग, मधुदूत, मागध और पिकवल्लभ कहते हैं। हिन्दी में आम, म० आँबा, गु० आम्बो, कनाडी में माविन, तै० मामाड़ी, अ० अंबा, फा० अंबे, इङ्गलिश में मैङ्गोट्री कहते हैं।



आम के अनीदार और आधे से एक फुट तक लम्बे पत्ते होते हैं। फूल का बौर गुच्छेदार होता है। आम का फल जगत्प्रसिद्ध एक उत्तम

मेवा है। औषध में मुख्यतः इसकी गुठली काम में आती है।

गुण—आम का पुष्प (बौर) अतिसार, कफ, पित्त और प्रमेह को दूर करता है तथा रुधिर के विकार को नष्ट करनेवाला है। यह शीतल, रुचि-कारी और ग्राही तथा बातल होता है।

आम का कच्चा फल—कषैला, खट्टा, रुचिकारी, बादी और पित्तकारक है। तरुण आम अर्थात् बड़ा और बिना पका हुआ अत्यन्त खट्टा, रूक्ष, त्रिदोष और रुधिर के विकार को करता है।

अमचूर—कच्चे आम का छिल्का छीलकर उसे चीर डाले और गुठली निकालकर फेंक देवे तथा जो कतरे हों उन्हें सुखा डाले। फिर कूटकर चूर्ण बना लेवे, इसी को अमचूर कहते हैं।

अमचूर—खट्टा, स्वादु, कषैला, दस्तावर और कफ, वात को जीतनेवाला है।

पका हुआ आम—मधुर, वृष्य, स्निग्ध, बलकारी और सुखप्रद है। हृदय को हितकारी,

वात हरणकर्ता, भारी और देह के रंग को निखारनेवाला, शीतल और पित्तहरण करनेवाला है तथा रसयुक्त कसैला आम अग्नि, कफ शुक्रवर्द्धक है। आम यदि वृक्ष पर का पका हुआ होता है तो भारी, अत्यन्त वातहारक, मधुर और खट्टा एवं कुछ-कुछ पित्त को कुपित करता है और जो आम थोड़ा पका हुआ होता है, वह पित्तनाशक होता है क्योंकि इसमें खट्टा रस थोड़ा और मिठास अधिक होता है। यदि यह वासित हो जाय तो परम रुचिकारी, बलकर्ता, वीर्यकर्ता और हल्का है। यह शीतल, शीघ्रपाची, वात, पित्त हरणकर्ता और दस्तावर है।

आम का रस—जिसे अमरस भी कहते हैं बलकारी, भारी, वात हरणकर्ता, दस्तावर, हृदय को अहित, तृप्तिकारी, अत्यन्त बृंहण और कफवर्द्धक है तथा आम का टुकड़ा—भारी, रुचिकारी, देर में पचनेवाला, मधुर, बृंहण बलकारी, शीतल, वातनाशक है।

दूध के साथ भक्षण करने से आम—वात, पित्तनाशक, रुचिकारी, बृंहण, बलवर्द्धक, शुक्र संचयकर्ता और देह के रंग को निखारनेवाला है। दूध और आम अत्यन्त स्वादु, भारी और शीतल हैं। परन्तु अधिक आम चूसने से मन्दाग्नि, विषम ज्वर, रुधिर दोष, अत्यन्त क्रोध, रोष अथवा चक्षु रोग की उत्पत्ति होती है, इसलिए अधिक आम न चूसे।

आम में जितने दोष कहे हैं वे सब कच्चे आम के दोष हैं किन्तु मीठे आम के खाने से ये सारे दोष नहीं होते। अधिक आम चूसने के पश्चात् यदि सोंठ का जल पी लेवे अथवा जीरा और काला नमक भक्षण कर लेवे तो उसका अपच अतिशय जाता रहता है।

इस प्रकार आम के गुण अनेक प्रकारसे दर्शाये गये हैं। यूनानी मत से पक्का फल ताकत लाने-वाला, चरबी बढ़ानेवाला, खुश करनेवाला, दस्त साफ लानेवाला और मूत्रवर्द्धक है परन्तु उसकी

छाल और कच्चे फल का रेशा ग्राही और खट्टा गिना जाता है।

आम का अचार—पेट को शान्तिकर्त्ता तथा भूख को बढ़ानेवाला होता है।

कंठ के रोग में

आम के पत्तों को जलाकर इसकी धूनी गले के भीतर के अनेक रोगों को नष्ट करती है।

हैजे के प्रकोप में

आम के कच्चे फल के गूदे को सेंककर खाँड़ के साथ मिलाकर रख देवे फिर महामारी या हैजा के रोग में खिलावे तथा शरीर में लेप लगावे।

नेत्र के रोग में

आम के पत्तों की नस को जलाकर नेत्र के पलकों पर होनेवाली गुठली पर लगावे तो गुठली दूर हो।

पेट के कीड़े दूर हों

आम की गुठली को पीसकर तीस ग्रेन की मात्रा में देने से पेट के कीड़े निकल जाते हैं तथा दुखते हुए बवासीर के मस्से नष्ट हो जाते हैं।

खुजली तथा त्वचा रोग में

डाक्टर इन्सली कहता है कि आम के फल का तेल, छाल की गोंद लेकर दोनों को नीबू के रस अथवा तेल के साथ मिलाकर खुजली तथा अन्य त्वचाके रोग में लगावे तो ये रोग अच्छे हों।

रक्त विकार में

पके हुए आम के रस को सुखाकर उसको पतली रोटी के समान जो बना लिया जाता है उसको अमावट या आम की रोटी कहते हैं, इसके खाने एवं निरन्तर सेवन से रक्तदोष दूर होता है।

प्रदर और धातु रोग में

आम की छाल को लाकर पानी में भिगो

देवे। प्रातः उसे मीजकर जल को छानकर पी जावें तो आमदोष दूर होवेगा।

दस्त और ऐंठन में

आम के कच्चे फल के ऊपर से निकले हुए चिकने पदार्थ और अंडा की सफेदी तथा थोड़ी सी अफीम के साथ मिलाकर देने से पेट की ऐंठन और दस्त बन्द होता है।

१९५३ के अकाल में

आम की गुठली की रोटी से बहुत प्राणियों की जान बची थी।

गञ्ज रोग पर

आम के अचार का तेल जो सालभर का पुराना हो गञ्ज पर लगावें।

दाद पर

अमचूर पानी में पीसकर उसमें थोड़ा नमक मिलाकर दाद पर मले तो दाद अच्छी हो जायगी।

फुन्सियों की चिकित्सा में

अमचूर जल में पीसकर लगावे।

आँवला

इसे संस्कृत में आमलक, आमलकी, त्रिफला और अमृता कहते हैं। हिन्दी आमेस, बं० आमलकी, म० आवले, आंवळे, क० नेल्लि, गु० आमली, ता० उसरकाय, फा०, आमक, आमलय, ला० फाईलेन्थस।



यह शाखी जाति का बड़ा वृक्ष होता है और हिन्दुस्तान में सर्वत्र मिलता है। इसके दो भेद हैं। एक बागी (बाग में होनेवाला), दूसरा जंगली। इनमें बागी उत्तम होता है। यह शरद्-ऋतु में फलता है। काशी (बनारस) में अच्छे आँवले मिलते हैं। आँवलेके पत्ते छोटे-छोटे इमली के समान होते हैं। इसकी डालियों पर छोटे-छोटे सुई के दाने से पीले-पीले फूल होते हैं और उत्तम

फल फाल्गुन के महीने तक तैयार होते हैं। यह बहुधा पथरीली जमीन में होता है और फल सुपारी के बराबर गोल आकार के होते हैं, परन्तु काशी के आँवले बहुत बड़े और सर्वत्र बहुत प्रसिद्ध हैं। इस फल के ऊपर बहुत बारीक रेखा में छः विभाग किये होते हैं और भीतर कठोर गुठली होती है। उसमें भी छः कोने से होते हैं। इसका अत्तार लोग अधिकतर मुरब्बा बनाते हैं।

इसके रस, गुण, वीर्य और विपाकादि सब हरड़ के समान जाने। विशेषता केवल इतनी है कि रक्तपित्त और प्रमेह को नाश करता है, वायु-वर्द्धक और रसायन है। इसमें खट्टा रस होने के कारण यह वात का भी हरण करता है और मधुर तथा शीतल होने के कारण पित्त को शान्त करता तथा खट्टे रस के कारण वात को हरण करने-वाला है। मधुर और शीतल गुणों के कारण पित्त को, रूखे और कषैले गुणों से कफ को नष्ट करनेवाला है और इस प्रकार आमला त्रिदोष नाशक है।

प्रयोग में आँवले के फल की छाल ली जाती है। मात्रा इसकी चार माशे की है और इसके अवगुण की नाशक शहद है। अर्थात् यदि आँवला सेवन करने से कोई विपरीत परिणाम होने लगे तो उसके ऊपर शहद खावे और इसकी प्रतिनिधि में हरड़ या आँवले का रस देवें।

आँवला सूखा, खट्टा, पाक में चरपरा, कषैला और मीठा होता है। बालों को बढ़ाता तथा टूटी हड्डी को जोड़नेवाला है।

श्वेत प्रदर में

आँवले का बीज पीसकर शहद और मिश्री में मिलाकर खावे।

शिर के बाल पकने पर

आँवला को लोहे में फुलाकर दो दिन के बाद सेवन करे।

आलू

इसे संस्कृत में आरु, आलू, वीरसेन और आलुक कहते हैं। यह छः प्रकार का होता है। कष्टालुक, शंखालुक, हस्तपालुक, पिंडालुक, सप्तालुक, और रक्तालुक।

कष्टालुक को हिन्दी में कठालू, बं० काठ आलू। यह कठोर होता है। शंखालू को हिन्दी में शंखारू, बं० शंख आलू, यह सफेदी लिये होता है। हस्तपालुक यह लम्बाईयुक्त बड़ा भारी होता है। पिंडालुक गोल होता है। सप्तालुक मोठा, रोमांचयुक्त और लम्बा होता है। रक्तालुक को रतालू अथवा रतड़ा कहते हैं। यह लाल रंग का होता है।

गुण—सब जाति के आलू शीतल, विष्टंभी, मधुर, भारी, मल-मूत्र का प्रकटकर्त्ता, रुक्ष, दुर्जर और रक्त-पित्त को नाश करनेवाले हैं। कफ और वादी कर्त्ता, बलकर्त्ता, वृष्य और किञ्चिन्मात्र अग्निवर्द्धक है।

पाकदृष्टि से विचार करने में आलू अत्यन्त पुष्टिकारक तथा खाने में स्वादिष्ट होता है। यत्न-पूर्वक रखने से यह दो-तीन वर्षों तक रखा जा सकता है। इसके हजम करने में कोई विशेष कठिनाई नहीं करनी पड़ती। यह सहज ही हजम हो जाता है। पर कहीं स्थानविशेष में विलम्ब से हजम होता है पर हजम अवश्य हो जाता है। बहुत से बेचारे गरीब, जिन्हें भर पेट अन्न खाने को नहीं मिलता वे इसी पर अपना गुजर-बसर करते हैं। क्योंकि क्षुधाग्नि तो बिना भरपूर ईंधन पाये शान्त होती नहीं पर इससे यह कदापि न समझना चाहिये कि केवल आलू खानेवाला अन्न खानेवाले से किसी प्रकार दुर्बल होता है। वह कभी रोगी व दुर्बल नहीं हो सकता। मांस-मछली के साथ भी आलू खाया जाता है। ऐसी अवस्था में पका आलू केवल आलू से कहीं अधिक पुष्टिकारक होता है। ये सब गुण खेत में भली भाँति पके हुए आलू में ही होते हैं। जो आलू

खेत में अच्छी तरह पकने नहीं पाता वह न तो पके आलू की भाँति पुष्टिकारक ही होता है और न शीघ्र पाकी ही। आलू के पाक करने में भी खूब सावधानी रखनी चाहिये। जब तक अच्छी तरह पक न जायगा तब तक वह जल्दी हजम न होगा। आलू का सार भाग अर्थात् पुष्टिकारक पदार्थ उसके छिलके के पास ही रहता है। इसलिए आलू को छीलते समय इस बात का ध्यान रक्खे कि उसके गूदे का अधिक अंश छिलके के साथ न जाने पावे। आलू को चाकू या अन्य किसी ऐसी वस्तु से न छीले जिसमें उसके छिलके के साथ गूदे के भी जाने का डर हो। उसे पानी में उबाल कर तब छीले। ऐसा करने से छीलने में भी सरलता होती है और उसके सार भाग की भी रक्षा हो जाती है। यदि आलू पुराना हो गया हो तो काम लानेवाले दिन से पहले की रात में पानी में भिगोकर रख दे। ऐसा करने से वह पुराना आलू नये आलू के समान स्वाद और गुण से युक्त हो

जाता है। तरकारी की अपेक्षा भूने हुए आलू में अधिक पुष्टता होती है। जिस आलू में अंकुर फूट आता है, उसका वह गुण नष्ट हो जाता है। आलू जितना ही बड़ा और कड़ा होगा उतना ही अधिक पुष्टकारक होगा और यही आलू सर्वोत्तम माना जाता है। यही आहार के लिये विशेष लाभदायक है। जो आलू पकाने में लसदार होता है वह भी अच्छा नहीं समझा जाता। जो आलू उबालने पर भसभसाने लगे और जिसमें दाने पड़ जायँ वही खाने में पौष्टिक होता है।

आलू अत्यन्त बलकारी, स्निग्ध, गुरु और हृदय-कम्प को शान्त करनेवाला तथा वीर्य को बढ़ानेवाला होता है।

जले पर

आलू पीसकर रख दो।

अरवी

इसे हिन्दी में अरवी, आई या घुइयाँ कहते हैं।

गुण—अरवी बलकारी, स्निग्ध, भारी,

हृदय के कफ को नाश करनेवाली, विष्टंभ कर्ता, तेल में तलकर जो बनायी गयी हो वह अति रुचिकारी है, मधुर और खुश्क होती है। इससे खांसी और हृद्रोग दूर हो जाते हैं। यह आँव और खुश्की को बढ़ाती है।

ओंगा (अपामार्ग)

इसे संस्कृत में अपामार्ग, शिखरी, अधःशल्य, मयूरक, मर्करी, दुर्ग्र, दुर्ग्रहा, किणिही और खरमंजरी कहते हैं। हिन्दी में ओंगा, चिरचिरा, लटजीरा; मा० सुफेद आंधी झाड़ा, बं० आंपा, म० अवाड़ा, का० कुत्ताणे, गु० अधेड़ी, तै० दुच्चीणिके, फा० खखासगाता, इं० चेलफ्लावर, ला० अचीरांथिस अस्पेरा कहते हैं।



यह एक क्षुप जाति की वनस्पति है और बहुधा जंगलों में पायी जाती है। इसके पत्ते चौलाई के शाक के समान होते हैं। इसके फूल और फल एक लम्बी डंडी में लगे हुए होते हैं और काँटे के समान अनीवाले होते हैं। ये कपड़े में चिपट जाते हैं।

गुण—यह दस्तावर, तीक्ष्ण, दीपक, कड़वा, चरपरा, पाचक और रोचक होता है।

प्रयोग—यह वमन, कफ, मेदका रोग, वायु, हृद्‌रोग, अफरा, बवासीर, खुजली, शूल, उदर रोग और अपची रोग में किया जाता है। इसका सर्वाङ्ग प्रयोग होता है और इसकी मात्रा चार माशे की है।

लाल ओंगा

इसे संस्कृत में रक्तापामार्ग, वसिर, वृत्तफल, धामागव, प्रत्यक्‌पर्णी केशपर्णी, और कपिपिप्पली कहते हैं। हिन्दी में लालओंगा, लाल चिरचिरा, नं० लाल आंपा, म० तांवड़ा आघाड़ा, का० कॅपिगुत्तरणे, म० रांतो अथेड़ों।

गुण—लाल ओंगा वातकारक, विष्टंभी, कफवर्धक, शीतल और रूक्ष होता है। यह पहिले ओंगा की अपेक्षा गुणों में न्यून है। ओंगा के फल (उसमें जो चावल जैसा होता है) खाने में पचते नहीं और पाक में चरपरे तथा विष्टंभी, वातकर्त्ता, रूखा और रक्त-पित्त को दूर करनेवाला है। मात्रा ४ माशे की है।

अगरु



इसे संस्कृत में अगुरु, प्रवर, राजार्ह योगज, वशिक, कृमिज, कृमिजग्ध और अनार्यक कहते हैं। हि० अगर, काला

अगर, अगरसत और सब हिन्दुस्तान की भाषाओं में इसी नाम से प्रसिद्ध है । अ० फा० काशवेवबा, ऊदगरकी कहते हैं, इं० ईगलवुड, ला० एक्कोलेरिया ऐडोलोका ।

यह परम कटु, त्वचा को हितकर, कड़वी, तीक्ष्ण और हल्की है। इसका वृक्ष होता है। कान के रोग में, नेत्र के रोग में और सरदी, बादी तथा कफ को नाश करनेवाली है । अगरु दो प्रकार की होती है । उसमें काली अगर अधिक गुण करनेवाली है और यह लोहे के समान जल में डूब जाती है। अगर का तेल कृष्णागर के समान गुण करता है। इसका दर्प-नाशक गुलाब है। इसकी मात्रा ३ माशे की है। इसकी प्रतिनिधि में चन्दन, दालचीनी, केशर, बालछड़ और रूमी मस्तगी है ।

यह खाँसी को नाश करता और सरदी का भी नाश करनेवाला है। चरक सुश्रुत संहिता में इसको वात, कफहर, वर्णप्रसादक (देह का रंग सुधारनेवाला), खुजली नाशक और कुष्टनाशक

वर्णन किया है। अगर की लकड़ी को जल में औटाकर उस पानी के पीने से ज्वर में लगनेवाली तृषा न्यून होती है और इसे मृगी, उन्मत्तता आदि रोगों में परमोपयोगी गिनते हैं।

पीली अगरु

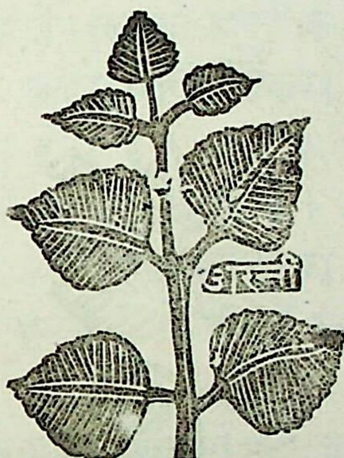
दूसरी जो पीली अगरु होती है उसका लाल रंग देह के वर्ण को स्वच्छ करता है। पीतक, लोह, वर्णप्रसाद, अनार्यक, असार, कृमिजग्ध और काष्ठक ये काष्ठागरु के नाम हैं।

काष्ठागरु चरपरी, गरम लेप में रूक्ष और कफनाशक है।

इसी प्रकार दाहागरु होती है। यह चरपरी, गरम, बालों को बढ़ानेवाली, देह के वर्ण को उजला करती, बालों के दोषों को दूर करती और देह को सुगन्धित करती है। यह गुर्जर देश में प्रसिद्ध है। इसमें एक मगल्पागरु और है, गुण गण में कुछ ही भेद है।

अरनी

इसे संस्कृत में अग्निममंथ, जय, श्रीपर्णी, गणकारिका, जया जयंती, नादेयी और वैजयन्तिका कहते हैं। हिन्दी में अरनी, अगेतु मणियारी, म० पोर एरण, टाटला, नारवेल, गु० अरणी, तै० नेलीचट्ट, क० नरवल, ऐरणा, ता० नेलाचेटु, ला० क्लीरोडेड्म।



यह वृक्ष जाति की ओषधि है। इसके पत्ते आमने-सामने होते हैं और वे अनीदार होते हैं और उनकी जड़ में छोटा-छोटा पत्ता निकलता है। इसका फूल सफेद पाँच पंखड़ी का, बाहर के आच्छादन से ढका हुआ जिसमें पाँच पुरुष केशर और एक स्त्री केशर होती है। इसके फल बहुत

छोटे-छोटे और गोल होते हैं।

अरनी उष्णवीर्य, चरपरी, कड़वी, कषैली, मधुर, अग्निवर्धक, कफनाशक और वातनाशक होती है। यह सूजन और पाण्डुरोग को दूर करती है।

अकरकरा



यह एक प्रकार का पौधा है जो लगभग दो बालिश्त से ऊँचा होता है। इसके पत्ते का आकार-प्रकार पान के पत्ते के समान होता है। इसकी जड़, पत्ता और डंठी भी औषधि के प्रयोग में आती है।

गुण में यह कटु, तीक्ष्ण, स्निग्धोष्ण, कषैला

रेचक और विषघ्न है। इसके पत्ते का रस निचोड़ कर सफेद कुष्ट पर कुछ दिनों तक लगाने से रोग दूर हो जाता है।

अर्द्धाङ्गवात की दवा

इसकी डंटी सुखाकर महुये के तेल में मिलाकर लगाने से अर्द्धाङ्गवात, लकवा एवं वायु के अनेक रोग दूर होते हैं। नसों का दर्द एवं झिनझीनी भी इससे दूर हो जाती है। इसकी जड़ को पीसकर दाँतों में मलने से दाँत का दर्द दूर होता तथा जीभ में मलने से बच्चे का हल्कापन दूर हो जाता है।

४—अकरकरा के चूर्ण को शहद में मिलाकर सुँघाया जाय तो मृगी रोग दूर हो जावेगा।

५—अकरकरा, माजू, सिंगरफ, सुहागा और कच्चे हर्र को ४.५ माशा लेकर कूटकर पानी में मिलाकर उसके चार भाग कर डाले, पुनः रात्रि में निश्चिंत होकर बारी-बारी से उन चारों हिस्सों को तम्बाकू के समान चिलम पर रखकर रातभर में पी

डाले। स्मरण रहे, नींद न आने पावे। प्रातःकाल होने पर ठंडे जल से स्नान करके घी को सूखी, गेहूँ की रोटी के साथ खावे। इस औषधि से गर्मी बहुत मालूम पड़ेगी और कै भी होगी, परन्तु व्यग्र न होना चाहिए। एक ही बार ऐसा करने से भयंकर बाद फिरंग (खुश्की) दूर हो जायेगा।

दाँत दर्द की दवा

अकरकरा को दाँतों में दाबे रहे तो सर्दी से दाँत में होनेवाला दर्द शीघ्र दूर हो जावे।

अखरोट

इसे संस्कृत में पीलू, अक्षोठ और कर्पराल कहते हैं। इसके गुण बादाम के समान जानना। यह कफ और पित्तावर्द्धक है।

यह शाखा जाति की वनस्पति है। पर्वतों में उत्पन्न होती है। हि० अखरोट, बं० अखरोट, म० अक्रोट, कोंकण में अखोड, द्रविड़ में डक्काई, अरबी में जोज, फा० किरदगां, चारमग्ज़, इंग० नट कहते हैं।

यह एक वृक्ष का फल है। इसका वृक्ष बड़ा होता है। पत्ते चौड़े और कुछ लम्बे तथा कुछ-कुछ मोटे होते हैं। फल के ऊपर तीन छिल्का होते हैं। पहिला हरा और मोटा। स्वाद में कषैला और कड़वाई लिये होता है। यह फल कच्चेपन में नरम परन्तु सूखकर कठोर हो जाता है। दूसरा छिल्का पहिले छिल्के के नीचे कठोर होता है। फिर उसके नीचे दो टुकड़े आपस में मिले और सिरा उनका निकला हुआ तथा तीसरे छिल्के के नीचे मिगी और ऊपर बहुत बारीक छिल्का होता है। मिगी बहुत

सफेद और चिकनाई लिये पिश्ते और चिलगोजे के समान होती है। इस फल के चार भाग होते हैं। दो-दो आपस में मिले हुए और इनके बीच में बहुत बारीक परदा होता है।

अखरोट कफ और पित्त को बढ़ानेवाला, धातु को पुष्ट करनेवाला और शरीर बलको शीघ्र बढ़ाकर मस्तिष्क को ताजा बनानेवाला है।

खाँसी की दवा

अखरोट की मिगी भूनकर यदि खाँसीमें सेवन की जाय तो खाँसी शीघ्र दूर होवे।

अपराजिता

संस्कृत—अस्तोफा, गिरकर्णी, विष्णुक्रान्ता और अपराजिता। हिन्दी-सफेद और नीली कोयल। बं०-श्वेत और नील अपराजिता। म०-गोकर्णी के बीज, सुपली, कर्नाटी-विष्णु काके। गु०-गरणी। तेलगू-भील गंदुरा, लै०-कैलिटीरियाटरेन्ट्या।

यह लता जाति का एक पौधा है। इसके फूल दो तरह के-सफेद और नीले होते हैं। यह कड़वी, स्मरणशक्तिको बढ़ानेवाली, शीतल, धातु पुष्टि-

कर्ता, दृष्टिको प्रसन्नकारक, त्रिदोषनाशक, कपैली, पचने में कटु, बुद्धिदाता और विषनाशक है।

यह कुष्ठ, शूल, आम और शोथ तथा व्रणरोग को दूर करती है।

बवासीर की दो औषधें

(१) विणुकान्ता दो टंक, काली मिर्च दो टंक और एक माशे भाँग को जल में घोंटकर नित्य सेवन करने से बवासीर का रोग शान्त हो जायगा।

(२) शीशे की गोली गौ के घृत में पीसकर १० दिन तक मसों पर लगाने से बवासीर के मसे कटकर गिर पड़ेंगे।

अतिबला (कंघी)

बला चार प्रकार की होती है। तहाबला, वाट्यालिका, वाट्याये। यह तीन संस्कृत नाम सफेद बलाके हैं। हिन्दी में बरि-माला, बाजनंद या खरेंटो, बं०-श्वेत बेडेलो, म०-चिकड़ा, का० वेणोंगरम, गु०-बलदाणा अथवा खपाट, तै०-युर्पिणी, ला०-अबु-टीलन इडोकम कहते हैं। महाबला, पीतपुष्पा और सहदेवी ये तीन नाम पीतबला के हैं।



चटुष्टयबलाकी छाल, पत्ता और बीज प्रयोग में लिये जाते हैं।

गुण---चारों प्रकार की बला शीतल, मधुर, बलकारक, कांतिप्रद, स्निग्ध और ग्राही होती है।

मूत्रातिसार की दवा

चारों प्रकार की बला की जड़ की छाल के बारीक चूर्ण को मिश्री मिले दूध के साथ सेवन करने से मूत्रातिसार रोग नष्ट होता है। महाबला मूत्रकृच्छ रोग को दूर करती है तथा वायु अनुलोम होवे तो अर्थात् बादी को गुदा द्वारा निकाले।

प्रमेह की दवा

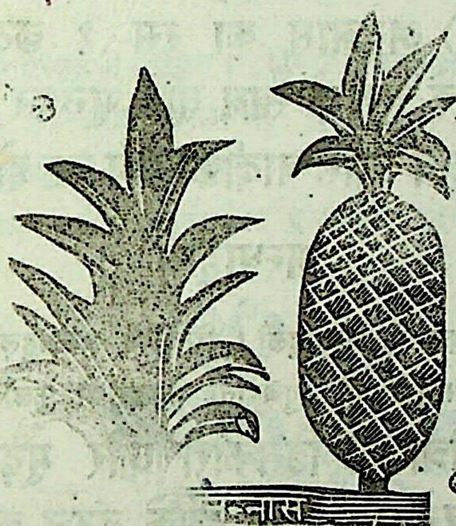
अतिबला को दूध और मिश्री के साथ सेवन

करने से प्रमेह रोग अच्छा होता है। मात्रा इसकी दो माशे की है।

१—अतिबला के पत्ते गरम कर घाव पर बाँधने से घाव भर जाते हैं।

अनन्नास

सं० हि०-अनन्नास; म०-अननस, गु०-अननस, अं०-पाइन एप्पल, लैटिन अननासा सेटिवा।



यह रुचिकर, हृदय को हितकारी, भारी, कफ, पित्तकारक, अन्नरोचक तथा श्रम और कृमि-

नाशक है। पका अनन्नास स्वादिष्ट, पित्तकारक तथा रक्तविकार और वातविकार को नष्ट करने-वाला है।

(१) धातु रोगी और वात रोगी को अनन्नास सेवन करना चाहिए। इसके सेवनसे शरीर बलवान् होगा और मस्तिष्ककी क्षीणता नष्ट होकर श्रम दूर हो जायगा।

(२) अनन्नास का रस १ छटाँक एक तोले सोंठ के चूर्ण के साथ घीमें भूनकर प्रतिदिन प्रातःऔर सायं लेनेसे बादीका रोग नष्ट हो जाताहै।

अन्धाहुली

इसे संस्कृत में अन्धाहुला। हिन्दी में अन्धाहुली। बंगला में चारहुली, म०–पाचरी और गुजराती में इसको फुली कहते हैं।

यह नेत्रों को हितकारी और मूढ़ गर्भ को आकर्षण करनेवाली है। इसके डंठल कुछ लाल, पत्ते लम्बे, गोल और रोमयुक्त होते हैं। फल का रंग नीला नीचे की ओर कुछ मुड़ा होता है।

श्वास रोग की दवा

अन्धाहुली की जड़, सोंठ और मिर्च जीरे में मिलाकर सेवन करनेसे एक मास में श्वासका रोग दूर हो जाता है। नमक बिल्कुल नहीं खाना चाहिए। केवल बिना नमक की मूँगकी दाल और रोटी खावे।

अनन्तमूल

इसे संस्कृत में सारिवा। हिन्दी में गावीसर सालसा, बंगला-अनन्तमूल, म०-श्वेत उपलसरी, गु०-कंपूरी, कर्नाटी,-सारिया। तेलगू-नीलतिग, उत्कल-गुपा पानमूल। अंग्रेजी-इण्डियन सासांपरीला। लै०-हेमीडेसमेस्ट इण्डकस कहते हैं।



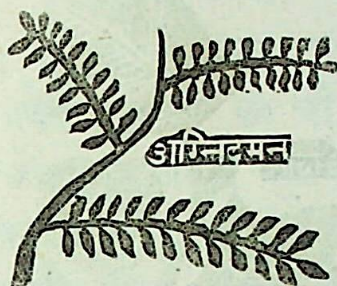
अनन्तमूल—यह शीतल, मधुर, शुक्रजनक, भारी, कड़वी और सुगन्धित होती है। इसका सेवन करनेसे शरीरकी दुर्गन्धि, मन्दाग्नि, श्वास, खाँसी, अरुचि, आम, त्रिदोष, विष, रुधिर विकार, प्रदररोग, कफ, अतिसार, तृषा, दाह, रक्त, पित्त और वात नष्ट हो जाता है।

अनन्तमूल दो प्रकारकी होती है–एक काली और दूसरी सफेद होती है। पंजाबमें कालकाके समीप इसकी अधिक उपज होती है। पत्ते अनारके समान होते हैं और उनमें सफेद छींटे पड़े होते हैं। इसकी बेलिसे और मुख्यतः जड़से कपूरकी-सी सुगन्धि आती है। इसकी जड़को सार्सापरीला भी कहते हैं। रुधिर-विकारको दूर करनेमें इससे बढ़कर दूसरी औषधि नहीं है।

अग्निदमन

इसे संस्कृत में अग्निदमन और दमनक कहते हैं। हिं०—दवना, दौना, बंगला—दोन, म०—दवना, रामदवना, गु०—दमरो,

कर्नाटा,-द्बना । अं०-वर्मुवड । ले०-आर्टिमिस्या इण्डिका ।



यह गुणमें कषैला, कड़वा, शीतल, चरपरा, द्वन्द्वजदोष, त्रिदोष, विष और विस्फोटक रोगको शान्त करनेवाला है। इसके अतिरिक्त इसमें और भी गुण हैं।

आचार्यों का मत है कि यह अग्निदीपक, रुचिकारक, हृदयको हितकारी, वात, कफ, गुल्म और प्लीहा रोगको शीघ्र नष्ट करता है, कुष्ट और कंडूके रोगी के लिए भी अत्यन्त लाभदायक है।

अंजीर

इसे संस्कृत में मंजुल, हि०-अंजीर, बं०-आंजीर; मराठी-जार, गु०-अंजरि, कर्नाटी-येडिपंड, इं०-फिग, लैटिन में फाइक्लेरिका और फारसी में इसे तीन कहते हैं।



इसका वृक्ष काबुलमें अधिक होता है; बल्कि यों कहा जाय कि अंजीर की उपज काबुलमें ही होती है।

शिर दर्द की दवा

खूब अंजीर नित्य खावे।

रक्तपित्त की दवा

अंजीर का मुरब्बा नित्य सेवन करे।

नाक से खून गिरना

अंजीर खावे।

वात-पित्त-ज्वरकी दवा

अंजी, लाल चन्दन, पद्माख, धनिया, गिलोय, नीमकी छाल इन छः चीजोंको चार-चार माशा लेकर डेढ़ पाव जलमें क्वाथ बना डाले और मिश्री डालकर प्रातःकाल पीवे। कैसा भी वात और पित्तका ज्वर होगा, शान्त हो जावेगा। यह अचूक औषध है।

अंजीर गुणमें भारी, शीतल, मीठी, वात, रक्त और पित्तको नाश करनेवाली, रुचिकारी, पाचक, विरेचक तथा कफ और आमवात को दूर करनेवाली है। रुधिर विकार को भी यह शीघ्र नष्ट करती है।

दाद की दवा

अंजीर का दूध मलें।

अंगूर

भिन्न-भिन्न भाषाओं में इसके भी भिन्न-भिन्न नाम हैं। इसे

संस्कृत में द्राक्षा, हिन्दी में अंगूर, किसमिस और दाख कहते हैं। बंगला में किसमिस मनेक्का, आँगुर। मराठी में बेदाणा, किसमिस। गु०—धराखु, किसमिस। क०—चिकुद्राक्ष। तेलगू—द्राक्षा। अंग्रेजीमें गेपराफिन्स। लैटिन—वाइटिन्स वेनिफेरा और फारसीमें अंगूर, मुनक्का तथा अरबी भाषामें किसमिस और हुबुस-अबीब कहते हैं।

पक्की दाख—दस्तावर, शीतल, नेत्रोंको लाभदायक, स्वर-शोधक, वीर्यवर्द्धक और मोह दाहको हरण करनेवाली है। परन्तु कच्ची दाख कटु, उष्ण, विशद और रक्तपित्तकारक है। किन्तु मध्यम अवस्था की दाख खट्टी, रुचिकारक और अग्निवर्द्धक होती है।

अंगूर कई प्रकार का होता है। कोई लाल रंगका और कोई काला भी होता है और कोई पहाड़ी अंगूर के नामसे भी पुकारा जाता है। यह अधिकतर काबुल में उत्पन्न होता है। पर कहीं-कहीं देशमें भी इसका होना पाया जाता है। देशी अंगूरके पत्ते हाथ के पंजे के आकार के होते हैं। फल गुच्छों में लगते हैं।

सब प्रकार के मेवों में अंगूर उत्तम है। यह धातुवर्द्धक होते हुए भी प्यास और वमन को नष्ट करता तथा सरस, मधुर और वीर्यवर्द्धक है। यह वात, पित्त और कफ के ज्वर तथा मूर्छा और रुधिर रोग को नाश करनेवाला है।

अजीर्ण की दवा

दाख, हर्र की छाल और मिश्रीको पीसकर मधुके साथ दो टंक प्रमाण की गोली बनाकर यदि जल के साथ नित्य एक गोली सेवन की जाय तो अजीर्णमात्र रोग नष्ट हो जाय।

सूजन उतर जावे

दाख अथवा महुआ, रक्तचन्दन, दूर्वा, आँवला, कमलनाल, खस, नेत्रवाला और पद्माख को ठंढे जलमें पीसकर लेप करने से पित्त व्रण की सूजन उतर जाती है।

अश्वकर्ण शाल

इसे संस्कृत में शाल, अश्वकर्ण, हिन्दीमे अखुआ या साखू, बंगला–शालगाछ, मराठी–शालेचावृक्ष, क०–सज्जर दायर, तमिल–हुंगिलियम। अंग्रेजीमें शालट्री। लैटिन–शारिया रोबष्टा।

इसके वृक्ष बड़े होते हैं। पत्तियाँ लगभग छः अंगुल चौड़ी और एक बालिश्त तक लम्बी और मुलायम होती हैं। इसके अश्वकर्ण, अज-कर्ण कई भेद हैं। आँव पड़ने पर इसका सेवन बहुत लाभदायक है। इसके बहुत बड़े-बड़े जंगल होते हैं।

यह चरपरा, गरम, कषैला, कटु और तिक्त भी होता है। रक्त, पित्त, कुष्ट और विस्फोट आदि रोगोंमें बहुत लाभप्रद होता है। इससे वात रोग भी नष्ट होता है।

शालका दूसरा जोड़ा शीशम भी है। इसकी लकड़ियाँ बड़े कामकी होती हैं। इसके पत्ते अधिक से अधिक दो इंच लम्बे-चौड़े और इतने ही लम्बे, गोल-गोल और कुछ नुकीले होते हैं।

शीशम के फूल और पत्ते दोनों ही औषधके आम आते हैं। शीशमका फूल २ तो० और पत्ते ३ तो०, काली मिर्च ११ नग, सुफेद इलायची ३ नग और मिश्री १॥ तोला, सबको एकमें बाँटकर ७ दिन पीने से स्त्रीका लाल व सुफेद प्रदर तथा धातुकी क्षीणता नष्ट हो जाती है।

अर्कपुष्प

सं०-अर्कपुष्पी, क्रूरकर्मा, पयस्या, जलकामुका। हिन्दी-अर्कपुष्पी। बं०-बड़क्षीरुई, म०-सूर्यफूलवल्ली, गु०-सूरजमुखी।



यह कृमि, कफ, प्रमेह और पित्त रोगको नष्ट

करनेवाला है। इसका सर्वाङ्ग प्रयोगमें आता है।

खाँसी और कवल को दवा

अर्कपुष्पके मध्यकी फूली और लौंगको पीसकर १ रत्ती प्रमाणकी गोली बनाकर नित्य खानेसे कवल और खाँसी दूर हो जाती है।

अमिया हल्दी

इसे संस्कृतमें कचूर, द्राविड, कल्पक, शठी कहते हैं। हिन्दी—कचूर, आंबिया हल्दी। बंगला में शठी, म०—कचोरा, गु०—कचोरा, कचुरा, कोकंशा, चकचरो, काहुली, अरसिन, षट्टकचारा। ते०—कचोरा, अ० एरकुल, काफूर। फा०—जरंबाद। अं०—लांगजो-डोरीआ। लै०—करक्यूआ जोडोरिया।

यह हल्दी जाति के एक वृक्ष की जड़ है। मालाबार और बम्बई आदि प्रान्तों में इसकी अधिक उपज होती है। इसका गुण अग्निदीपक, रोचक, चरपरा, कड़वा, सुगन्धित, गरम और हल्का है। कोढ़, बवासीर, व्रण, खाँसी आदि कई रोगों में इसका प्रयोग विशेष लाभदायक होता है। चार

माशे की मात्रामें सेवन की जाती है। इसका प्रति-निधि शतावर और दर्पनाशक सफेद चन्दन है।

श्वासकास की दवा

हल्दी, काली मिर्च, मुनक्का, पीपली, रास्ना और कचूर इन सबका चूर्ण करके उसके एक टंक चूर्णमें थोड़ा-सा गुड़ और तिल्लीका तेल मिलाकर सेवन करनेसे श्वासकास नष्ट होता है।

चोट पर

आमा हल्दी, चोट मुसब्बर और प्याज एक में पीसकर गरम करके चोट पर रखा जाय तो चोटमें अनुभूत लाभ होता है। सूजन और दर्द दूर होता है।

नेत्ररोगमें

हल्दी और प्याजको पीसकर आयी हुई आँख पर प्रयोग करे।

आलूबुखारा

इसे संस्कृतमें आलुक, हिं०—आलूबुखारा, म०—नीएरुक, गु०—आलु, अ०—इज्ञास, अंग्रेजी—चेरीप्लम ।



यह बलखबुखारेमें होनेवाले एक छोटे वृक्षका फूल है । इसका फल लाल और कुछ-कुछ कालापन लिये होता है । इसका स्वाद मिठासके साथ-साथ कुछ फीका और खट्टा होता है ।

गुण में यह ठंढा है ।

पेट दर्द, हैजे की दवा

आलूबुखारा, जीरा, पोदीना, सोंठ, निर्बीज

मुनक्का, सेंधा नमक और काला नमकको चटनीकी भाँति पीसकर रोगियोंको दिया जाता है जिससे जीका मचलाना, वमन होना, पेट का दर्द, पतले दस्तों का आना और हैज में लाभदायक है।

आलू बुखारा पित्त ज्वर और रक्त ज्वरको भी लाभकारी है। खुजली, प्रमेह, गुल्म और बवासीरका नाशक तथा खट्टा होते हुए भी यह खाँसी को दूर करनेवाला है।

अरुचि की दवा

आलूबुखारा, सेंधा नमक, सेंकी हुई भाँग, सोंठ, पीपल और द्राक्षाकी गोली बनाकर मुखमें रखनेसे अरुचि नष्ट होती है।

अतिसार और संग्रहणी में

एक रत्ती आलूबुखारा और एक रत्ती भाँग के चूर्णका मधुके साथ चाटनेसे भूख और निद्राकी वृद्धि होकर अतिसार और संग्रहणी दूर होती है।

अमरूद

सं० हि० अमरूद, गं०-प्यारा, अं०-ग्वावा ।



अमरूदकी लम्बी-लम्बी पत्तियाँ होती हैं जो आमके पत्तियोंसे छोटी और उसीसे मिलती-जुलती जान पड़ती हैं। इसके छोटे-छोटे गोल सफेद रंगके फूल होते हैं। अमरूद दो प्रकारका होता है। एक सफेद गूदावाला, दूसरा लाल गूदावाला। दोनों ही खानेमें स्वादिष्ट होते हैं। इसका पेड़ बहुत बड़ा नहीं होता। शाखाएँ जड़से फूटकर तनेके चारों तरफ फैलकर पेड़ोंको छतनार बना देती हैं।

अमरूदकी तासीर ठंढी होती है और यह

पाचक, कफकारी और कषैला होता है। अमरूद का बीज अधिक कफ़कारी होता है।

इसका फल खानेके पहले उसके ऊपरी छिलकेको छील लेना चाहिए। फिर चाकूसे काट-कर भीतर से बीज निकालकर फेंक देवे और बाकी गूदा काट-काटकर खावे। सुबह और सायंकाल में इसका खाना अहितकर होता है। दोपहर वा तीसरे पहर में भोजनोपरान्त खाना गुणकारी होता है।

(१) अमरूद खानेसे दस्त खुलासा होने लगता है। भोजनमें रुचि बढ़ती है।

(२) इसकी टहनियोंकी दतौन करनेसे दाँत-का दर्द दूर होता है और हिलते हुए दाँत बैठ जाते हैं।

(३) अमरूद के टूसे को काला नमक और सौंफ के साथ पीसकर थोड़ा पानी मिला लेवे और आमवाले रोगी को सुबह-शाम पिलावे तो आम का गिरना बन्द हो जाता है।

आम्रातक

संस्कृत—आम्रातक, हिन्दी-अम्बाड़ा, गु०-अमेड़ा, बंगला-आमड़ा, तै०-अम्बालम, अंग्रेजी-होगाप्लम वाहल्दमेंगो।



आम्रातक का वृक्ष प्रायः हिन्दुस्तान के सभी भागों में पाया जाता है। परन्तु कहीं-कहीं पर इसकी अधिक उपज होती है। जैसे कर्नाटक और कोंकण। इसका वृक्ष अधिक से अधिक पचीस तीस फीट तक ऊँचा होता है। तना भी अधिक मोटा होता है। परन्तु टिकाऊ न होने के कारण इसे इमारत के काम में नहीं लगाया जाता। इसके पत्ते रायफलके ऐसे होते हैं और आम की तरह

इसमें भी बौर लगता है। इसके फल छोटे और खटमिट्ठे होते हैं।

यह गुण में तीखा, भारी, गरम, रुचिवर्द्धक, कंठको हितकारी, दस्तावर, आमवातनाशक और पित्त तथा कफ़कारक होता है। इसके पके फलकी तासीर ठण्डी, तृप्तिकारक, मधुर और बलकारक होती है। इसके सेवन से धातु की वृद्धि, वातका नाश और मल स्तंभन भी होता है। नये-नये निकले पत्तोंके सेवनसे अग्नि बढ़ती है। ये रुचि-कर और ग्राहक होते हैं।

अम्लपित्त रोग में

आम्रातक का कच्चा फल तोड़ लावे और उसे कुचकुचाकर उसका रस चार रत्ती काली मिरच और पाँच तोला खाँड़, इन तीनों चीजोंको एकमें मिलाकर एक सप्ताह लगातार दोनों समय पीता जावे तो अम्लपित्त की बीमारी को लाभ पहुँचाता है।

कर्णशूल की दवा

आम्रातक के पत्तोंका रस निकाल लेवे। फिर उस रस का दो बूँद कान में डाले और बाकी को कानके बाहर चारों तरफ चुपड़ दे तो कर्णशूल जाता रहे।

आम्रातिसार की दवा

अंबाड़ेकी छालका काढ़ा बना डाले। फिर उस काढ़ेमें अंबाड़ेके पत्तोंका चूर्ण मिलाकर पीवे तो आम्रातिसार नष्ट होवे।

आम्रातक के वृक्षसे काफी गोंद निकलता है। उस गोंद को वृक्षसे छुड़ा लावे और पीसकर यदि किसी दवा में अधिक भरभराहट हो तो थोड़ा सा मिला देवे तो दवा की भरभराहट मिट जाती है।

आम्रातक के मुलायम-मुलायम फल बाजारसे खरीद लावे और उसमें अन्दाजसे नमक, धनियाँ, मरच आदि चटनीके मसालोंको मिलाकर चटनी बना लेवे। यह चटनी अत्यन्त रुचिकर होती है।

इलायची बड़ी

यह क्षुप जाति की वनस्पति है। इसका दो जाति होती है—छोटी और बड़ी। इसे संस्कृत में स्थूलएका, बहुला, पृथ्वीका, त्रिपुरा, भद्रेला, वृहदेला, चन्द्रवाला और निष्कुट्रि कहते हैं। हिन्द में बड़ो इलायची, लायचा, बं०-बडएलाइची, म०-वेलदोडा, थोखेला, तै०-पेद्दएलाकुलु, त०-एलम, का०-यरडूलक्की, गु०-एलची, अ०-काकेलकीवर, फा०-हैलकलां, ला०-अमोमम्।

बड़ी इलायची रस और पाक में कटु (चरपरा), अग्निकारक, हलकी, रूक्ष और गरम होती है। यह कफ, रक्तपित्त, खुजली, श्वास, प्यास, उबकाई आना, विषरोग, खाँसी, वमन, बस्तिरोग, मुखरोग और शिररोगको नष्ट करनेवाली है। मात्रा १॥ रत्तीकी है। प्रतिनिधि (इसके अभावमें) छोटी इलायची और दर्पनाशक गुलाब के फूल हैं अर्थात् इसका अवगुण गुलाब के फूलोंसे जाता है।

गुजराती (छोटी इलायची)

इसके सं० नाम सूक्ष्मैला, उपकुंचिका, तुत्था, कोरंगी, द्राविणी और त्रुटि हैं। हिन्दोमें गुजराती इलायची, बं०-छोट

इलाइच, म०-लघुवेल, एलदाडा, गु०-एलची कागदी, ते०-एलाकु
अ०-काकलेसगीरखीर, बवावहीलखुर्द, ला०-इलेटेरिया।

यह मलावार में बहुत होती है। गुणमें यह चरपरी, शीतल, हल्की और वायुनाशक है। यह कफ, खाँसी, बवासीर, श्वास और मूत्रकृच्छ्र आदि रोगोंको नाश करती है। इसके अभावमें बड़ी इलायची ली जाती है और इसके अतिशयका अवगुण गुलाबके फूलसे दूर होता है।

पाचक, जिगरकी बीमारी, जलंधर आदिमें

इलायची बड़ीका छिल्का और उसके बराबर भुनी सोंठ और उसके बराबर (एक के) भुना सौंफ तीनोंको बारीक पीसकर चूर्ण बना डाले। एक-एक फंकी नित्य खावे।

नित्य जी मचलाने और उबाकी आनेके रोगमें

इलायची ६॥ तोला पीसकर पावभर बूरेकी चाशनी बना डाले। फिर उसमें गुलाबजल मिलाकर नित्य चटनी बनाकर चाटे।

हैजेके रोगमें

छोटी इलायचीका छिल्का एक तोले या दो तोले, यदि गुलाबजल होवे तो उत्तम है, नहीं तो आध सेर पानीमें औटाकर जल आधा रहे तब पीवे तो हैजा दूर हो।

निनावाँ, जीभकी जलनमें

बड़ी इलायचीके दाने और छालियाँ दोनों जलाकर महीन पीसकर मुँहमें बुर्के।

पित्त ज्वरादि में (एलादिगुटिका)

इलायची, पत्रज, बंशलोचन, तज, दाख, पीपली इन सबको एक-एक पैसेभर लेकर, टका भर मिश्री, टकाभर मुलहठी, टकाभर खारिक सबको चूर्ण बना डाले। फिर उसमें १ टकाभर मधु मिलाकर गोलियाँ बना लेवे। यदि इसमें से एक गोली नित्य खिलावे तो रक्तपित्त, श्वास, कास, पित्त ज्वर, हिचकी, मूर्च्छा, मद, भ्रम, प्यास,

पार्श्वशूल, अरुचि, शोथ, स्वरभंग और क्षय ये सब रोग दूर होवेंगे। इसे एलादिगुटिका कहते हैं। यह सब यत्न वैद्यरहस्य में लिखा है।

मूत्रकृच्छ्र की औषध

इलायची, पाषाणभेद, शिलाजित, पिप्पली, खीरा, ककड़ीके बीज, केशर, सेंधानोन, इन सबका दो टंक चूर्ण चावलके जलके साथ सेवन करावे तो मूत्रकृच्छ्र दूर हो।

तथा च

इलायचीका महीन चूर्ण जलके साथ पिलावे तो कफजन्य मूत्रकृच्छ्र दूर होवे।

इन्द्रजौ

इसे संस्कृत में कुटजबीज, यव, इन्द्रयव, कलिंग, भद्रयव और किसी-किसी कोश में इन्द्रवाचक शब्द इसके पर्यायवाचक शब्द हैं। हिन्दी में इन्द्रजौ, का०–कोडसिगेयबीज, गु०–इंदरजव, फा०–लिसातुक, असोफिर, कुंजविजवा, ला०–राइटयांडिसेंटेरिक कहते हैं।

गुण—यह कुड़ावृक्ष के बीज हैं। त्रिदोष-नाशक, संग्राही, कटुतिक्त, शीतल, अग्निदीपक और दाहनाशक है।

इसके प्रयोग (सेवन) से रक्तपित्त, बवाहिका ज्वर, अतिसार, कृमि, विसर्प, कुष्ट, खूनी बवासीर गुदाकी कीलें, बादी, रुधिरके दोष, कफ और शूल रोग नाश होते हैं। मात्रा इसकी ५ रत्ती से ३० रत्ती पर्यन्त है। इसके अभावमें नारियलकी गिरी ली जाती है और इसका दर्पनाशक चीयाँके बीज हैं।

इन्द्रयव के सम्बन्धमें आयुर्वेद कहता है कि इसकी छाल और बीज बहुत प्राचीनकाल से जाने गये हैं। पेटकी पीड़ा और दस्तोंमें छाल का मुख्य इलाज गिना गया है। इसके बीज ग्राही, ज्वर-नाशक और पेट के कीड़े निकालने में मुख्य औषध हैं।

अरबी और फारसी ग्रन्थों में इन्द्रजौ के बीज को ग्राही और पेट की पीड़ानाशक माना है और छाती के पुराने दर्दमें, उसी प्रकार मरोड़ा और

पेशाब अधिक आता हो तो उसमें देने की प्रशंसा करते हैं और यह पेशाब की थैली में से पथरी को पिघलाकर निकालनेवाला है। यह पाचनशक्ति बढ़ानेवाला और कामोत्तेजक भी है। इसके सम्बन्ध में—

डा० डीमकका कहना है कि इन्द्रजौ और शहद केशरके साथ मिलाकर स्त्रियों की जननेन्द्रिय में रक्खे तो गर्भधारण करने की शक्ति बढ़े तथा प्रसवके समय भी इसके बरतने की प्रशंसा करते हैं।

मरोड़े और आँतों के दर्द में

इन्द्रयव के बीजों को सेंककर गरम जल में भिगो देवे। फिर इस पानी को पीनेसे अँतड़ियोंका दर्द शान्त हो जाता है।

रक्तस्राव और अँतरिया ज्वर की दवा

बहुत दिन से अंतर देकर आनेवाले ज्वर में इन्द्रयव की छाल का काढ़ा देवे तथा रक्तस्राव में भी इसी को देवे।

डा० कन्नाश्री लिखता है कि १५ महीने की अवस्था के बच्चे को मरोंडे के वास्ते जब अन्य यत्न न चल सके तो इस कुड़ा के वृक्ष की छाल ५ रुपयाभर को २॥ सेर पानी में औटावे, जब १। सेर जल बाकी रहे तब उतार के इसमें से १। रुपये भर की मात्रा से दिन में ४ वक्त प्रत्येक समय उसमें एक बून्द अफीम के अर्क को डालकर देनेसे आराम होता है।

अर्श, खूनी बवासीर की दवा

इन्द्रयव के बीजों को गरम जलमें भिगोकर उसपानी के देने से दर्द करनेवाला अर्श, जिसमें रुधिर गिरता हो, दूर होता है।

इन्द्रयव का बीज और छाल बवासीरनाशक, कंडुनाशक, स्तन्यशोधक और आमातिसार-नाशक वर्णन किया है। सुश्रुतने इन्द्रयव की छाल और बीजको मूलव्याधिहर, कंडुनाशक, कृमिनाशक, वातविकारनाशक, स्तन्य-शोधक और अर्शनिपूदन कहा है।

अतिसार के लक्षण

इसक पहले अतिसारके क्या लक्षण हैं, देखिए। अतिसार छः प्रकारका होता है। मैदा (गेहूँका आटा कपड़ेसे छाना हुआ) आदिके भारी पक्वान्न, अति चिकने पदार्थ, रूखे पदार्थ, अति उष्ण पदार्थ तथा ऐसे-ऐसे पदार्थ भक्षण से, भोजन बिना पचे हुए ही पुनः भोजन करने और मल के वेग को रोकनेसे अतिसार उत्पन्न होता है।

१—वात, २—पित्त, ३—कफ, ४—सन्निपातजन्य, ५—शोक, ६—आमजन्य।

अतिसार होनेके पहिले हृदय, नाभि, गुदा, उदर और पेड़ू में पीड़ा हो, अंगमें फूलन हो, गुदा की अपान वायु रुक जावे, दस्तकी हाजत न हो, अफरा हो जावे और अन्न पाचन न होवे तो समझना चाहिए कि इस मनुष्य को अतिसार रोग उत्पन्न होवेगा।

अतिसार की दवा

१—इन्द्रयव, नागरमोथा, देवदालाकी गिरी, आम की गुठली और धावड़े के पुष्पके २ टंक चूर्ण को भैंस के मट्ठा के साथ सात दिन तक पिलाओ तो वातातिसार दूर हो।

२—बड़ी हर्र, सोंठ और नागरमोथा का दो टंक चूर्ण प्रतिदिन ७ दिन तक पिलाओ तो त्रिदोषज अतिसार (सन्निपातातिसार) दूर हो।

इमली



इसके अम्लिका, चुक्रिका, अम्ली, चुक्रा, दंतशठा, अम्ला, चिचिका, चिंचा, तिंतिडीका और तिंतिडी ये संस्कृत नाम हैं।

हिन्दी इमली, अंबली, गं० आमरूल, तेकक, तेंतुल, का० हुणिसे, म० चिंच, गु० आंवली, तै० चीताचेटू, उडि० कओ ता० पुलि, फा० तमर, इं० टेमेरिण्ड।

इमली के कच्चे फलों को कतोर कहते हैं। पकने पर खट्टमिट्ठी हो जाती है और रंगमें पीली लाल होती है और यह सर्वत्र मिलती है। यह गुणमें खट्टी, गुरु, वातनाशक, पित्तकर्ता, कफ-वर्द्धक और रक्तदोष निवारक है। पक्की इमली अग्निदीप्तिकर्ता, रूक्ष, दस्तावर, गरम और वात-श्लेष्मानाशक है। इमली अत्यन्त सेवनसे फेफड़े को बिगाड़ती है। इसके अतिमें शरबत बनफशा, शरबत खशखाश हैं। इसके अभावमें आलूबुखारा लिया जाता है।

इमलीको हिन्दुस्तानी वैद्य शीतल, पाचक, दस्त खुलासा लानेवाली और दस्तको कब्जियत तथा ज्वरमें अत्यन्त उपयोगी बतलाते हैं।

इमलीकी फली की ऊपरकी छालकी राख खारके सदृश दवा में डालते हैं।

सूजन की दवा

इमली के पत्ते सूजन पर बाँधने से सूजन उतर जाती है।

इमली के दो प्रकार हैं—लाल और भूरी। लाल इमली उत्तम जातिकी होती है। इमलीके गूदे को मुसलमानी वैद्य ग्राही, दस्त खुलासा लानेवाली, पित्तकी उल्टी बन्द करनेवाली और जुलाब द्वारा पित्तको निकालनेवाली मानते हैं। जुलाबके लिए देनी हो तो उसके साथ जैसे बने अन्य प्रवाही बहुत थोड़े देने चाहिये। गले के भीतर की सूजन को दूर करने के लिए इमली के पानी के कुल्ले करने से उत्तम आराम होता है। बीजमें भी ग्राही गुण है।

फोड़े पर

इमली को उबालकर पुल्टिस बनाकर फोड़े पर बाँधे तो फोड़ा अच्छा हो।

पित्त ज्वर में

इमलीके पत्तोंको जल में पीस जलको निचोड़ ले और वही जल पित्त ज्वरवाले को देवे तथा पेशाब की गरमी के वास्ते भी देते हैं।

आँख की पलकों की सूजन में

इमली के फूलों की पुल्टिस बनाकर आँख पर बाँधे।

दुखते हुए बवासीर में

इमली के फल का रस लगावे।

इमली के वृक्षकी छाल ग्राही और पाचक है। इमलीके वृक्षकी वायु हानिकारक है। इमलीके वृक्ष के नीचे तम्बू बहुत दिन रखनेसे उसका कपड़ा सड़ जाता है। मद्रासके इलाकेमें मनुष्य इमलीका 'चार पानी' आदि पदार्थ बनाकर और कई प्रकार की कल्पना करके मिले हुए खुराकमें बहुत बर्तते हैं तथा इमलीके बीजको भी आगमें भूनकर या घृतादिमें सेंककर खाते हैं।

इमली खट्टी, पित्तशामक और दस्तावर है।—चरक

जुलाब और पाचनशक्ति बढ़े

इकलीका गूदा १। रुपयेभर अथवा इससे भी अधिक खानेसे थोड़ा जुलाब होता है और पाचनशक्ति बढ़ती है तथा प्यास कम लगती है।

धतूरे वगैरहके जहर उतारनेको खजूर, दाख, इमली का गूदा, अनारदाना, फालसे और आमले सब समान भाग ले तथा बारीक पीस और इसमें पञ्चगुना पानी मिलाय औटाकर काढ़ा करके देना लिखा है।—चक्रदत्त

नासूर की दवा

इमली के गोंद का चूर्ण नासूर के घाव पर बुरके। इससे घाव जल्दी भर आता है तथा इमली के पत्तों को घाव पर बाँधे।

बच्चोंको लाल-पीली खाज या दादकी दवा

इमलीके बीज नीबूके रस में घिसकर लगावे।

उबकी और मिचली में

इमली मुखमें रक्खे तो मिचली और वमन दूर होवे।

तथाच—

इमलीका शरबत वायु के वमनको गुण करता और उदर को बल देता है और गरमी के ज्वर को गुण करता है। इमली की चीयाँ निकालकर उसमें आधा बूरा मिलाकर पानीमें भिगोवे। फिर छानके उसका पानी लेके दूने बूरेकी चाशनी करे।

मुँह आनेकी दवा

इमली पानीमें भिगोकर उस पानीके कुल्ले करे।

पित्तज्वर की दवा

दो तोले इमली रातको जलमें भिगो देवे। पुनः प्रातःकाल उसका निथरा जल लेकर उसमें

बूरा मिलाकर पहले एक तोला ईसबगोल फाँककर ऊपरसे यह जल पीवे ।

इन्द्रायण

ऐन्द्री, इन्द्रवारुणी, चित्रा, गवाक्षी और गवादिनी इसके संस्कृत नाम हैं । हिं० इन्द्रायत, फरफेन्द, इन्द्रारुण, बं० राखालशशा म० लघुकावडल, गु० इन्द्रवरणु, तै० एतिपुच्छा, अ० हिंजल, फा० खुरपुजेतलख, ला० कोलासिथिस ।



यह बेल जातिकी वनस्पति है जो अक्सर रेतीली जमीनमें होती है। इसके पत्ते लम्बे बीच में कटे हुए, फूल पीले रंगका पाँच पखड़ीका होता है। फल संतरेके समान पीले रंगका सुहावना

होता है। इसके भीतर बीज बहुत होते हैं। इसे व्रजभाषा में फरफेन्दू कहते हैं। इसके भीतर से इलेटीरियम नामक सत्व निकलता है। इसे इन्द्रवारुणी भी कहते हैं। गुण में दोनों समान हैं।

गुण—इन्द्रायण कड़वी, पाकमें कटु, दस्तावर, हल्की और गरम है।

यह कमला, पित्त, कफ, प्लीहा, उदररोग, श्वास, खाँसी, कोढ़, गोला, गाँठ, घाव, प्रमेह, मूढ़, आम, गंडरोग और विषरोग आदि को दूर करता है। यह आम और कफ के निकालने में अद्वितीय है।

प्रयोगमें इसके फलका गूदा लिया जाता है। मात्रा ६ रत्ती से लेकर दो माशे तक है। यह खून और फेफड़े को नुकसान करता है। इसके सेवनसे नुकसान पहुँचनेमें कतीरा, बिहीदाना, मस्तगी और निशास्ताका सेवन करे। इसके अभावमें दसबंद, रसौत और निशोथ है।

सुश्रुत संहितामें इसको दस्तावर, दुष्ट दोषहर,

विषनाशक और व्रणदोषक मानते हैं। अन्य आयुर्वेदके ग्रन्थ इन्द्रायणको कड़वा, तीखा और तीव्र जुलाब लानेवाला वर्णन करते हैं तथा पित्त-विकार, दस्तकी कब्जियत, ज्वर और पेट के जीव निकालने को यह दी जाती है। इसकी जड़ से जुलाब लगता है तथा कामला, कलेजे में पानी भरना, जलंधर, मूत्रस्थानकी व्याधि और संधि वात पर उत्तम असर करता है।

जलंधरकी दवा

इन्द्रायन की जड़ औटाके पीनेसे दोष को दस्तोंके द्वारा पचाकर दूर करता है।

कान के बहरेपन की दवा इन्द्रायण तेल

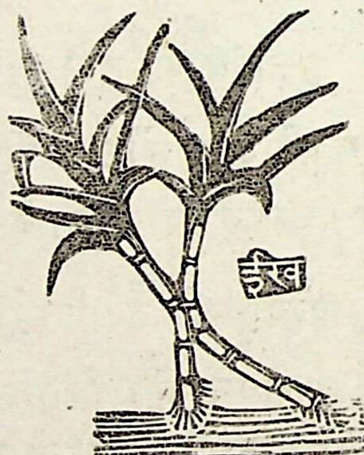
कान के भारीपन और भिनभिनाहटको दूर करना चाहो तो इन्द्रायनका ताजा फल मीठे तेल (कड़ुवा तेल सरसों) में औटाकर छानकर रखे। दो तीन बूँद कान में टपकावे।

तथाच—

पके इन्द्रायन के फल का छिल्का मीठे तेल में मिलाकर कानमें टपकाना बहरेपनको दूर करता है।

ईख

इसके इक्षु, दीर्घच्छद, भूमिरस, गुड़मूल, असिपत्र और मधुतृण ये संस्कृत नाम हैं। हिन्दी ईख, म० ऊँस, गु० शेरडी, तै० चिरकु, का० कब्बुएदु, अ० कसुबुस, शक्कर, फा० नेशकर, इं० शुगरकेन।



गुण—ईख रक्त-पित्तनाशक, बलकारक, वृष्य, कफजनक, स्वादुपाकी, स्निग्ध, भारी, मूत्र-

कारक और शीतल है।

इसकी कई जातियाँ है। पौंड्रक, भीरुक, वंशक, शतपोरक, कोंतार, तापसेक्षु, कांडेक्षु, सूची-पत्र, नैपाल, दीर्घपत्र, नीलपोर और काशकर। इसमें पौंड्रक भीरुक पौंडा, वात पित्तनाशक रस और पाकमें मधुर है। शीतल बृंहण और बलकर्ता है। इसको बं० में श्याम सांडा और भीरुक पौंडे-को साक्षि इक्ष और म० में पांढराउस कहते हैं।

कोशकर—संज्ञक पौंडा भारी, शीतल, रक्त-पित्त और क्षयको नष्ट करता है।

कांतारेक्षु (काले रंग-का पौंडा) भारी, वृष्य, कफकारी, बृंहण और दस्तावर है।

दीर्घपोर और वंशक-यह ईख कठिन और वंशक ईख क्षारयुक्त होती है। वंशक ईखको बम्बई ईख कहते हैं। शतपोरक ईक्षु अर्थात् जिसमें बहुत गाँठ होवे वह किंचित् कोशकर ईखके समान गुण करती है। अधिकता यह है कि किंचित् उष्ण, क्षारयुक्त और वातनाशक है।

तापसेक्षू—इसको बं० में चीनेर बम्बई अर्थात् चोनियाँ बम्बई कहते हैं। यह मृदु (नरम), मधुर, कफ कुपितकर्त्ता, तृप्तिकारक, रुचिप्रद, वृष्य और बलकारक है।

कांडेक्षु—यह तापसेक्षु के समान गुण करनेवाला है। विशेष करके वात कुपित करता है।

सूचीपत्र, नोलपोर, नैपाल, दीर्घपत्र—इसमें सूचीपत्र—(जिसके बहुत बारीक पत्ते होते हैं)।

नीलपोर—(जिसके गांठ नीले रंगकी होती है)।

नैपाल—(नेपाल देशमें होनेवाला) और दीर्घपत्र—(जिसके बहुत लम्बे पत्ते होते हैं) ये चार प्रकारके पौंडा 'वातकर्त्ता, कफ-पित्तनाशक, कषैले और दाहकर्त्ता हैं।

मनोगुप्ता—यह ईख वातनाशक, तृषारोग नाशक, शीतल, अत्यंत मधुर और रक्त-पित्त निवारक है।

अवस्थाभेद से ईखके गुण यह हैं कि बाल

(छोटा) ईख कफ प्रगटकर्ता, मेदा बढ़ानेवाली तथा प्रमेह रोगकारक है। युवा (जवान) ईख वायुनाशक, स्वाद कुछ-कुछ तीक्ष्ण और पित्त-नाशक है। वृद्ध (पुराना) ईख रक्त-पित्तनाशक, घाव निवारक, बलकर्ता और वीर्योत्पादन करने-वाली है।

अङ्गभेदसे ईख जड़की तरफसे अर्थात् नीचे का भाग अत्यन्त मधुर रसयुक्त, मध्यभाग मीठा और ईख की ऊपरी ग्रन्थि (पंगोली) में नमकीन रस रहता है अर्थात् नुनखरा रस रहता है।

दाँतोंसे चबाकर चूसी हुई ईखका रस रक्त-पित्तनाशक, खाँड़के समान वीर्यवाला, अविदाही अर्थात् दाह नहीं करे और कफ करनेवाला होता है।

जिस ईख की जड़को जन्तुओंने खाया हो तथा सकल गांठ कोल्हू में पेरी गयी हो अर्थात् दबायो गयी हो तथा मेल आदिके मिलनेसे और कुछ अधिक काल पर्यन्त रखे रहनेसे वह कोल्हूका पिला हुआ रस बिगड़ जाता है ऐसा उक्त रूप

दूषित रस विदाहकर्ता, विष्टम्भी और भारी है।

अग्नि पर पका हुआ रस भारी, स्निग्ध, तीक्ष्ण, वात-कफनाशक, गोलानाशक और किंचिन्मात्र पित्त करनेवाला है।

इक्षु विकार अर्थात् गुड़ आदिक पदार्थ भारी, मधुर, बलकारक, स्निग्ध, बातनाशक, दस्तावर, वृष्य, मोहनाशक, शीतल, बृंहण और विषघ्न हैं। इनका सेवन तृषा, दाह, मूर्च्छा और रक्त-पित्त रोगको नाश करता है।

राब

फाणित—(राब) कुछ-कुछ गाढ़ा और अधिक भाग पतला ऐसे पके हुए रसको फाणित या राब कहते हैं।

गुण—फाणित-रस भारी, अभिष्यंदी, बृंहण, कफकर्ता तथा शुक्रोत्पादक है। यह वात, पित्त, आम, मूत्रके विकार और बस्तिदोषोंका निवारण करता है।

गुण

गुड़—जिस ईखके रसको पकाकर समान दृढ़ किया गया हो उसको गुड़ कहते हैं।

परन्तु बंगालमें मिश्रीको गुड़ कहते हैं। म० गुल, गु० गोल, का० देल्ल, तै० वेदत्राम, अ० कंदेअसवद, फा० कंदे-सिआह, इंगलिसमें ट्रोक्ल मोलासोस कहते हैं।

गुण—यह वृष्य, भारी, स्निग्ध, वातनाशक, मूत्रशोधक, मेदावर्द्धक, कफकर्त्ता और बलकर्त्ता है। यह विशेष करके पित्तनाशक नहीं है।

पुराना गुड़—हलका पथ्य, अनभिष्यंदी, अग्निकारक, पुष्टिकर्त्ता, पित्तनाशक, मधुर, वृष्य, वातनाशक और रुधिरको स्वच्छ करनेवाला है।

नवीन गुड़—अग्निकारक है। इसका सेवन करना कफ, श्वास, खाँसी और कृमिरोग कारक है। अदरकके रसमें गुड़ खानेसे कफ नष्ट होता है। हरड़के साथ गुड़ खानेसे पित्तनाशक है और सोंठ के साथ गुड़ खानेसे सम्पूर्ण वातविकारों को नष्ट करता है।

खाँड़

खाँड़ मधुर, वृष्य, नेत्रोंको हितकारी, बृंहण, शीतल, स्निग्ध, बलकारक और वमन निवारक है।

बं० खांड़को खांड़ गुड़, म० साखर, तै० पांचादार, का० मालखंड, फा० शक्कर, ला० साक्कीरम, इं० शुगर।

ककड़ी

इसे संस्कृतमें एर्वारु, कर्कटी, हिन्दी ककड़ी, काकरी, बं० कांकुड, त० दासूकाया, का० कोबसौत, इं० ककंबर।

यह गुणमें शीतल, रूक्ष, ग्राही, मधुर, भारी, रुचिकर्त्ता, पित्तको शान्त करनेवाली और आम कारक है। यह पक्की और कच्ची दो प्रकारकी होती है। उसमें पकी हुई ककड़ी प्यास, अग्नि और पित्तको करनेवाली है। गर्मीकी मस्तककी पीड़ामें ककड़ी को सूँघे।

कमल

पद्‌म, नलिन, अरविंद, अहोत्पल, सहस्रपत्र, कमल, शतपत्र, कुशेशय, पंकरुह, तामरस, सारस; सरसरिद्ध, बिसप्रसून, राजीव, पुष्कर और अंभोरुह ये संस्कृत नाम हैं। हि० कमल, बं० पद्‌म, का० विलिथताभेर, तै० कालावा, इं० लोटस।



यह गुण में शीतल, व्रणकर्ता, मधुर, कफ-पित्तनाशक और विषनाशक है। प्यास, दाह, रुधिर विकार, विस्फोट और विसर्प रोग को नष्ट करनेवाला है।

कमल सफेद, लाल, पीला और नीला कई रंगका होता है। सफेद कमलको पुंडरीक और लाल कमलको कोकनद और नीलेको इन्दीवर कहते हैं। श्वेत कमल शीतल, मधुर, कफ शांति-कर और पित्तनाशक है और लाल कमल आदि गुणों में इससे न्यून हैं।

इसे सब अंगों सहित पद्मिनी के नाम से पुकारते हैं और जिसमें इसका बीज उत्पन्न होता है उसको कर्णिका कहते हैं। इसके फूलों के भीतर बीचमें एक बहुत बारीक रंग होता है जिस पर हाथ रखनेसे अत्यन्त मुलायम लेप सा मालूम होता है जिसको मकरन्द और केसरको कमलकेसर और उसकी नाल यानी डण्ठलको मृणाल कहा जाता है। कमलकी जड़को भसोड़ वा कन्द और बीज को कमलगट्टा कहते हैं।

कमलका सभी भाग बड़े कामका होता है। यहाँतक कि इसकी जड़ भी गरीबोंको रोटी बना-कर खानेके काममें आती है। जब गरीबोंके खाने भरको काफी अन्न नहीं प्राप्त होता तो इसकी जड़ को तालाबोंसे खोदकर निकाल लाते हैं और पीस कर रोटी बनाते हैं। कमलगट्टा का तो कुछ कहना ही नहीं। कच्चा रहने पर इसे लोग छील-कर इसके भीतरकी गिरीको खाते हैं और पकी यानी सूखी हुई गिरीको पीसकर हलुआ बनाया

जाता है जो कि अति स्वादिष्ट और पौष्टिक होता है।

प्रदर की दवा

नीले कमलकी केशर, जीरा, मुलहठी और सोंचर नोन, इन तीनोंका चूर्ण बनाकर शहद और दहीके साथ सेवन करनेसे प्रदर रोग का नाश होता है।

दाह नाश की दवा

भसींडा शालूक, कमलनील, कमल केसर और चन्दन इन सब चीजों को चन्दनमें पीसकर जिस स्थानमें दाह होता हो पतला लेप करे तो मस्तकादि अंगों का दाह शान्त हो।

तथान्य—

केलेके चौड़े-चौड़े पत्तोंको शयन करनेवाले बिस्तरे पर बिछा देवे और उसपर कमल का फूल बिछाकर उसके ऊपर रोगीको सुला देवे। फिर

चंदनके जलसे तर कर ताड़के पंखेसे मन्द-मन्द हवा करे तो दाहज्वर शान्त हो जाता है।

वमन की दवा

भूने हुए कमलगट्टेकी मींगी निकालकर उस मींगीके भीतर का हरा टुकड़ा निकाल लेवे और सफेद दानेको पीसकर शहद के साथ चाटे तो वमन होना बन्द हो जाता है।

कुच कठोर करने का लेप

कमलके बीजको पीसकर उसमें खाँड़ मिलाकर लेप करने से स्त्रियों का कुच कठोर होता है। यह एक महीने तक करे।

खूनी बवासीर में

कमल का केशर और उसकी ५ मिंगी लेकर उसमें मिश्री और मक्खन मिलाकर सेवन करे तो खूनी बवासीर का नाश होता है।

काँच का निकलना बन्द हो

यदि बालकों या बूढ़ोंकी काँच निकल आती हो तो कमल के पत्तों को पीसकर खाँड़के साथ खावें। काँच का निकलना बन्द हो जायगा।

तरी लाने वाला तैल

कमल की जड़को तिलके तेल में औटाकर छान लेवे। फिर उसे बोतल या शीशीमें रख छोड़े। सुबह-शाम जब इच्छा हो मस्तक पर लगावे। इस तैल को लगाने से आँख और मस्तक पर तरी आती है।

लाल कमल

इसका संस्कृतमें कोकनद, अरुणकमल रक्तांभोज शोण-पद्म, रक्तोत्पल, अरविंद, रविप्रिय और वारिज कहते हैं। इसी प्रकार सबके भिन्न-भिन्न नाम हैं।

फोड़ेके घाव की दवा

कमल और बरगद के पत्ते जलाकर रोगन

बादाम में मिलाकर घाव पर छिड़के।

कुकुरबंदा

इसे संस्कृतमें ककुन्दर, ताम्रचूड (पीतपुष्प) सूक्ष्म पत्र और मृदुच्छद कहते हैं। हिं० कुकुरबंदा, कुकूसिसा कुकूरसोका, कुकुरवँधा कहते हैं।

गुणमें यह कटु, तिक्त, ज्वर, रुधिर-विकार और कफनाशक है। इसके सेवन करने से रक्तपित्त, अतिसार और दाह शान्त होता है। इसका सर्वाङ्ग लिया जाता है। मात्रा दो माशेकी है।

सूजाक की दवा

कुकुरबंदे को लाकर मीज डाले या पीस डाले। फिर उसको छानकर गायके दूधमें मिलाकर पीवे तो इससे इन्द्रीजुलाब होता है और पेशाबकी कड़क दूर होकर सूजाककी जख्म अच्छी हो जाती है।

कनेर

संस्कृत—करवीर, श्वेतपुष्प, शतकुम्भ, अश्वमारक ये नाम श्वेत कनेरके हैं। हिन्दीमें सफेद, कनेर, बंगलामें श्वेत-करवनी। का० बीकणलिगे, म० श्वेतकणेर, गु० घोलीकणेर, अंग्रेजीमें ओलीआन्डर। रक्त करवीरके संस्कृत नाम चंडत और लगुड हैं। हिन्दीमें लाल कनेर, बं० रक्तकरवी, म० तांवड़ी-कणेर, गु० रातोकणेर, का० कैंगणलिगे, तैलगू कानेरचेट्टु, अ० सुमुल, फा० सरजेहरा, अंग्रेजीमें अलियंडर कहते हैं।



कनेर चार प्रकारकी होती है। एक का फूल सफेद होता है और दूसरे प्रकार के कनेरका फूल लाल होता है और तीसरी का फूल पीला और चौथी

का गुलाबी रंगका होता है। यह कनेर भी सात उपविषोंमें एक कही गई है।

गुण—लाल और गुलाबी ये दोनों कनेर कड़ुवी, कषैली और कटु होती है।

प्रयोग—व्रण, कोढ़, उष्णवीर्य, नेत्रपीड़ा, कृमि, घाव, खुजली आदि रोगों को हरण करता है। खाने पर विष का काम करती है।

पीली तथा काली कनेर

पीली कनेरको सुगन्धित कुसुम भी कहते हैं। इसका फूल पीले रंगका बड़ा सुहावना और सुगन्धि होता है। इसी प्रकार काले रंग की कनेर होती है। परन्तु वह बाग बगीचोंमें इधर कहीं देखनेमें नहीं आती। हाँ, गुलाबी रंगकी कहीं-कहीं अवश्य दिखलाई पड़ती है।

कनेर खानेसे घोड़ा मर जाता है। प्लेगकी गिल्टी पर कनेरकी छालको पीसकर लेप करनेसे गिल्टी बैठ जाती है।

जीर्ण घाव पर

कनेरके पत्तों को सुखाकर जला लेवें, फर उसको राखको पुराने घावों पर बुरक देवे। कई दिन बराबर बुरकनेसे घाव सूखकर अच्छे हो जाते हैं।

जाँघों के दर्द में

कनेरके पत्तों को औटाकर तरेड़ा करे तो जंघेकी दर्द दूर होवे।

सिर दर्द की दवा

अफीम और उशुकके साथ कनेरका छाल पीसकर सिर पर लेप करे तो सिरका दर्द जाता रहे और पुराना घाव भी अच्छा हो जावे।

घरमें दीमक, पिस्सू आदि न लगें

कनेरके पत्तों और छालको एकमें मिलाकर

औटा लेवे। फिर उस औटे हुए जलको घरमें छिड़क देवे तो घरमें दीमक, साँप, बिच्छू और पिस्सू उस घरको छोड़कर भाग जाते हैं।

श्वेत कुष्ट और पीठके दर्दकी दवा

ताजे-ताजे कनेरके फूलको उतार लावे और उसको मीठे तेलमें डालकर ४० दिनों तक उसीमें पड़ा रहने देवे। जब फूल गल जावे तब उसमें उतना ही जैतूनका तेल भी मिला देवे। फिर उस तेलको दवाके काममें लावे। इस तेलके लगानेसे शरीरके सफेद दाग कोढ़, पुट्ठोंका दर्द तथा पीठ का दर्द दूर होता है। पुरुषेन्द्रिय पर मालिश करनेसे सुस्ती जाती रहती है।

कनेर घृत बनाना

दश सेर दूधमें २० तोले सफेद कनेरकी जड़ मिलाकर भली प्रकार औटा डाले। फिर आगसे उतार कपड़ेसे छानकर दही जमा देवे। जब दही जम जाय तो उसको मथनीसे मथकर उसमेंसे घी

निकाल लेवे। यह घी भी उक्त रोगोंमें परम गुण-कारी होता है।

जिनकी नसें कमजोर हो गई हों उन्हें उपरोक्त घी को एक रत्ती मक्खन में मिलाकर खिला देवे। फिर उसी घी को नसों पर मर्दन करे और ऊपरसे पान बाँध देवे। अवश्य लाभ होगा। इस लेपकी गरमीसे यदि फुन्सियाँ निकल आवें तो सौ बार धोए हुए घी को उनपर चुपड़ देवे और गुड़, तेल खटाई का सेवन न करे, जिसको सुस्ती हो गई हो, उसको पान पर लगाकर खिलावे तो उस मर्द की सुस्ती जाती रहे।

कनेर घृत से अन्य लाभ

कनेर घृत में से सींकभर घी निकालकर पान में लगाकर २१ दिनोंतक सेवन करे तो स्त्री प्रसंग में अनिच्छा, श्वास, खाँसी, निर्बलता, रोगों और पट्ठों की शिथिलता आदिका विकार जाता रहे। उपरोक्त घीके सेवन करनेसे अफीम खाने की

आदत छूट जाती है। पथ्य से रहे। घी-दूध का सेवन करे।

खुजली की दवा

कनेर के पत्ते २० नग पावभर सरसों के तेल में जलाकर तेल बदन पर मले।

घाव पर

कनेर की सूखी पत्ती पीसकर घाव पर बुरके।

जोड़ों के दर्द की दवा

कनेर की पत्तियाँ औटाकर कूटके मीठे तेल में मिलाकर लेप करे।

शिर दर्द और अधकपारी की दवा

सफेद कनेर की पत्ती छाया में सुखाकर महीन पीसे, जिस ओर पीड़ा हो उसी ओर के नथने में दो चावल फूँके छींकें आवेंगी और नाक से बहुत पानी टपकेगा इससे पीड़ा जाती रहेगी।

कचूर

इसे संस्कृतमें कर्चूर, वध, मूरथ, द्राविड कल्प और शठी कहते हैं। हिन्दीमें कचूर, अमिया हल्दी, बं० शठी, म० कचोरा, कलीआगिन, षटकचोरा, गु० कचोरा, कचुरा, तै० कचोरालु, अ० एरकुल काफुर, फा० जरबाद, इं० लांगजेडोरी; ला० करक्यमा जोडोरिया।

कचूर के चपटे, गोल, रूपा के समान सुगन्ध-वाले जड़ के टुकड़े होते हैं। यह एक हल्दी की जाति है। यह मलेबार, मुंबई, थाना इत्यादि स्थानों में होती है।

गुण—अग्निदीपक, रोचक, चरपरा, कड़वा, सुगन्धित, गरम और हल्का है।

प्रयोग—कोढ़, बवासीर, व्रण, खाँसी, श्वास, गोला बादी, कफ, कृमि, गलगंड, गंडमाला, अपची और मुख का जड़ता आदि को नष्ट करता है। मात्रा ४ माशे की है। प्रतिनिधि (इसके अभाव में) सतावर है। यह दिल और दिमाग को अवगुण करे तो इसका दर्पनाशक सफेद चन्दन है।

आमवात की दवा

कचूर, सोंठ, हर्र की छाल, बच, देवदारु, अतीस और गुर्च का दो टंक क्वाथ नित्य पिलावो तो आमवात दूर हो।

जीर्ण ज्वर और विषम ज्वर की दवा

कचूर, पित्त पापड़ा, सोंठ, नागरमोथा, कुटकी, कटिआली और चिरायता समानके चूर्णमें से २ टंक क्वाथ प्रतिदिन ११ दिन पिलावे तो जीर्ण ज्वर और विषम ज्वर दोनों दूर होवेंगे।

कंजा (करंज)

इसे संस्कृतमें करंज, नक्तमाल और चिरविल्वक कहते हैं। हिन्दीमें कंजा, करंजुवा, कटकरंजा, गं० डहर करंज, म० करंजाचेवृक्ष, चोपड़ा करंज क० नापसीय मरनू, तै० कंजू, ला० पोन गेम्याग्लेनरा कहते हैं।

यह तीन-चार तरह का होता है। परन्तु गुणमें सभी समान हैं। इसका वृक्ष मध्यम कद का होता है। शाखी जातिका वृक्ष है, लतारूपमें भी होता है। पत्ते गोल आगेसे अनीदार और गुच्छेदार होते हैं तथा सफेद पुष्प होता है। पत्ते केसुला की तरह होते हैं। फली लम्बी और चपटी होती है। इसके फलको फोड़ने से भीतर से बादामी रंग का चपटा बीज निकलता है। यह प्रायः नदी के किनारे बहुत होता है। एक-एक डाली में पाँच-पाँच सात-सात पत्ते होते हैं।

गुण—यह कटु, तीक्ष्ण, उष्णवीर्य और योनि का दोष हरणकर्ता है।

प्रयोग—कुष्ट, उदावर्त्त, गोला, बवासीर, व्रण, कृमिरोग और कफ इन रोगोंको नष्ट करनेवाला है।

कंजेके पत्ते भेदी, कटुपाकी, उष्णवीर्य, पित्त-

कर्ता और हल्के होते हैं। पत्तोंके प्रयोग से कफ, वात, बवासीर, कृमि और सूजन दूर होता है।

कंजेके फल वातनाशक, प्रमेह, बवासीर, कृमि और कोढ़ को दूर करने वाले हैं।

कंजेके बीज, छाल और पत्ते प्रयोग में लिये जाते हैं। मात्रा दो माशे की है।

कन्धों की व शीत लगने की दवा

कंजा औटाकर बफारा ले और वायु से बचे और जिसको शीत पकड़ ले तो सिर्स के पत्ते, सँभालू के पत्ते, सहजन के पत्ते औटाकर बफारा ले। पत्तों को अवयव पर बाँधे और वायु से बचता रहे।

श्वास रोग की दवा

कंजा की मिंगी और पीपल पीसकर अदरक के रस में मिर्च के प्रमाण की गोलियाँ बना ले। तीन गोली तड़के के समय खाया करे।

भूत बाधा निवारण

करंज की जड़, दारु, हल्दी, सरसों, कचूर, हींग, वच, मजीठ, त्रिफला, सोंठ, काली मिर्च, पिप्पली और प्रियंगु पुष्प, इनको बकरेके मूत्रमें पीसकर नास सुँघाओं तथा अंजन लगाओ तो भूत की बाधा दूर हो।



कचनार

इसे संस्कृतमें कांचनार, कांचनक, गंडारि और शोण पुष्पक कहते हैं। हिन्दी में कचनार, बं० लाल कांचन म० रक्त कंचन, का० काच, कोचले, ता० वेप, कांचव, गु० कंचान वृक्ष, कांचनार, छा० वोहीनी आवेयेंगेटा कहते हैं।

कचनार का वृक्ष बड़ा होता है और पत्ता बीच में से फटा हुआ होता है। बम्बइमें इस पत्ते में तम्बाकू भरकर पीने की बीड़ी बनाते हैं।

गुण—शीतल ग्राही, कषैली और पित्तनाशक है

प्रयोग—कृमि, कुष्ट गुदभ्रंश, गंडमाला और व्रण को दूर करता है।

इसके फूल हल्के रूखे और संग्राही हैं। यह रक्त, पित्त, प्रदर, क्षय और खाँसी के रोग को नष्ट करनेवाला है। इसकी छाल प्रयोग में ली जाती है। मात्रा दो माशे की है।

कचनार की फली का शाक होता है और कचनार के रस की पुट देने से सुवर्ण की भस्म बनती है।

दाँत दर्द की दवा

कचनार की लकड़ी जलाकर पीसकर मंजन बनाकर मले तथा कचनार की छाल औटाकर कुल्ले करे।

बवासीरमें

कचनार, जामुन और मौलीसिरीकी छालको पानीमें औटाकर आबदस्त ले तो बवासीर दूर हो।

कटहल

इसे संस्कृतमें पनश, कंटुकि फल और अतिवृहद् फल कहते हैं। हिं० कटहर, कटैर, बं० कांठाल, म० फणस, क० हण सोनहणु, तै० पंगसब काया, का० इलसीनहणु, ता० पिल्ली, उड़िया में पड़स, ला० अर्टोकार्पस इन्टेग्रिफोलिया।

गुण—कटहलका पका फल शीतल, स्निग्ध, वातपित्त नाशक, तृप्तिकरता, बृंहण, स्वादु, मांस और कफको बढ़ानेवाला, बलकर्ता और वीर्य वर्द्धक है।

प्रयोग—यह रक्त पित्त, क्षय और व्रणको दूर करनेवाला है।

कटहल का कच्चा फल विष्टंभी, वातकर्ता, कषैला, भारी, दाहकर्ता, मधुर, बलकारी कफ और मेद को बढ़ानेवाला है।

कटहल के बीज—वीर्यवर्द्धक, मधुर, भारी, मल को बढ़ानेवाला और मूत्रको निकालने वाला है।

उकवँत की दवा

कटहल के पत्ते घी से चुपड़कर थोड़ा गरम कर उकवँत पर बाँधे और चार घड़ी पश्चात् दूसरा पत्ता बाँधे।

करील

इसे संस्कृतमें करक, अन्थिल और मरुभुरुह कहते हैं। हि० करील, म० घटुभारङ्गी, गु० केरडो कहते हैं।

यह एक क्षुप जाति का वृक्ष है। ऊसर में बहुत होता है। इसके फलको टेंटो कहते हैं। इसका फल लाल रंग का होता है।

यह गुण में चरपरा, कड़वा, पसीना लानेवाला, गरम और दस्तावर है। यह बवासीर, कफ, आमवात, विष, सूजन और व्रण को दूर करनेवाला है।

नासूर की दवा

करील की कोंपल एक मांशे, मुर्दाशंख एक रत्ती, बर्गदका दूध एक बूँद पानी के साथ पत्थर पर पीसकर लगाकर उसपर एक बूँद बर्गदके दूधको टपकावे ।

बरसाती फोड़ों पर

करीलका कोयला सरसोंके तेलमें मिलाकर लगावे ।

कपास

इसे संस्कृतमें कार्पासी, तुण्डकेरी, समुद्रान्ता, हिन्दीमें कपास, बं० कार्पासी, गु० बण, म० कापसी, ते० पत्तीचेट्ट; अ० कुतुन फा० कुतुनपुवेदाना, ला० गोसिपियम, इं० काटन कहते हैं ।

पीले और लाल फूलकी कपास हल्की किंचित् उष्ण, मधुर और वातनाशक होती है । इसके सेवन करनेसे तृषा, दाह, चित्तकी बेकली, परिश्रम, भ्रम और मूर्च्छा दूर होती है । कपासके

पत्ते वायुनाशक और रक्तजनक हैं। इसके सेवनसे कानका दर्द, कर्णनाद और कानसे राधका बहना दूर होता है।

१—कपासके बीजका लेप स्तनों पर चढ़ाने से दूध बढ़ता है।

२—कपासकी जड़का रस या भंटेकी जड़का रस पिलानेसे भंग तथा धतूरेका मदात्य दूर होता है।

गलगंड की दवा

कपासकी छाल, गुरच, नीमकी छाल छड़, दोनों पीपल, खरेंटी और देवदारु के क्वाथ को तेलमें पकाकर वह तेल २५ दिन लगानेसे गलगंड रोग शान्त होता है।

स्त्री धर्ममें अधिक रुधिर आवे तो कपास के बीजोंका चूर्ण फाँके।

कत्था (खैर)

संस्कृतमें खदिर, रक्तसार, गायत्री, दंतधावन; चंटकी,

बालपत्र, बहुशल्य और याज्ञिक कहते हैं। हिन्दीमें खैर, लाल, कत्था, म० कात, गु० खेरिया, क० केंपिम खैर तै० रुवासु।

गुण—यह शीतल, दाँतों को हितकारी, कड़वा और कषैला है।

प्रयोग—खुजली, खाँसी, अरुचि, मेदरोग, कृमि, प्रमेह, ज्वर, व्रण, सफेद कोढ़, आमवात, रक्तपित्त, पांडुरोग, कुष्टरोग और कफके विकारों को दूर करता है।

खैरके बड़े-बड़े वृक्ष होते हैं। उनमें छोटे-छोटे और टेढ़े २ काँटे होते हैं। इसकी लकड़ीसे यज्ञके श्रुवा, श्रुवी बनाकर उसने होम करते हैं और इसकी लकड़ी का कोयला आतशबाजोमें काम आता है।

मदनपाल निघंटु में लिखा है कि इस वृक्षको अत्यन्त रंगकी लकड़ी और कच्ची फलियों में से औटाकर सत्वनिकलता है। उसीको कत्था कहते हैं।

अँतरिया ज्वरकी दवा

चिरायते को पानीमें भिगोकर उस पानीमें

१०-१२ ग्रेन कत्था डाल देवे। फिर इस जलको पीवे तो अँतरिया ज्वरको शीघ्र लाभ हो।

मसूड़ों से रुधिर आने की दवा

रुधिर के विकार के कारण यदि मसूड़ों में से रुधिर निकलता हो तो कत्थे को मसूड़े के ऊपर मले तथा खानेको देनेसे अत्यन्त फायदा करता है।

नासूर और कोढ़ के दागों पर

डा० एम० रोसना कहते हैं कि यह अनुभव सिद्ध है कि बहुत दुष्ट नासूर और कोढ़ के दागों पर कत्थे को बारीक पीस अन्य पदार्थों के साथ मलहम मिलायके लगानेसे घाव शीघ्र भर जाते हैं।

चरकसंहिता—खैरकी छालको कुष्टनाशक वर्णन किया है तथा सुश्रुतमें उसको मेदहर, कुष्टनाशक और मेद शोषणकर्ता माना है। इन पुस्तकों में कत्थेको स्तंभक माना है। पत्तों का क्वाथ करके देने से मूत्र स्थानके रोग नष्ट होते हैं।

गुण—भारतीय लोग कत्थको शीतल, ग्राही और पाचक मानते हैं तथा गलेके भीतरके रोगों में मुखकी गरमी, फूले, मसूड़े, खाँसी, दस्त और शूलके रोगोंमें उपयोगी मानते हैं। पुराने नासूर, फोड़े और गाँठ पर इसको पीसकर लेप करते हैं। कत्थे को दवाओं क साथ मिलाकर देने के लिए अन्य ग्रन्थ की अनेक सम्मतियाँ हैं।

मुसलमानी ग्रन्थों में भी ऊपर कहे हुए सब गुण कत्थमें माने गये हैं। खैर की लकड़ी के सार को ही खैरसार कहते हैं। खैरसार का स्वाद मीठा और कषैला होता है तथा देशी दवाओं में उसको छातीके रोगोंमें अत्यन्त बेशकीमती माना गया है। इससे कफ जुदा होकर निकलता है।

दाद पर

कत्था और पलासपापड़ा लगावे।

कटेरी

इसे; संस्कृतमें कंटकारी, दुःस्पर्शा, क्षुद्रा; व्याघी निदिग्धिका,

कंटालिका, कंटकिनी, धावनी कहते हैं। हिन्दी कटेरी, भटकटैया, रेंगनी, बं० कंटकारी, म० दिगणी, क० तेलगुल्लु, गु० भोरीगणी।

यह एक क्षुप जाति की वनस्पति है जो पृथ्वी पर फैली रहती है। इसका फूल नीले रंगका और पीले रंगका फल बेरके समान गोल होता है। कटेरो का गुण दस्तावर, स्वाद चरपरा, दीपन, हल्की, रूक्ष, गर्म और पाचक है।

बात-कफ-ज्वर और खाँसी की दवा

कटियाली, सोंठ, पित्तपापड़ा और गिलोय को समान भागमें लेकर चूर्ण कर डालो। इसमेंसे छदाम-छदाम भरका क्वाथ १० दिन तक पीनेसे उक्त रोगों में तत्काल लाभ प्राप्त होता है।

मूत्रकृच्छ्र की दवा

कटियाली का रस मधु के साथ पिलाने से मूत्रकृच्छ्र नष्ट होता है।

बालक दूध नहीं फेंकता

कटियालीके फलोंका रस, पीपल, पीपलामूल, चव्य, चित्रक और सोंठका चूर्ण मधुके साथ चटाने से बालक दूध नहीं फेंकता।

कटेरी का प्रयोग खाँसी, श्वास, ज्वर, कफ, बादी, पीनस, पार्श्वपीड़ा और हृद्रोगमें किया जाता है। यह वीर्यवर्द्धक, रेचक, भेदक, कड़वा, पित्तकर्ता, अग्निवर्द्धक और कफ वायुनाशक है। इसीको लक्ष्मणा भी कहते हैं। परंतु सुश्रुतने इसके शारीरिक भाग में लक्ष्मणा के अन्य ही लक्षण कहे हैं। पर गुणमें दोनों ही समान हैं। प्रयोग के लिए इसकी जड़ लेना चाहिए। परन्तु जड़ न मिले तो पंचाङ्ग लेना चाहिये।

जीर्णज्वर की दवा

कटियाली, गिलोय और सोंठ इन तीनोंका क्वाथ दश दिन पर्यन्त पिलाओ तो जीर्ण ज्वर दूर हो।

सन्ततादि शीत ज्वर की दवा

कटियाली, धनियाँ, सोंठ, गिलोय, नागर-मोथा, पद्मकाष्ठ, रक्तचन्दन, चिरायता, पटोलपत्र, अडूसा, पुहकरमूल, कुटकी, इन्द्रयव, नीमकी छाल, भारंगी और पित्तपापड़ा, समान के चूणमें दो टंकका क्वाथ दोनों समय १० दिन पिलाओ तो सन्ततादि शीतज्वर नष्ट हो। यह क्षुद्रादि क्वाथ है।

कफज्वर में

कटियाली, गिलोय, सोंठ, पुहकरमूल और अडूसा धेले २ भर लेके क्वाथ बनाकर सात दिन पिलाओ।

अथवा—

कटियाली, पिप्पली, काकड़ासिंगी, गिलोय और अडूसा दो-दो टंक लेकर क्वाथ बनाओ और इसे १० दिन पर्यन्त पिओ।

खाँसी की दवा

छोटी कटेरी की जड़, मुलहठी, काकड़ासिगी, कुलिंजन, हडकाबक्कल पानी में औटाकर बबूल की छाल मिलाके चनेके प्रमाण गोलियाँ बनाकर मुँह में रखे।

नाक के रोग में

छोटी कटेरी पानी में पीसकर नाक पर लगावे और उसके पत्तों तथा जड़का रस निचोड़ कर नाक में टपकावे।

नेत्र पीड़ा में

कटेरी के पत्ते पीसकर नेत्रों पर बाँधे और रस नेत्रोंमें टपकावे तो नेत्रों को गुण करता है।

मिरगी की दवा

कटेरी की जड़ और भाँग के बीज बराबर-बराबर लेकर बालक के मूत्र में पीसकर जब

मिरगी आवे तो उसकी (रोगीकी) नाकमें टपकावे।

तथाच—

छोटी कटेरी का फल सुखाकर कायफल, नकछीकनी प्रत्येक छः माशे और कुताश ४ तोले लेकर सबको महीन पीसकर दो माशे नित्य सूँघे।

दाँत दर्द में

कटेरी का फल पुष्प सहित कूट निचोड़ कर उस पानी से कुल्ले करे तो दाँतों की पीड़ा और कीड़ों के खानेसे जो पोल पड़ गई हो तो गुण करे तथा कटेरी को पानी में औटकर चार दिन कुल्ले करे तो भी यही गुण करे।

नासूर की दवा

छोटी कटेरी का फूल कूट छानकर जलमें मिलाकर फाहा उसमें भिगोकर नासूर पर बाँधे।

कपूर

कर्पूर, सिताभ्र, हिमवालुक, घनसार, जितने चन्द्रमाके और हिमके संस्कृत नाम हैं वे सब कपूरके जानो । हिं० कपूर, बं० कर्पूर, म० कापूर, गु० बरास कपूर, ती० कर्पूरम्, फा० काफूर, इं० कम्फर कहते हैं ।

कपूर तीन प्रकार का होता है। भीमसेनी, पत्री और चीनिया। ये तीनों आजतक बराबर व्यवहारमें आते हैं। यह इन्तखुर्दा, चीन व हिन्दुस्तानमें पैदा होता है। भारत में यह (एक) केले की जाति से भी पैदा होता है। इसको कपूर केला कहते हैं। कानसूर शहरको बरास भी कहते हैं। उसमें प्रकट होने से यह बरास कर्पूर कहलाता है। बरासमें भीमसेनी कपूरका बड़ा भारी दरख्त होता है। एक वृक्षमें से अनुमानतः छः सवा छः सेर कपूर निकलता है और उसी जगह १४० रुपये सेर बिक जाता है। दूरसे आता है अतः खर्चा अधिक पड़ता है इसीसे इसकी अधिक प्रशंसा है।

गुण—कपूर (बरास वा भीमसेनी) शीतल, बलकारक, नेत्रों को हितकारी, लेखन, हल्का, सुगन्धित, मधुर, दुर्गन्धनाशक, कड़वा, आक्षेप वातनाशक, निद्राको प्रकटकर्ता, पसीने बढ़ाने-वाला, वेदनानाशक और काम वेग को शान्त करनेवाला है।

प्रयोग—इसके सेवन करने से पित्त, कफ, विषदोष, दाह, तृषा, मुख की निरसता, मेदरोग और शुक्र प्रमेह दूर करता है।

इस कपूरके दो भेद हैं-एक पका हुआ, दूसरा कच्चा। इन दोनों में कच्चा कपूर विशेष गुणकारी है। इसकी मात्रा ४ रत्ती की है। इसके अभाव में सुगन्धित मोथा लेना चाहिये।

कपूर की परीक्षा

जो भाँग के पत्तों के समान छोटे २ टुकड़े अत्यन्त हल्के और तौल में अधिक चढ़े। खाने में कड़वा लगे, शीतल, हृदय को प्रिय और अत्यन्त

सुगन्धिकी लपट देनेवाला, चिकनाई रहित, कठोर पत्रका ऐसा शुभ कपूर राजाओंके योग्य है। इससे विपरीत प्रायः फोड़े और घाव को प्रकट करनेके वास्ते कहा है।

यह वृक्षके शिर, मध्य और तल इन तीन भागोंके होनेसे कपूर तीन प्रकार का होता है। जो वृक्षके ऊपरके भागमें हो वह शिर है। मध्यमें और जो पत्तेके नीचे होवे वह तल संज्ञक कपूर है। तथा जो स्तम्भके गर्भमें स्थित हो वह कपूर श्रेष्ठ माना जाता है। और स्तम्भके बाहर होने-वाला कपूर मध्यम है तथा जो स्वच्छ और कुछ-कुछ हल्दीके समान पिलास लिये हो वह मध्यम और जो सफेद और रुखाई लिये हो वह अधम है।

इन सब भेदोंके अतिरिक्त एक 'पत्री कपूर' भी होता है। यह एक छोटे क्षुप जातिके वृक्षके पत्तोंसे निकलता है। यह वृक्ष चीन देशमें होता है। इस वृक्षसे ब्रस्नाके मुल्कके मनुष्य औटाय करके कपूर निकालते हैं। यह भीमसेनी कपूरकी

अपेक्षा भारी है और इनमें दोनों मरुए बृक्षके समान गंध आती है और चीनके लोग इसे नागाई कहते हैं।

चीनियाँ कपूर

यह बरास और पत्री कपूर दोनोंसे हल्का है और बाजारमें बहुत सस्ता मिलता है। इसको पक्व (पकी) कपूर कहते हैं। यह बरास और पत्री कपूर दोनांसे हल्का और बाजारमें बहुत सस्ता मिलता है। यह भी एक वृक्षसे निकलता है। इसीसे देव-मन्दिरोंमें आरती करते हैं और बहुतसे भारतवर्षके पामरजन इसको उड़ाकर स्वच्छ कर लेते हैं। फिर इसीको भीमसेनी कपूरके नामसे बेचते हैं।

भीमसेनी कपूर साधारण कपूरके बनिस्वत बहुत शीघ्र कामोत्तेजक है।

करेला

इसे संस्कृतमें कारवेल्ल, कठिल्ल, हिन्दीमें करेला, बं० करोला, गु० कारोळा, म० मधुकारली, तै० करिला, का०



हागल, उड़ियामें फालरा, फा० कारेलाह और अंग्रेजीमें हर्स माडिका कहते हैं।

करेलेकी तासीर हल्की, दस्तावर, शीतल, कड़वा और बादी रहित है। यह गुणमें कफ-रुधिर, ज्वर, पित्त, पांडुरोग, रुधिर-विकार, कृमि-रोग और प्रमेह को दूर करनेवाला है। करेलीका गुण भी करेलेके ही समान होता है।

करेलेकी बेल खेतोंमें या छोटे २ पेड़ों तथा कमरों पर देखनेमें आती है। यह बेलि बहुत पतली-पतली टहनियोंवाली होती है जो अनेक शाखाओंसेअपने अगल-बगलकी जमीनको दोतीन हाथके दायरेमें घेर लेती है।

करेला दो तरहका होता है। एकको करेला,

दूसरेको बन करेला कहते हैं। करेला छोटा बड़ा सब प्रकारका होता है। बड़ा करेला ज्यादासे ज्यादा एक फुट लम्बा होता है। यह खानेमें कड़वा होता है इसके ऊपर जो मोटा छिल्का होता है उसपर दाना-दाना निकला होता है और भीतरके मध्यमें बड़े २ बीज लगे रहते हैं। करेला भाजी एवं शाक बनानेके काम आता है। इसका अचार भी बनता है जो खानेमें स्वादिष्ट होता है। जब करेला पक जाता है तो इसका भीतरी रंग लाल होता है और कच्चे पर बीजका रंग सफेद होता है।

पित्त विकारवाले रोगीको करेलीकी पत्तियें का रस पिलानेसे वमनके साथ पित्त निकल जाता है और यदि वमन न होवे तो किसी प्रकार की हानि भी नहीं होती और कुछ देर बाद दो चार दस्त होता। और दस्तके साथ २ पित्त का प्रकोप भी दूर हो जाता है।

रतौंधीकी दवा

सन्ध्या समय काली मिरचको करेलेके रसमें घिसकर आँखमें आँजे तो रतौंधीका रोग जाता रहता है।

बालकका पेट साफ करनेकी दवा

करेलेकी पत्तियोंका रस निकाल लेवे। फिर उस रसमें थोड़ी सी हल्दी घिसकर पिला देवे। फिर वमन द्वारा बच्चेका पेट साफ हो जावेगा।

पारा खाने पर और हैजा होने पर

करेलेकी जड़का रस पानीमें घोटकर पिला देवे। तथा तिलका तेल और करेलेका रस दोनों को बराबर २ मात्रामें लेकर पिलानेसे हैजेके रोगीको लाभ पहुँचता है।

पेटके कीड़े निकल जावें

करेलेके पत्तोंका रस निचोड़कर पिलानेसे पेटमें पड़े कीड़े नष्ट हो जाते हैं।

कामला रोगमें

करेलेकी पत्तियोंके रसमें बड़ी हर्रेको घिसकर

कामलेके रोगीको पिलानेसे कामला रोग जाता रहता है।

गठियाकी दवा

करेला सूखा लेकर सिरके के रसमें पीसकर आग पर थोड़ा गरमाकर कण्ठकी सूजन पर लगानेसे सूजन जाती रहती है और गठियाका रोग भी दूर होता है।

जलन्धरकी दवा

करेलेका रस पौने दो तोले निचोड़ छानकर पीवे और उसमें थोड़ा-सा शहद मिलावे तो दो-तीन दस्त लाकर दोषको दूर कर देता है।

करौंदा



इसे संस्कृतमें करमर्द, सुषेण, कृष्ण पाकफल, बं० करयचा, म० घरवन्द, गु० करयदा, ला० कोरेसा, कारेदास कहते हैं।

इसकी एक और जाति इससे भी छोटी होती है जिसको कर्मदिका कहते हैं। इन दोनोंके गुण और सकल सूरतमें कोई अन्तर नहीं होता। इसकी झाड़ कटीली और छतनार होती है। टहनियाँ भी दो-तीन या चार हाथसे अधिक बड़ी देखनेमें नहीं आतीं। यह छोटा रहने पर ही फूलने-फलने लगता है और बराबर फूलता-फलता रहता है। इसकी झाड़िया वृक्षमें खूब फूल और फल आते हैं। यहाँ तक कि जब इसका फल बढ़कर सफेदसे लाल रंगका हो जाता है तो दूरसे देखने पर सारा वृक्ष लाल-हरा मिश्रित बहुत भला मालूम होता है। इसके फूल सफेद रंगके गुच्छेदार और कुछ सुगन्धि लिये होते हैं।

गुण—करौंदे जब कच्चे रहते हैं तो खट्टे और भारी होते हैं, उसके खानेसे प्यासकी शान्ति होती है। और रक्त-पित्तका हरण होता है। यह

कफनाशक भी है और गरम तथा रुचिकारी भी है।

जब करौंदा पक जाता है तो इसका गुण बदल जाता है। अर्थात् तब यह मीठा, हल्का, रुचिकर और बादी का शमन करनेवाला हो जाता है।

सर्पके काटने पर

करौंदेकी जड़को पानीमें औटाकर पिला देवे। सर्पका विष जाता रहेगा।

खुजलीकी दवा

करौंदेकी जड़ लाकर उसे पानीके साथ पीस लेवे। फिर उसे तेलमें पकाकर जिस स्थानमें खुजली होती हो वहाँ पर लेप करे। खुजली दूर हो जायगी।

घावके कीड़े दूर हों

इसी तेलको घाव पर लेप करे तो घावमें जितने कीड़े पड़े होंगे मर जायेंगे।

तथा दूसरी विधि

करौंदेके ताजे पत्तोंको पानीमें डालकर औटा

लेवे फिर उस पानीसे कीड़े पड़े घावको धोवे तो कीड़े गिर पड़ते हैं। —तथा

करौंदेके कच्चे फलोंको पत्थर या सिल पर पीसकर उसकी लुगदीमें मूगोंको भरकर उपलोंकी दहकती आगमें तोप देवे तो कुछ देरके पश्चात् मूँगे भस्म हो जायँगे।

पेटके दर्दकी दवा

करौंदेकी जड़को पीसकर उसकी फंकी लगाने से पेट का दर्द दूर होता है।

चाँदी भस्म हो

उपरोक्त रीतिसे करौंदेको पीसकर उसकी लुगदीमें चाँदीकी बारीक-बारीक पत्तरें भरकर शराब संपुटकर (शरासेमें डुबोकर) उसमें क्रमशः ११ बार अग्निमें देनेसे चाँदी भस्म हो जावेगी।

ज्वरकी दवा

करौंदेकी जड़का काढ़ा तैयार कर शरीर पर लेप करनेसे विषम ज्वर उतर जाता है।

खाँसीकी दवा

करौंदेके पत्तोंका रस निकालकर उसमें अन्दाजसे शहद मिलाकर चाटे तो सूखी खाँसी जाती रहे।

तथा च अन्यान्य रोगमें

यदि शरीर का रक्त सूखा जाता हो, पित्त-विकार हो गया हो या लू लग गई हो तो पके करौंदे का शर्बत पिलावे।

जलंधर रोग की दवा

करौंदेका शर्बत पहले दिन एक तोला, दूसरे दिन दो तोला, इस तरह प्रतिदिन एक-एक तोला अधिक बढ़ाता जावे। फिर दशवें दिन दश तोला पिलावे। इस क्रमसे दवा करनेसे जलंधर रोग दूर हो जायेगा।

करहो (मालकांगनी)

इसे संस्कृतमें ज्योतिष्मती, कटभी, ज्योतिष्मका, कंगुनी, परावतपदी, गरायालता और ककुन्दनी कहते हैं। हि० मालकांगनी, बं० लताफटकी, म० मालकांगोड़ी, का० कौगुएरडु,

तै० वापजी, गु० मालकोकड़ा, ला० सिलास्ट सपंनिक्युलेटा ।

इसकी बेल होती है । पत्ते कुछ गोल और झुमकेदार होते हैं । फल भी झुमकेदार चना अथवा भारके समान बड़ा होता है । इसके भीतर लाल रंगके छः बीज होते हैं ।

गुण—मालकांगनी लताजातिका वृक्ष है । कटु, तिक्त, सर (वायु) मलादकों को निकालने-वाला, अत्यन्त उष्ण, वमनकारक, तीक्ष्ण, अग्नि-कारक, बुद्धि स्मृतिदायक तथा कफ वायुनाशक है।

इसके सम्बन्धमें यूनानी हकीमोंकी राय है कि मालकांगनीके बीज गरम, संधिवात, लकवा, कुष्ट और दूसरे सरदीसे प्रकट रोगोंमें बर्तनेमें उसी प्रकार बाहर लगाते हैं । ऊपर लिखे रोगोंमें बीज प्रथम रोगके प्रारम्भमें १ से प्रतिदिन एक २ वृद्धि क्रममें ५० तक बढ़ाकर केवल अकेले अथवा अन्य गरम औषधके साथ मिलाके खाने की प्रशंसा करते हैं ।

सुश्रुतमें इसको व्रणशोधन और कुष्ट प्रशमन

कहा गया है। चरकमें इसको शिरोविरेचन कर्ता कहा है और इसके पत्तोंके रससे जीभका जड़त्व दूर होता है और उनसे पेशाब अधिक आवे तथा जलंधरको व्याधिमें देनेसे सूजन न्यून होती है तथा इससे जुलाब भी होता है।

मालकाँगनोके पत्तों का रस देनेसे स्त्रियोंका नष्ट हुआ ऋतुकाल फिर जारी हो जाता है।

चक्रदत्त और शारंगधरमें इसकी जड़को सुगन्धदार और जागृतकर्ता कहा गया है और ज्वर खाँसी, श्वाँस, बदहजमी और त्वचा रोगमें देने में प्रशंसनीय है।

अन्य पुस्तकों को सम्मति है कि मीलिप्स शहरके सूर्यमन्दिरमें ईसवी सन्के २४३ वर्ष पहले वर्षमें सीरियाके राजा सेलूकस और उसका भाई एन्टीओकस इन दोनोंने पुहकरमूल का होम कराया था।

डापोस्त कोरइन्डिसका कहना है कि अरब से आनेवाली वस्तुओंमें पुहकरमूल सबसे उत्तम

सौगात प्रशंसाके योग्य है। यह सफेद रंग की और हलकी होती है और इसकी मीठी खुशबू-दार बास आती है।

तोफतुलामजीनमें लिखा है कि यह जड़ हिन्दुस्तानके किनारेसे आता है और यह जिस वृक्षमें उत्पन्न होती है वह धड़के बिना और पोले पत्तोंका होता है। इसकी तीन जाति है। ये तीनों गरम खुश्क और पेशाब अधिक लाती हैं। यह पित्त को भी निकालनेवाली है और कलेजेके दर्द को नष्ट करती तथा पेटके बिगाड़ को दूर करती है। यह जंगम विष सर्पादि को निकालने वाली, कामोद्दीपनकर्त्ता, पेटके कीड़ों को निका-लनेवाली और पेशाबकी थलीमें प्रकट होनेवाली पथरीको पिघलाकर निकाल देनेवाली है।

मखजन उलअदवियामें लिखा है कि यह जड़ कामोत्तेजक, कुव्वत देनेवाली, दुष्ट हवासे उत्पन्न होनेवाली बिमारियोंमें अत्यन्त उपयोगी है। दमाके रोगमें तथा सुर खोलनेके काम आती है।

डा० इर्विं लिखते हैं कि राजपूतानेमें अफीम उत्पन्न होने लगी। उसके पहले इसको तमाखू की तरह पीते थे और उसका मुख्य उपयोग खुशबू और माल की गठरीमें जीव न लगने पावे इसके दूर करने को इसका बर्ताव करते थे।

मि० वेडह पोवेल कहते हैं कि पंजाबमें इसका चूर्ण करके पुराने नासूर पर और जिस घावमें जीव पड़ गये हों उसमें तथा दाँतोंके दर्दके वास्ते वर्तते हैं। इसको सुखाय चूर्णकर सख्त छिली हुई चमड़ीके ऊपर जल्दी खुंड लाने को मलहमके समान काम आती है और सुखाकर चूर्ण कर बाल धोनेमें भी लाई जाती है। कालरा (हैजा) की बीमारीमें १ ड्राम इलायची और तीन ड्राम कूट दोनों को चार औंस गरम जलमें भिगो दे। फिर इसी जल को १ औंस की मात्रासे प्रत्येक आधे २ घंटेमें देवे तो अत्यन्त उत्तम असर करता है।

डा० पेरिटस्मिथ कहते हैं कि पुहकरमूल

खुशबूदार और जल्दी जगानेवाला पदार्थ है और शूल तथा देहका खिचाव आदि बिमारियोंमें उपयोगी है। काश्मीरी कपड़े, शाल दुशालोंमें कीड़े न लगने पावें। इसके लिये व्यापारी लोग इसका उपयोग करते हैं। सूखी हुई पुहकर मूलकी जड़ खुशबूदार हवा उत्तम करनेके वास्ते जलाते हैं। चीनके मुल्कमें इस जड़के जलाने का अत्यन्त शौक है। इसका खुशबूदार धुआं चीनाई लोग अपने त्रिबुद्धदेवके पास जलाते हैं।

सरजार्ज वर्डवुड कहते हैं कि इससे सफेद होनेवाले बाल काले हो जाते हैं और पेट का कीड़ा, खराब दवाका असर रोकना, ग्राही और नींद लाने का गुण है।

चरकसंहितामें इसको शुक्रशोधक, लेखनीय (धातुओं को पतली करता) शुक्रजनक (वीर्य उत्पन्नकरता) और हिचकीको नष्टकर्ता कहा है।

सुश्रुत संहितामें इसको योनिदोष हरणकर्ता और स्तन्यशोधन, व्रण प्रसादन (त्वचाका रंग

सुधारनेवाला) तथा खुजली और दूसरे विकार दूर करनेवाला कहा है ।

चक्रदत्तमें लिखा है कि हरड़, अजमायन, हींग और सोंठके साथ मिलाके खाँसी, श्वास, ज्वर और जठराग्नि की मंदतामें देवे तो ये सब रोग नष्ट होवें ।

नपुंसकतानाशक मालकांगनी पाक

यह पाक बलको बढ़ाता है । मालकांगनी, अकरकरा, केवड़ेके बीज, लौंग और केशर चौदह २ माशे, अस्पद सात माशे, सफेद पोस्तेके दाने डेढ़ तोले, सफेद तिल ४ तोले ८ माशे, इन सबको पाँच नग चौगुने शहद और कंदमें सबको मिलाकर पाक बनावे । अथवा इस प्रकार—

मालकांगनीको भांगरेके रसमें भिगो देवे और फिर गायके दूध और पानीमें, जब दूधको सोख ले तब, पीसकर बराबरके शहदमें पाक बनावे । प्रथम दिवस पौने दो माशे खाय और इतनी ही नित्य बढ़ाता जाय । दो तोले चार

माशे तक पहुँचावे और चालिस दिन तक खाय तो वृद्ध को तरुण करे।

सफेद दागों पर

मालकाँगनी गौमूत्रमें इक्कीस दिवस भिगोकर उसका तेज निलाकर शरीर के सफेद दागों पर लगावे तो दाग जाते रहें।

काकड़ासिंगी

इसे संस्कृत में शृङ्गी, कर्कट शृङ्गी, कुलीरविषाणिका, अजशृङ्गी और रक्ता कहते हैं। हिन्दी और मराठी में काकड़ा सिंगी, बं० काकड़ाशृङ्गी, गु० काकड़ाशींग, ला० इससक्सीडेनियम्।

यह एक वृक्ष की डालों के ऊपर जीवों के रहने के वास्ते ऊँचे-ऊँचे टीले होते हैं और सींग के छिल्केके माफिक फल होता है। बहुत से पंसारी और अत्तार सड़ी हुई हरणके छिक्केको काकड़ासिंगी के बदले बेचते हैं।

गुणमें यह कषैली, कड़वी और गरम है।

यह कफ, वायु, क्षयरोग, ज्वर, श्वास, उर्ध्ववात, तृषा, खाँसी, हिचकी, अरुचि और वमन होना इन सबको दूर करती है। अर्थात्

इन सब रोगों में इसका प्रयोग किया जाता है। औषधि प्रयोगमें इसके फलकी १ माशे की मात्रा ली जाती है।

प्राचीन आयुर्वेदके ग्रन्थोंके मतानुसार काकड़ासिङ्गी पौष्टिक, कफको निकालनेवाली तथा खाँसी, श्वास, अरुचि और पेटके दर्दोंकी नष्ट करनेवाली है।

यूनानी हकीम इसको गरम, खुश्क और मुख्य करके बच्चोंकी छातीके पुराने दर्दोंमें, उसी प्रकार अजीर्णकी उल्टी और दस्तोंकी बीमारी में उपयोगी मानते हैं। इसलिये ज्वरकी पीड़ामें इसका देना परम लाभदायक है।

खाँसी की दवा

काकड़ासिंगी, कटेरी की जड़, मुलहठी, कुलींजन, हड़काबबूल पानीमें औटाकर बबूलको छाल मिलाकर चने के प्रमाणको गोलियाँ बनाकर मुँहमें रखे।

चरक संहिता में इसे कासहर तथा हिचको नष्टकर्ता कहा है।

सुश्रुतने इसे जीवनप्रद, पौष्टिक, बृंहण और पित्तशोणित, चकत्ते नाशक स्वीकार किया है।

कफ की खाँसी में

काकड़ासिंगी को कूट-छानकर काली मिर्चको बराबर गोलियाँ बनाकर मुँहमें रक्खे।

कुसुम

इसे संस्कृत में कुसुम, वह्निशिख और वस्त्ररंजक कहते हैं। हिन्दी में कुसुम, कसूम और कर्र कहा जाता है। बं० कुसुमफूल, म० करड्याचे फूल।

कसूम दो प्रकार का होता है, एक करिम, दूसरा बनकसूम। इसका बीज सफेद होता है। उसको हिन्दी में कईलाकरण कहते हैं। फा० गुल्मास्फर, अ० अखरीज, हब्बुले अस्फर, अं० कार्थेमस, ला० कार्थेमसटि टोरियन।

गुण—कुसुम मधुर, रूक्ष, अग्निदीपक, रेचक, मल-मूत्रके दोषोंका नष्टकर्ता, कटु, उष्ण, भारी, पित्त उत्पन्नकर्ता, कृमिनाशक, वातको बढ़ाने वाला, घोर रक्त-पित्तनाशक तथा कफ शान्ति-कारक है। इसके फूलकी मात्रा १ माशे की है।

लकवामें

कुसुम के बीजोंका तेल मालिश करे।

डा० एन्शलीका कहना है कि सैकड़ों प्राणी इस तेलको संधिवात और लकवे पर लगाते हैं तथा दुष्ट नासूर पर भी चुपड़ देते हैं। जुलाबके वास्ते बीजोंको शहदमें पीसकर देते हैं।

कसेरू

इसे संस्कृत में कसेरू, चिचोड़, गं० केसुर, म० कचरा, तै० इट्टिकोति, का० सेकिनगड़े, ला० क्रिप्स केसूर।

कसेरू दो प्रकारका होता है, जैसे राजकसेरू और चिचोड़। इसका आकार मोथाके समान होता है और हल्का होता है। दोनों कसेरू शीतल, मधुर, कषैले, भारी, ग्राही, शुक्रोत्पादक, वात-कफकारक, रोचक और स्तनोंमें दूध प्रकट-कर्ता है। साथ ही यह रक्तपित्त दाह और नेत्र रोगको नष्ट करनेवाला है।

प्रथम मास गर्भरक्षा

गर्भवती स्त्रीके गर्भ स्थित होनेपर पहले ही महीनेमें यदि कोई उपद्रव खड़ा हो अर्थात् पेटमें

दर्द आदि होने लगे तो—कसेरू, सिंघाड़ा, कमलकी डण्डी और नीलकमलका फूल इन सबको शीतल जलमें पीसकर दूधमें मिलाकर पीवे तो गर्भ नहीं गिरे।

अथवा

मजीठ, चन्दन, कूट, तगर इन सबको बराबर लेकर गायके दूधके साथ पीवे तो गर्भ सुरक्षित रहे।

द्वितीय मास गर्भरक्षा

यदि दूसरे महीने गर्भमें पीड़ा हो तो तगर, केसर, बेलगिरी, कपूर इनको बकरीके दूधमें पीस-कर दूधमें मिलाकर पीवे तो गर्भ नहीं गिरे और शूल दूर हो।

अथवा

शालम मिश्री, नीलोफर, अदरख, कसेरू, इनको बराबर लेकर जलमें पीसकर दूध के साथ पीवे।

अथवा

कसेरू, सिंघाड़ा, जीरा, खजूर, बेलपत्र,

इनको ठंढे जलमें पीसकर दूधके साथ पीवे तो गर्भ सुरक्षित रहे ।

तीसरे मासमें गर्भरक्षा

यदि तीसरे मासमें गर्भमें वेदना हो तो पद्माख, चन्दन, खस, तगर, इनको समान भाग ले शीतल जलसे पीस कर बकरीके दूधके साथ पीवे तो गर्भ सुरक्षित रहे ।

चौथे मासमें गर्भरक्षा

चौथे मासमें यदि गर्भमें पीड़ा हो तो केलाके पत्ते, सिंघाड़ा, दाख, अनारदाना, केलाकी जड़, इन सबको शीतल जलमें पीसकर बकरीके दूधमें छान लेवे और पीवे तो गर्भ सुरक्षित रहे ।

पाँचवें मासमें गर्भरक्षा

यदि पाँचवें मास गर्भमें पीड़ा हो तो कमलकी डण्डी, नीलोफार, नागकेशर, कमलगट्टा इनको बकरीके दूधमें पीसकर पीवे तो गर्भ सुरक्षित रहे ।

छठवें मासमें गर्भरक्षा

छठे महीने यदि गर्भमें पीड़ा हो तो इलायची

बच मुनक्का दाख, कमलगट्टा, नागकेसर इन सबको शीतल जलमें पीसकर पीवे। अथवा पीपरि, पिपलामूल, कमलकी केशर, कमलका फूल, इनको शीतल जलसे पीसकर छाब लेवे और बकरीके दूधके साथ पीवे तो गर्भ सुरक्षित रहे।

सातवें मास गर्भरक्षा

यदि सातवें मासमें वेदना हो तो कैथका फल, शालम मिश्री, इन्द्रजौ, धानकी खील इन औषधियोंको अथवा पीपलकी जड़, बड़की जड़, भाँगरा, सूर्यमुखीकी जड़, साठीकी जड़, लाल चन्दन, इन सबको समान भाग लेके बकरीके दूधके साथ पीवे तो गर्भ सुरक्षित रहता है।

आठवें मास गर्भरक्षा

यदि आठवें मास गर्भमें पीड़ा हो तो गज पीपरि, पद्माखका कमलफूल, कमलगट्टाकी गिरी और धनियाँ इनको ठंडे जलमें छान दूध मिलाकर पीवे तो गर्भ सुरक्षित रहता है।

नवम मास गर्भरक्षा

यदि नवें मास गर्भमें पीड़ा हो तो सोंठ, ढाकके पत्ते, इलायची, जीरा, गजपीपरि, वाय-विडंग इनको कूट पीसकर बकरीके दूधके साथ पीवे तो गर्भ सुरक्षित रहे ।

दसम मास गर्भरक्षा

यदि दसवें मास गर्भमें वेदना हो तो कमल का दूध, मिश्री मुलहठी, कमलगट्टा, पद्माख इनको शीतल जलमें पीस दूधमें मिलाकर पीवे ।

अथवा

नागरमोथा, बच, सोंठ, केसर, तगर, गौरो-चना, केलाकी जड़, इन सबको बकरीके दूधके साथ पीवे तो गर्भ सुरक्षित रहे ।

ग्यारहवें महीनेमें गर्भरक्षा

यदि ग्यारहवें मास गर्भमें पीड़ा हो तो कमल का फूल, कमलट्टा, कमलका नली, मुलहठी, इनको शीतल जलमें पीस, दूधमें मिलाकर पीवे ।

अथवा मजीठ, चन्दन, खस, सिंघाड़ा,

कसेरू, गिलोय और पद्माख इनको पीस बकरीके दूधके साथ फंकी लगाकर पीवे तो गर्भ सुरक्षित होता है।

बारहवें महीनेमें गर्भरक्षा

यदि बारहवें मास गर्भमें पीड़ा हो तो सिंघाड़ा, नील कमलका फूल, कमलगट्टा मिलाकर पीवे तो गर्भ सुरक्षित रहता है।

इस प्रकार यह गर्भरक्षा का प्रकार बारह मासका लिखा गया। ज्योतिषके जातक ग्रन्थ में कहीं-कहीं तीन वर्ष पर्यन्त गर्भ धारण करना लिखा है, बारह वर्ष पर्यन्त भी गर्भ धारण करना लिखा है। किन्तु यह आधुनिक समयमें असत्य सा प्रतीत होता है। विशेष गर्भरक्षा प्रकार देखना हो तो बालतन्त्र ग्रन्थमें देखिए।

कदम्ब

संस्कृत कदम्ब, प्रियंक, वृत्तपुष्प। हिन्दी कदम, कदम्ब, म० राजेकन्द, कर्नाटी कदऊ, तै० कदम्ब चेट्टु।

इसका वृक्ष बड़ा होता है और पत्ते भी लम्बे पहुँचेके समान होते हैं। फल और फूल नीबू की तरह सुगन्धियुक्त होता है।

गुणमें—यह मधुर, शीतल, कसैला, नमकीन, रसयुक्त, भारी, दस्तावर, रूक्ष, कफवर्द्धक, आँव-कर्ता और स्तनोंमें दूध लाता है।

कदम्ब और काहूका बक्कल और तेंदूक के अन्तरछाल के क्वाथ (काढ़ा) से इन्द्रिय पर के घाव शीघ्र अच्छे होते हैं।

कमलगट्टा

इसे संस्कृत में पद्मबीज, पद्ममाख, गालोड, पद्म कर्कटी और हिन्दी में कमलगट्टा, म० कमलाक्ष, कमलकाकड़ी, इं० पालके कुवति, तै० तामारकाड़ा।

कमलगट्टा बड़े-बड़े तालाबोंमें कमलनालसे उत्पन्न होता है। बल्कि यों कहना चाहिये कि

कमलका ही यह फल है। इसके पत्ते बहुत बड़े-बड़े अरुईके पत्ते के समान होते हैं।

गुणमें—यह शीतल, स्वादु, कषैला, कड़वा, भारी, वृष्य, रूक्ष और सर्वोपरि गर्भदाता और और बलकारक होता है।

कमलगट्टा ग्राही, पित्त, रुधिर-विकार और दाहको उत्पन्न करनेवाला है।

बादी से उत्पन्न प्रदर रोग की दवा

कमलगट्टा, सोंचर नोन, जीरा और मुलहठी का क्वाथ करके मधु के साथ पिलानेसे प्रदररोग नष्ट हो जाता है।

मुखपाक की दवा

कमलनाल, हल्दी, निम्बपत्र और मुलहठी को तेलमें पकाकर उस तेलसे कुल्ले करे तो त्रिदोषज मुखपाक नष्ट होता है।

काला जीरा

जीरक, जरण अजाजी, कणा तथा दीघ जीरक, ये सब सफेद जीरे के नाम हैं। कृष्ण जारे का नाम—उद्गार शाधक और सुगन्ध है। काले जारे का संस्कृत में कालिका, उपकालिका, पृथ्वीका, कारवी, पृथ्वा, पृथुकृष्ण, उपकुञ्चिका, और वृहज्जीरक कहते हैं। सफेद जीरे को मराठी में पढिरजिरे। कर्नाटी में त्रिलियजीरगे। काले जीरे का मराठी में पांढेजिरेही कहते हैं। कर्नाटी में कारिजीरेगे, कलौंजा और जोडुजीगे तथा तेलगू में जिस-कदर कहते हैं। गुजराती धोलुंजीरं, कालीजीरी, कलौंजी। फारसी—कमूनी शोनाजत, हब्ज असवद। अंग्रेजो—कम्मिनूनसीड।

यह भी एक क्षुप जातिका पौधा है जो काबुल के राज्यमें तथा हिन्दुस्तान के उत्तरी पहाड़ी में अधिक उत्पन्न होता है। दोनों प्रकारके जीरे रूक्ष, कटु, गरम, अग्निदीपक, हल्के संग्राहक, पित्तकारक, स्मरणशक्तिवर्द्धक, गर्भशोधक, ज्वर-नाशक और अनेक रोगोंको लाभप्रद हैं।

श्वेत जीरा सुगन्धित, पेटकी ऐंठनको नष्ट करनेवाला और ग्राही है। इससे नेत्र धोने का पानी बनाते हैं जिससे नेत्रका तेज बढ़ता है। मूत्र

में कड़वापन हो तो जीरा पीसकर पीना चाहिये। इससे मूत्र अधिक आता है और पेट के कीड़े भी निकल जाते हैं। गर्भ स्थानमें सूजन आकर अधिक दर्द होता हो तो जीरेके पानीमें स्त्रीको बिठा देना चाहिये।

बवासीरकी दवा

श्वेत जीरा पीस पुल्टिस बनाकर बाँधनेसे बाहर निकले हुए मस्से और अत्यन्त दर्द करने वाली बवासीर जाती रहती है।

मूत्रकृच्छ्रकी दवा

टकेभर जीरा और टकेभर गुड़ नित्य खानेसे मूत्रकृच्छ्र का रोग नष्ट हो जाता है।

किसी-किसी के मत से जीरा पाँच प्रकारका होता है। साधारण जीरा, काला जीरा, स्याह जीरा, कलौंजी और शंख जीरा।

जीरकादि चूर्ण

जीरा, सोंचर नोन, सोंठ, मिर्च, पिप्पली, सेंधानोन, अजमोदक, सेंकी हींग, हर्रकी छाल (ये सब अधेले-अधेले भर) और दो टके भर निशोथ

इन सबका चूर्ण बनाकर १ टंक नित्य उष्ण जलके साथ सेवन कराओ तो अजीर्ण मात्र दूर होकर क्षुधा बढ़ेगी। यह योग तरंगिणीमें लिखा है।

काला धतूरा

संस्कृत—कृष्णपुष्प, विषाराति, कृष्णधूर्त, सिद्ध, कनक, सचिव, शिव। हिन्दी—काला धतूरा।

धतूरा एक क्षुप जातिका पौधा है। फूलों के रंग भेद से यह पाँच प्रकार का होता है। श्वेत, नीला, काला, लाल और पीला। सबमें समान गुण होता है।

धतूरे के पत्तों का रस शरीर में मालिश करने से मेदरोग नष्ट हो जाता है।

वीर्य बहाव को दूर करै

धतूरे के बीज छः माशे, काली मिर्च छः माशे कूट-छानकर उर्दके प्रमाण गोलियाँ बनावे और सदैव एक गोली प्रातःकाल एक तोले सौंफ के शोरे के साथ खाय। एक ही दिन में आराम होगा।

स्तंभन बटी

स्याह धतूरे के फूल सुखाकर चने के प्रमाण की गोलियाँ बनाकर एक गोली खाय।

काला सेमर

संस्कृत—कुत्सित, शाल्मलि, रोचन, कूट शाल्मलि, हिं० काला सेमर, म० काली सांरी।

काला सेमर सेमरका ही एक भेद है जिसका गुण कड़वा, चरपरा, दस्तावर और गरम है। कफ, वातके रोग, प्लीहा, उदर, यकृत (कलेजा) गोला, विष, भूतबाधा, अफरा, विविध रुधिर विकार, मेदरोग, शूल और कफको नष्ट करता है।

सेमर का मूसरा महीन पीसकर बराबर का बूरा मिलाकर नित्य तोले भर गायके दूधके साथ फाँके तो बल बढ़े और वीर्य पैदा हो।

कुचला

संस्कृत०—तिंदुक, जलद, दीर्घपत्रक, कुपील, कुतक, काकतिंदुक इत्यादि। हिन्दीमें—कुचला, मकर तेंदुआ। मराठी—काजरा, गुजराती—झेरकोजोला। तैलगू—मुष्टिगिजा। कलिंगडा—कांजिवार। फारसी—इफाराको।

कुचला एक प्रकारके वृक्षका फल है जिसे जहरबला भी कहते हैं। यह शीतल, ग्राही, कड़वा, वातकारी, मदकर्ता और हल्का होता है। यह अत्यन्त व्यथाको नष्ट करता तथा कफ, पित्त और रुधिर-विकार को दूर करता है। यह मूत्र लाने वाला, बलकारी, अग्निवर्द्धक, कामोत्तेजक, शूल, एकांग वात, शुक्रप्रमेह, गुदभ्रंश, अतिसार आदि रोगोंको दूर करनेवाला है। दुर्बलता दूर करता, मासिक स्राव लाता, पथरीको तोड़ता, दाहको नाश करता और पाण्डु रोग और कमलको नष्ट कर देता है।

अजीर्ण की दवा

कुचिला, हर्रेकी छाल, सोंठ, काली मिर्च, पीपल, शुद्ध गंधक, सिकी हींग और सेंधा नमक सबको जलसे खरल करके चनेके बराबर गोलियाँ बनाकर एक गोली नित्य प्रातःकाल जलके साथ लेनेसे संग्रहणी, अतिसार, अजीर्ण और मन्दाग्नि दूर हो जाती है।

दाद की दवा

कुचला सिरके में पीसकर लेप करे।

वात की दवा

कुचला चन्दनकी तरह घिसकर काली मिर्च मिलाकर गुनगुना गुनगुना लेप करे।

बरसाती फोड़ों पर

कुचला साढ़े बारह तोले, फिटकरी साढ़े पाँच तोला दश माशे घी में मिलाकर मले।

वात, शोथ, विसूचिका रोग में

उत्तम नवीन अफीम, कुचला, काली मिर्च इन तीनोंको महीन पीसकर १ रत्ती प्रमाणकी गोलियाँ बनाओ जो पानके रसके साथ प्रभातकाल १ गोली नित्य खिलाकर ऊपरसे पान खिलाओ तो समस्त वातरोग, शोथ, विसूचिका, अरुचि और अपस्मार ये सब रोग अच्छे होंगे। यह समीर गजकेसरी रस कहलाता है। ये सब यत्न वैद्य रहस्यमें लिखा है।

कुटकी

संस्कृत—कटवी, कटुका, तिक्ता, कृष्णमेदा, कटुंभरा,

अशाका। हिन्दी—कुटकी। बंगला—कटकी। मराठी—काली कुटकी। गुजराती—कडु। तैलङ्गी—काटक रोहिणी। फारसी—खर्बक सियाह। अंग्रेजी—ब्लाकहेलीबीर। लैटिन हेलीबोरस नाइजर।

कुटकीकी केवल जड़ प्रयोग में ली जाती है। इसका रस कटु, पाकमें कड़वी, रुक्ष, शीतल, हल्की, भेदक, अग्निदीपक और हृदय को हितकारी है। कुटकी सेवन करनेसे कफ, पित्त-ज्वर, प्रमेह, श्वांस, खाँसी, रुधिर-विकार, दाह, कुष्ट और कृमि रोग नष्ट होते हैं।

गंडमाला की दवा

कुटकी को पीसकर घिया तुरईमें भरकर रातभर रख दे। तदनंतर प्रातःकाल उसी घिया तुरई को पीस-छानकर ७ दिन तक पिलाने से गंडमाला नष्ट होती है।

ज्वर, खाँसी की दवा

कुटकी, गिलोय, इन्द्रयव, नीमकी छाल, पटोल, सोंठ, अगर, चन्दन, नागरमोथा और पीपलको समान भाग लेकर चूर्ण बना डाले, ४ माशा प्रति-दिन अष्टावशेष जलके संयोग से पिलाओ तो कफ,

पित्त-ज्वर, खाँसी, दाह, अरुचि और हृदय की पीड़ा भी दूर हो जायगी।

मलज्वर की दवा

कुटकी, पिपलामूल, नागरमोथा, हर्रकी छाल और किरमालेका गूदा समानके चूर्णमें २ टंकका क्वाथ बनाकर पिलाओ तो मलज्वर दूर हो।

ज्वर, प्यास, मूर्च्छामें

कुटकी, किरवारेकी गिरी, नागरमोथा, हर्रकी छाल और पित्तपापड़ा छदाम छदाम भरका क्वाथ बनाकर पिओ तो उक्त ज्वर, प्यास, दाह, प्रलाप (बकवाद), मूर्छा आदि नाश होवें। यह वैद्य विनोद में लिखा है।

कुटज (इन्द्र जौ)

संस्कृत–कुटज, कूटज कीट, वात्सक, गिरिमालिका, कालिंग, शक्रशाखी, इन्द्र, जयफल। हिन्दी–कुडाकोरैया (आ) बंगला–कुडची। मराठी–श्वेतकुडा। फारसी–तिवाज।

इसके वृक्ष बड़े होते हैं। इसीके बीजको इन्द्र जौ कहते हैं। यह कटु, रूक्ष, अग्निदीपक, कषैला,

शीतल, तिक्त और संग्राही है। बवासीर, अतिसार, रक्त-पित्त, कफजतृष्णा, त्वचा के दोष, ज्वर, आम, कुष्टरोग, प्लीहा और अतिसार को भी नाशक है। कुटज की गिरी, धनियाँ, कुटकी, नागरमोथा, पिपलामूल, सोंठ और पीपल के चूर्ण में छदाम भर का क्वाथ दोनों समय १० दिनतक पिलानेसे कफ-पित्त-ज्वर, शूल, मूर्छा और उल्टी सब दूर हो जाती है।

कुष्ट (कूठ या कूट)

संस्कृत–कुष्ट। हिन्दी–कूठ। मराठी–कोष्ठागु। गुजराती–कठ। फारसी–कोशनह। अरबी–कुश्तवहरी। तैलङ्ग–चंगल कुष्ठ अंग्रेजी–कास्टसरुद।

इसका सुगंधादिगुणमें पाठ है। परन्तु यह असल नहीं मिलता और सिन्धु नदीके किनारे होता है। इसका गुण गरम, कटु, स्वादु, शुक्र उत्पन्न-कर्ता कड़ुआ और हल्का, वात-रक्त, विसर्प, खाँसी, कुष्ट, वादी और कफ को नष्ट करनेवाला है। केवल जड़ प्रयोग में ली जाती है।

(१) कूट, मिर्च, सेंधानोन, पाठ और नागरमोथेका चूर्ण गलशुण्डी पर मलनेसे गलशुण्डी अच्छी हो जाती है।

दाँतों से रुधिर बन्द हो

कूट, धना सेंधानमक, खैरसार और सिका हुआ जीरा सबको खरल कर मंजन करने से दाँतों से रुधिर का प्रवाह बन्द हो जाता है।

झाईं की दवा

कूट, रक्तचन्दन, मजीठ, लोद, बड़के अंकुर और प्रियंगुको जल में पीसकर मुखपर लेप करे तो मुख पर की झावें श्यामलता दूर हो जावे।

केला

संस्कृत–कदली, वरणा, मोचा, अम्बुसार। हिन्दी–केला, केरा। मराठी–केल। गुजराती–केल्य। कर्नाटकी–कोवालेतव। तामिली–पाजम। अनपि–पसी। फारसी–पावजू।

कच्चा केला स्वादु, शीतल, विष्टंभी, कफ-नाशक, भारी, स्निग्ध, रक्त, पित्त, तृषा, दाह, क्षय, बृंहण, क्षुधा, तृष्णा रोग और प्रमेह रोग भी नष्ट करता है।

केलेका फूल चिकना, स्निग्ध, मधुर, कषैला शीतल रक्त-पित्त और क्षय को नाश करता है। केलेका मुख्य गुण दोषहीनता और हलकापन है। आँव गिरनेपर भी केलेकी तरकारी और पक्की फली खानी चाहिये। केलेके कोमल पत्तों पर सुलानेसे अतिदाहयुक्त पित्तज्वरसे पीड़ित रोगी को लाभ पहुँचता है।

खाँसी की दवा

केलेके पत्ते जलाकर उसकी राख थोड़ा नोन में मिलाकर नित्य दो-तीन बार खाया करे।

पेशाब की जलन दूर हो

केलेके वृक्षका रस निचोड़कर पीवे तो कड़क दूर हो।

केसर

केशरके पर्याय वाचक नाम कुंकुम, घुसृणा, वाल्हीक और रक्त वाचक जितने संस्कृत नाम हैं सब केशरके भी नाम हैं। हिन्दी–केशर। बंगला–कुंकुम। फारसी–जाफरान। अरबी–लरकीमास। ईरान–सेफरून।

काश्मीर, वाह्लीक (बलख) फारस, ग्रीक

(ईरान) देशोंमें केशर उत्पन्न होती है। इनमें जो केशर काश्मीरमें उत्पन्न होती है बहुत छोटे-छोटे बारीक बालोंके समान और कुछ-कुछ रक्त वर्ण तथा कमलकी गन्धके समान होती है। यह सब केशरोंसे उत्तम होती है। वाह्लीक अर्थात् बलख देशकी केशर पीले रंगकी और उसमें केतकी के फूलके समान सुगन्धि आती है। यह भी बारीक होती है। पर यह मध्यम कोटिकी केशर कही जाती है। फारस देशकी केशरकी गन्ध शहदके समान, गोली और इसके तंतु मोटे होते हैं। यह अधम केशर है।

केशर चरपरा, स्निग्ध, कड़वी, वमननाशक और वर्णको उज्वलकर्ता है।

मस्तकके रोग, व्रण, कृमि और मुखकी झाईं दूर करती है। मात्रा १ माशेकी होती है।

पाँव की जलन में

नागकेशरके सूखे हुये फलोंको पीसकर घी

के साथ मिलाकर दुखते हुये बवासीर तथा पैर तालुये में लगानेसे जलन दूर हो जाती है।

संधिवात के दर्द में

केशरकी छाल और जड़को पानीमें भिगोकर पीने से पाचन शक्ति बढ़ती है। इसके बीजोंके तेलसे संधि वात के दर्द दूर हो जाते हैं।

केसू

संस्कृत—पलाश, किंशुक, वर्ण यतिय, रक्त, पुष्पक, क्षार-श्रेष्ठ, वातहर, ब्रहन वृक्ष। हिन्दी—पलास, ढाक। मराठी—छोला केसूला। उड़िया—परोशु। गुजराती—खाखरो। कर्नाटी—मुत्तलु लैटिन—डाउनी ब्रच ब्युटिया विबहा।

यह गुणमें दीपन, बलकर्ता, दस्तावर, गरम, कषैला, चरपरा, कड़वा और स्निग्ध है। इसका वृक्ष बड़ा और टेढ़ा-मेढ़ा होता है। इसके जड़, पत्ते और लकड़ियाँ तथा फूल भी काम आते हैं। इसके बड़े-बड़े जंगल होते हैं। यह व्रण, गोले और गुदाके रोगको नष्ट करता तथा टूटे हाड़को भी जोड़ देता है। पलास की जड़ और लाल एरंडकी जड़को चावलके पानीमें पीसकर लेप करने से गलगंड रोग अच्छा होता है। पलासका बीज

और मूलरके पक्के फलको तिल्लीके तेलमें पीसकर २१ दिन लेप करने से फटी हुई भग गाढ़ी हो जाती है। पलास का फल, काहूकी छाल, नीमकी छाल, खैरसार और कुटकको घीमें पकाकर बालकको खिलाने और मर्दन करनेसे शीत पूतना ग्रहका दोष छूट जाता है।

कन्दरी (लहसन)

संस्कृत–लशुन, रसीन, उग्रगन्धा, महौषध, अरिष्ट; म्लेच्छ-कन्द, यवनेष्ट, रसानक। हिन्दी–लहसुन। मराठी–लासूण, पढिरी, कर्नाटकां–बिळियबेल्लुल्लि। तेलगू–तेलाउल्ली। गुजराती–लसन। अरबी–सम। फारसी–शोर। अंग्रेजी–गार्लीक। लैटिन आल्यमसटाइवम।



लहसुन—इसकी उत्पत्ति के सम्बन्धमें ऐसा कहा जाता है कि समुद्र मंथन के पश्चात् अमृत निकलते समय जब देवासुर संग्राम हुआ, तब उस समय गरुड़ अपनी चोंचमें अमृत कलशको पकड़ आकाश में उड़ चला। पर उस समय गरुड़ की बेहोशी में कलशसे एक बूँद अमृत छलककर पृथ्वी पर गिर पड़ा जिससे एक छोटा सा क्षुप उगकर खड़ा हो गया। कुछ काल पश्चात् १२ वर्ष का एक घोर अकाल पड़ा और पृथ्वी के पौधे रस-रहित हो गये, किन्तु एक यह क्षुप पौधा ज्योंका त्यों हरा-भरा बना रहा। एक वृद्ध ऋषि उसी पौधेको चबा-चबाकर अपना शरीर रक्षा कर रहे थे। शेष समस्त ऋषि दुःखी और अन्न जल तथा फल-फूलके न मिलने से त्रसित हो सुदूर देशों, बनों और पर्वत की गुफाओंमें भाग चले। जब दुर्भिक्ष व्यतीत होकर सुकाल आया, तब फिर सब ऋषि एकत्रित हुये। यह वृद्ध ऋषि भी उनमें जा पहुँचा। तब वार्तालापके प्रसंगमें ऋषियों को इस पौधे को

महत्ता ज्ञात हुई । इस कारण ईर्ष्यावश उन्होंने उस क्षुप को शाप दे दिया कि यह ब्राह्मण मात्र को अभक्ष्य हो जाय । बस यही कारण है जो लहसुन का खाना वर्जित हो गया । संसारमें जो परम छः रस हैं उनमें लहसुन ही एक ऐसा पदार्थ है जिसमें अकेलेमें ही पाँच रस विद्यमान हैं । केवल एक खट्टा रस इसमें नहीं है । इसकी जड़ में चरपरा रस, पत्तोंमें कड़वा रस, नालमें कषैला, नालके अग्र भाग में लवण रस और बीजों में मधुर रस विद्यमान हैं ।

हृदय रोगकी दवा

लहसुन का सेवन करने से हृदय के रोग, अजीर्ण, ज्वर, कोंखका दर्द, गुल्म, अरुचि, खाँसी, मन्दाग्नि, कफ और बादीका रोग नष्ट हो जाता है ।

कौआठोंडी

इसे संस्कृत में काकनासा, काकांगा, काक तुण्डफला, हिन्दी में कौआठोंडी, बंगला काकठूडी, म० पीर श्वेतकावली, का० वडिल कहुडली कहते हैं ।

यह गुणमें कषैली, गरम स्वादिष्ट और

पाकके समय चरपरी, कफघ्न, वमनकारक और कड़वी होती है।

प्रयोग—इससे सूजन, बवासीर और कुष्ठरोग अच्छा होता है। इसकी जड़ आदि ली जाती है, मात्रा १ माशेकी है।

कालादाना

इसे संस्कृत में कृष्णबीज, हिन्दी कालदाना, बंगला नाल कलमी, म० कालेदाने, फा० हब्बुलनील, अं० घेलब्लूइयामिया लाटिन–फारवाटिसलीन।



यह हिन्दुस्तानके उत्तरी खण्डकी तरफ एक प्रकारकी बेल होती है जिसके बीजको कालादाना

कहते हैं। इसकी खुराक छोटे बड़ेके अनुपातसे एक माशे से चार माशे तक का होती है। यह खासकर जुलाब लेनेके काममें आती है। इसके सेवनसे पेटमें पड़े कीड़े भी नष्ट हो जाते हैं। यदि इसका सत्त जुलाबके काममें लाना हो तो उसकी मात्रा ५ से १० ग्रेन तक होती है।

तिल्ली और जिगरकी सूजनमें

कालेदानेको बादामके तेलमें भुनकर खानेसे तिल्ली और जिगरके सूजनको आराम पहुँचता है।

खजुलीकी दवा

कालेदाने को कड़वे तेलमें जलाकर लगावे तो पुराने घाव, खुजली और गठिया का रोग अच्छा होता है।

कुष्ट (कोढ़) की दवा

कालेदाने को अकरकरा के साथ पीसकर कोढ़ पर लेप करनेसे कोढ़ नष्ट हो जाता है।

केवाँच

इसे संस्कृत में कपिकच्छू, आत्मागुप्ता, वृष्या, मर्कटी,

अजरा, कंड्डरा, व्यंगा, दुःस्पर्धा, प्रावृषापणो, लांगली और शूकशिंवी कहते हैं। हिन्दीमें कौंछ, किवांच, बं० आलकुशी, म० कुहिलीचेबीज, कपासकुहिरी, गु० कवचा, कौचा, तै० पिस्ली अडगु, ता० पुनार्दककालि, इं० कोहेज, ला० जेली-कीप्युविस् कहते हैं।

यह लता जातिकी बनस्पति है जो चातुर्मास्यमें बहुत होती है। इसकी दण्डी तीन पत्तेवाली होती है। इसका फूल काला जामुनके रंगका आकारमें केसूलाके फलसे मिलता हुआ झुग्गेदार होता है। फली एक डंडीमें दो और इमलीके कतारेके आकारसे कुछ-कुछ मिली हुई होती है। इसके पत्ते और फलके रुआँ देहमें लगनेसे बड़ी खुजली होने लगती है। इसकी फलोंमें इमलीके माफिक चींयाँ निकलते हैं। इनको कौंचके बीज कहते हैं।

गुणमें यह अत्यन्त वृष्य, मधुर, वृंहणी (पुष्टिकारक) गुरु, तिक्त, बातनाशक, बलकारी, कफनाशक, रक्तपित्त को शान्ति करता, व्रणदोष-नाशक और श्वास-कास निवारक है।

कौंच बादी को शान्ति करता, अत्यन्त बाजीकरण कर्ता है। प्रयोगमें इसकी जड़ पत्ते और बीज लिये जाते हैं। मात्रा दो माशे की है।

यूरोपियन डाक्टर—कौंच की जड़ को ज्ञान तन्तुओंकेलियेपुष्टकर्त्तामानते हैं तथालकवेकीबीमारीमें और पेटके कृमि निकालनेको फलीके ऊपरके बाल (रुआँ) शरबतमें मिलायके शहदके समान गाढ़ा करके बनाते हैं। परन्तु देशी वैद्य फलीके ऊपरके रुआँ का उपयोग नहीं करते।

वेस्ट इण्डियन टापुओंमें इस वृक्षकी जड़का क्वाथ पेशाब अधिक लानेवाला और गुरदे को साफ करनेवाला मानते हैं। तथा इसका मलहम बनाकर श्लीपद पर लेप करते हैं। पत्तों को नासूर पर लगाते हैं और बीज कामोत्तेजक हैं। यह कौंचका बीज बिच्छूके विषको दूर करता है।

कैथ

इसे संस्कृत में कपित्थ, दधित्थ, पुष्पफल, कपिप्रिय, दधिफल और दंतशक कहते हैं। हिन्दीमें कैथ, बंगला कयेतबेल, म०

कक्ठ, कंवठ, गु० कोठ, तै० एलांगकाया, का० बेलु, ला० फेरानियाँ एलफेटिगम्, इं० वुडस्पल।

इसका बड़ा भारी ऊँचा दरख्त होता है। इसके पत्ते एक इंच लम्बे तथा पौन इंचके लम्बाईमें गुलाई लिये होता है। डाली पर पत्ते एक-एक संख्यामें होते हैं। इसका फूल छोटा और सफेद तथा छूटी पाँच पंखड़ीवाले होते हैं। यह चूहेके जहर पर उपयोगी होते हैं। इसका फल नारंगीके बराबर कठोर गोल तथा मोटी छालका होता है। इसके भीतरका गूदा खट्टा और धानयके समान बहुत बीज होते हैं। इन बीजोंके भीतर सफेद मिंगी निकलती है।

गुणमें कच्चा कैथका फल ग्राही, कषैला, हलका और लेखन है। पका हुआ भारी, प्यास, हिचकी और बात-पित्त को नष्ट करनेवाला है तथा इसमें कषैलापन कम होता है। यह कण्ठका शोधन करता, ग्राही और दुर्जर है।

हिन्दुस्तानी वैद्य कैथके फल को ग्राही मानते

हैं तथा कच्चा फल दस्त और पेटके दर्दमें तथा पका फल मसूड़े और गलेकी सूजन पर देने की प्रशंसा करते हैं।

मुसलमानी हकीम कहते हैं कि, कैथके पत्ते और फल शीतल और पाचक तथा ऐंठन होनेको दूर करने के लिए तथा गलेकी सूजन उतारनेके लिए और दाँतोंके मसूड़े मजबूत करनेके लिए सेवन किये जाते हैं। इसके फलके गूदेका शर्बत पीने से भोजन की रुचि बढ़ती है। विष वाले जीवके डंकपर फलका गूदा अथवा छाल बाँधते हैं। कैथके वृक्षके गोंदको पीसकर शहद में मिलाकर देनेसे दस्त तथा मरोरा दूर होता है।

चरक संहिता में कैथको खट्टा और ग्राही माना गया है तथा पत्तों का रस अग्निदीपक और पाचक माना गया है।

कायफल

इसके कटुफल आदि नाम हैं।

इसका हिमालय की ओर बड़ा वृक्ष होता है।

इसकी छालको कायफल कहते हैं। इसकी छाल कड़वी, चरपरी और कषैली होती है।

इससे वात, कफ, ज्वर, खाँसी, श्वास, प्रमेह, कंठरोग, बवासीर और अरुचि रोग दूर होता है। इसकी मात्रा दो माशेकी है।

वात, कफ, ज्वर और खाँसीकी दवा

कायफल, देवदारु, भारंगी, नागरमोथा, धनियाँ, पित्तपापड़ा, हर्रकी छाल, शुंठी और कौंवाचकी जड़ समान भागके चूर्णमें से दो टके भरका क्वाथ पिलाओ तो उक्त रोग शीघ्र पलायन कर जावे।

सन्निपात यत्न

कायफल, पिपलामूल, इन्द्रयव, भारंगी, सोंठ, चिरायता, कालीमिर्च, पीपरि, काकड़ासिंगी, पोहकरमूल, रास्ना, दोनों कटाई, अजमोदा, कटीली बच, पाठ और चव्य समानका क्वाथ बनाकर पिलाओ तो सन्निपात के अतिरिक्त वस्तु अज्ञान (किसी वस्तु का ज्ञान न रहना)

पसीनाकी अधिकाई, शीत, उदरशूल, अफरा, वात और कफके सर्व रोग इस क्वाथसे नष्ट होंगे।

कस्तूरी

इनके मृगनाभि आदि नाम हैं। फा० और इं० में इसे मुश्क कहते हैं। यह कामरू देशकी काले रंग की अच्छी होती है। नैपाल की नीले रंगकी मध्यम होती है। काश्मीरकी भूरे रंगकी और मध्यम होती है। इसके पाँच भेद हैं। १ खारिका, २ तिलका ३ कुलत्था, ४ पिंडिका, ५ नायका।

इसमें खरिका चूर्णके समान, तिलका तिलके वृक्षके समान, कुलत्था कुलथीके बीजके समान। कुलत्थासे मोटी पिंडिका, पिंडिकासे मोटी नायका होती है।

इसकी परीक्षा यह है कि स्वादमें कडुवा और रंग पीला केतकीके फूल की सी सुगन्धि वाली, जलमें डालनेसे जिसका रंग न पलटे, तौलमें हल्की ऐसी कस्तूरी राजाओंके योग्य होती है और अच्छी समझी जाती है।

गुणमें यह कटु, तिक्त रस, क्षारयुक्त, उष्ण-वीर्य, वीर्यवर्द्धक और भारी है तथा वात, कफ, वमन, दुर्गन्ध, विषदोष और शीतनाशक है और पसीना लानेवाली, कामवेगको बढ़ानेवाली, कुछ मद करनेवाली, मूत्रको उत्पन्न करनेवाली होती है। इसकी मात्रा आधी रत्ती से दो रत्ती तकका है। इसका अवगुण चन्दन और तबाखीर से दूर होता है। इसके न मिलनेपर अम्बर लेना चाहिये। नकलीकी परीक्षा यह है कि उसको हथेलीपर रखकर पानी डाले, यदि रंग उस पानीका लाल और पीला हो जाय तो उसे नकली बनी हुई जानना तथा जो चिकनी हो, जिसके धुएँ में गन्ध हो, कपड़ेमें बाँधनेसे कपड़ा पीला पड़ जाय, आगमें डालनेसे तुरंत जल जाये, तौलमें भारी हो, भीजनेसे रूखी हो जाय—ऐसी कस्तूरी बनावटी होती है और लता कस्तूरी जिसको मुश्कदाना,

वेदमुश्क कहते हैं, वह नेत्रोंको विशेष हितकारी है। प्रयोगमें इसके बीज लिये जाते हैं।

कुटकी

इसके तिक्ता आदि नाम हैं। बं० कटकी, म० केदार कुटकी गु० कडु० फा० खर्वके सियाह, ला० मासपाह करोंआ है।

गुणमें यह ठण्डी, रूखी और पाकमें कड़वी और हलकी है। यह जठराग्निको प्रदीप्त करती और हृदयको हितकारी है। कफ, पित्त, ज्वर, वात, कुष्ट, श्वास, प्रमेह, रुधिर-विकार और कृमिरोगको हरण करनेवाली है। इसकी मात्रा दो माशेकी है।

वात, पित्त-ज्वरमें

कुटकी, किरवारेकी गिरी, नागरमोथा, हर्रकी छाल और पित्तपापड़ा, छदाम-छदाम भरका क्वाथ बनाकर पिये तो उक्त ज्वर, दाह, प्रलाप (बकवाद) मूर्च्छा सबका नाश होवे। यह वैद्य विनोदमें लिखा है।

मल ज्वर

कुटकी, पिपलामूल, नागरमोथा हर्रकी

छाल और किरमालेका गूदा, समानके चूर्णमेंसे दो टंकका क्वाथ बनाकर पिलाओ तो उक्त ज्वर अच्छा हो जाय।

कूष्माण्ड (कुम्हड़ा-काशीफल)

इसे संस्कृतमें कूष्माण्ड, पुष्पफल और वृहत्फल कहते हैं। हिन्दीमें पेठा, कुम्हड़ा, कोंहड़ा, काशीफल। बं० साचि कुम्हड़ा; म० कोहोळा; पदकोला, तै० पुल्लाहा, का० दारकोहला, उड़ि० करबारू, अ० महद्धेवा, फा० भूरा कद्दू और इङ्गलिशमें पंपकीन कहते हैं।

यह वीर्यवर्द्धक, वृष्य, भारी, पित्त और रुधिर विकारको दूर करनेवाला है। कच्चा कुम्हड़ा पित्तनाशक, शीतल और अधकच्चा कफकारी एवं पका हुआ कोंहड़ा अत्यन्त शीतल है। यह स्वादुयुक्त, क्षारयुक्त, दीपन, हल्का, वस्तिशोधक, मानसिक रोग (अपस्मार, उन्मत्तता आदि) को दूर कर्ता तथा सर्व दोष हरणकर्ता है।

नकसीर नाकसे रक्त गिरनेकी दवा

श्वेत कूष्माण्ड (भूरा कुम्हड़ा) को छीलकर

सब बीज निकालकर मृत्तिकाके पात्रमें डालके जलसे पकाओ। पकने पर ठंढा करके गाढ़े वस्त्रसे छानलो जिससे पानी निकलकर शुद्ध पेठा रह जाय। उसे घीके साथ कड़ाहमें डालकर मन्द-मन्द आँच से तल डालो। इसके छाने हुए जलमें (जो पहले छानकर धरा था, मिश्री की चासनी बनाकर उसमें वह पेठा जो तलकर धरा है) डाल दो तथा उसीके साथ ही २ टके भर पिप्पली, २ टके भर सोंठ, २ टके भर जीरा, २ टके भर धनियाँ, टंक पत्रज, २ टंक इलायची और ५ टंक वंशलोचनका महीन पिसा हुआ चूर्ण और पावभर मधु डालकर रखलो। अब यह कूष्माण्डावलेह प्रस्तुत हो गया। यदि इसको नित्य १ या २ टंक खिलाओ तो रक्त पित्तज्वर, दाह, प्यास, प्रदर, क्षीणता, वमन, स्वरभंग, श्वाँस, कास और क्षय ये सर्व रोग दूर होंगे। श्वेतके अभावमें पका हुआ पीत कूष्माण्ड भी उपयोगमें ला सकते हैं।

कूष्माण्ड (पेठा) पाक

पके सफेद पेठेका गूदा पाव सेर दूने जलमें डालकर मन्दी आंचसे गलावे। आधा जल रहने पर निचोड़ डाले। फिर धूपमें सुखाकर पिट्ठी बनावे। तीन पाव घी डालकर उसे फिर भूने। जब लाल रंगकी हो जाय, तब उसमें औषधि डालकर, पीपलि, सोंठ, जीरा, दो-दो टके भर धनियाँ, तेजपात, इलायची, कालीमिर्च, दालचीनी, यह सब एक एक तोला। फिर ५ सेर मिश्रीको चासनीमें डालकर पाक बनावे और डेढ़ पाव शहद डाले। चाँदीके वर्क तीन माशा हों। यह पाक नित्य १ छटाँक खानेसे क्षयी, क्षीणता, रक्तपित्त, प्रदर, वीर्यविकार और क्लीबता आदि रोगोंका नाश करता है। शरीर पुष्ट रहता है।

कद्दू

इसे संस्कृतमें अलावू या तुम्वी कहते हैं। यह दो प्रकार की होती है। एक लम्बी और दूसरी गोल। हि० तूंबा, कद्दू, लौआ। बं० लाउ, म० भोपला। गु० हुधी। तै० तीयातु, खंडीकाया,

का० कडंउवलकाई, फा० कुटुशिरन। इं० हाईट गुड कहते हैं।

मीठी तुम्बीके पत्ते हृदयको हितकारी, पित्त-कफके नाशक, भारी, वृष्य, रुचिकारी और धातु-पुष्टिकर्ता हैं। दूसरी कड़वी तुम्बी—शीतल, पित्त, खाँसी और विषको दूर करनेवाली है।

आधीशीशी (अधकपारी) की दवा

कद्दूके टूक छीलकर मस्तक पर रखना गुण करता है।

गर्मीकी मस्तक पीड़ामें

छिले हुए कद्दूके बीज, ईसबगोल, बनफल, खतमीके बीज और नीलोफर पानीमें औटाकर तर्रा देनेके पश्चात् ही अच्छा होता है।

कद्दूका तेल जनून, पागलपन और मृगी रोगमें लाभदायक है।

करेरुआ

इसे संस्कृतमें डोडिका, विषमष्टि, डोडी और सुमिष्टका कहते हैं। हिन्दी करेरुआ, गु० खरबाली।

यह गुणमें पुष्टिकर, वृष्य, रुचिकारी, जठरा-

अग्निवर्द्धक, हल्का, पित्त, कफ, बवासीर, कृमि, गोला और विषके रोगोंको दूर करता है।

खजूर

इसे संस्कृतमें भूमि खर्जूरिका, स्वामी, दुरारोहा, मृदुच्छदा, स्कंधफला, काककर्कटी और स्वादुमस्तका कहते हैं। बं० खेजूर, म० शिंदी, का० ईचिलु, तै० ईंटाचेट्टु, फा० खुर्मा, अ० तमरसतव, अं० डेट्पाम।

यह काबुल आदि देशोंमें उत्पन्न होती है। छुहारा नामक एक खजूर की और जाति होती है। इसकी आकृति गौके थनोंके आकारकी होती है। इसको परद्वीप अर्थात अरब आदि देशोंसे लाते हैं। इस प्रकार यह खजूर तीन जाति की होती है और तीनों प्रकारका खजूर शीतल, मधुर, स्निग्ध, रुचिकारी, हृदयको हितकारी, भारी, तृप्तिकर्ता, पुष्टिकारी, विष्टंभी, शुक्रकर्ता, बलकारी, वमननिवारक और वात, कफनाशक हैं।

प्रयोग—यह घाव, क्षय, रक्तपित्त, कोठा, भ्रम, बादी, ज्वरातिसार, खाँसी, श्वास, मद,

मूर्छा, मद्यपानजनित रोग एवं भूख और प्यासको दूर करती है। बड़ी खजूरकी अपेक्षा छोटी खजूर के गुण अल्प हैं।

खिरनी

इसे संस्कृतमें राजायन, फलाध्यक्ष, राजन्या और क्षीरिका कहते हैं। हिन्दीमें खिरनी, खिन्नी, बं० क्षीरखेजूर, म० राजणी, गु० रायण, का० खेणेभारिले, ता० पल्ल, इं० ओवट् पुस्लीक माईमुसोप्स।

यह वृषण, बलकारी, स्निग्ध, शीतल, भारी तृषा, मूर्छा, मद, भ्रान्ति, क्षय, त्रिदोष और रुधिर विकार को दूर करनेवाली है।

केसारी

इसे संस्कृत में त्रिपूट और खंडिक कहते हैं हिन्दीमें खेसारी, म० लांक, लाग, अ० हबुल बकर और अं० मेंचिकिलिर वेच कहते हैं।

गुणमें यह मधुर, कड़वी, कषैली, अत्यन्त रूक्ष, कफ, पित्त हरण करनेवाली, रुचिकारी ग्राहक और शीतल है। किन्तु यह अत्यन्त वात कुपित करनेवाली है। यदि इसको अधिक दिन

तक खावे तो यह खंजः और पंगु बना देता है।

खस (उशीर)

इसके उशीर आदि नाम हैं।

यह बीरण वृक्षकी जड़ है। यह शीतल, पाचक, वायु, तिक्त और मधुर रसयुक्त है। यह वमन, ज्वर, मत्तता, पित्त, प्यास, कफ, रुधिर विकार, विसर्प, दाह और सुजाक आदिको दूर करता है। इसकी मात्रा दो माशेकी है।

उरुस्तम्भ और वात रोगकी दवा

खसका रस या नीबूका रस मधु या गड़के साथ पिलाओ तो गुणकारी होगा। यह काशीनाथ पद्धतिमें लिखा है।

पित्तज्वर में

यदि पित्तज्वर अति दाहयुक्त हो तो रोगी को खस की टट्टियोंकी शीतलतामें रक्खो।

रक्तपित्त राजरोग में

खस, कमलगट्टा, अड़ूसा, गुरवेल, मुलहठी, महुआ, नागरमोथा, रक्तचन्दन और धनियाँक

दो टंक चूर्णका क्वाथ मधुके साथ पिलाना चाहिये।

खर्बूजा

संस्कृत में इसके दशांगुल, खर्बूजा ये नाम हैं। हिं० खर्बूजा, बं० खरमूँजा, म० खर्बुज, फा० बितीख, इं० कुक्यूमिसमेलो, ला० मेलन।

खर्बूजा मूत्र लानेवाला, बलकारी, कोठेको शुद्धकर्ता, भारी, स्निग्ध, स्वादुतर, शीतल, वृष्ण, पित्त और वातनाशक है। इसमें जो खर्बूजा रस में खट्टा, मीठा और खारा होता है वह रक्तपित्त कर्ता और घोर मूत्रकृच्छ्र कर्ता है।

खीरा

संस्कृतमें इसके त्रपुस, कंटकिफल, सुधावास और सुशीतल ये नाम हैं। हिं० खीरा, बालमखीरा, बं० समा० म० काकड़ी, गु० तांसलि, का० बसेयकाथि, ता० महेबे, हरिकोंकड़ो, फा० शियारखुद कहते हैं।

खीरा हल्का, स्वादिष्ट, शीतल होता है। नवीन अवस्थाका खीरा नील रंगका होता है तथा तृषा, दाह, पित्त और रक्तपित्त का हरण-

कर्ता कहा गया है तथा पका हुआ खीरा खट्टा-गरम पित्तकर्ता और वातनाशक है।

खीरेके बीज—मूत्र लानेवाले, शीतल, रूक्ष, पित्त, रक्तविकार और मूत्रकृच्छ्रको दूर करनेवाला है।

खसखस

इसके खसबीज आदि नाम हैं।



यह बहुत भारी, कफनाशक, बलकारक, वातनाशक धातुशोषक, रूक्ष और मदकारक है। इसका अधिक सेवन करनेसे पुरुषत्व नष्ट होजाता है।

खेखसा (ककोड़ा)

संस्कृतमें इसे कर्कोटकी, पीतपुष्पा और महाजाली कहते हैं। हिन्दी खेखसा। ककोड़ा; बं० काकरोग, गु० कंटोला, तै० अगोखर कहते हैं।

गुण—ककोड़े मलको हरण करनेवाले, कोढ़, हुल्लास, अरुचि, श्वास, खाँसी और ज्वर का हरणकर्ता है। यह पाकमें कटु और दीपन कर्ता है।

गदहपूर्ना

संस्कृतमें इसको रक्तपुनर्नवा, रक्तपुष्पा, शिलाठिका, शोथघ्नि, क्षुद्रवर्षाभू, वृषकेतु और कपिल्लक कहते हैं। हिन्दी सोंठ, गदहपूर्ना, बं० लाल पुनर्नवा, म० तावडीघेंटुली, का० केंपिनवेलडकिलु, करियमणजिले, गु० रोतीसाटोडी।

इसके पत्ते चौलाई शाकके समान होते हैं। फूल लाल रंगका होता है। यह कंकरीली जमीन में बहुत होती है और गुणमें कड़वी, पाकमें चरपरी, शीतल, हल्का, वातकर्ता और ग्राही है। कफ और रक्तपित्तको दूर करनेवाली है। प्रयोग में समस्त अंश लेवे। मात्रा दो माशेकी है। यह श्वेत, लाल और पीली तीन प्रकारकी होती है।

गाजर

संस्कृतमें इसको भल्लातक, अरुष्कर, अग्निक, अग्निमुखी, भल्ली, वारवृक्ष और शोककृत कहते हैं। हिन्दी गाजर।

गुणमें—यह मधुर (मीठी) रुचिकारी,

किंचिन्मात्र चरपरी, कफनाशक, अफरा, कृमि, शूल, दाह, पित्त और तृषा आदिको दूर करने वाली है।



आधाशीशी की दवा

गाजरको पत्तियोंमें घी लगाकर तावे पर गर्म करके उसका रस निचोड़कर कानमें टपकावे। नाकमें भी दो तीन बूँद डाले। छींक बहुत आवेगी और आधाशीशी भी दूर हो जावेगी।

गजपीपल

चव्यके फलको गजपीपल कहते हैं। संस्कृतमें इसको कपि-

वल्ली, काकवल्ली, श्रेयसी, वशिर और गजकृष्णा कहते हैं। हिं० गजलोपल, गु० गजपीपली, बं० गजपीपुल, म० मोठेलाली, मोठीपिंपला, का० गजपिप्पुली, तै० पेद्दापिप्पुल, लै० सीडापसस आफिसीनेलिस कहते हैं।

गजपीपल—चर्परी, बात कफ नाशक, अग्नि-वर्द्धक और गरम है। अतिसार, श्वास, कंठरोग और कृमिनाशक है। इसके फल की ६ रत्ती की मात्रा है।

आमवात की दवा

गजपीपल, पीपलामूल, चित्रक, सोंठ, मिर्च, सम्भालू, इलायची, अजमोद, सरसों, पाठ, सिकी हींग, भारंगी, बकायन, इन्द्रयव, जीरा, मूर्वा, अतीस, कुटकी और वायबिडङ्ग इनका दो टंक चूर्ण गरम जलके साथ देनेसे गुल्म शूल आम और वातके समस्त रोग दूर होते और क्षुधाकी तृप्ति होती है।

गावजुबाँ

गावजुबाँ एक प्रकारकी घासका पत्ता है जो हरा सुफेद और बिन्दीदार होता है। स्वादमें

यह कषैला और चरपरा होता है। इसका पत्ता चित्तको प्रसन्न करता, शरीरको गरमीको दूर करता, प्रकृतिको कोमल करता, पित्तको पाखानेके रास्ते बाहर निकालता, छातीकी खसखसाहट, जकड़ और खाँसीको दूर करता है।

इसका फूल काले और लाजवरदी रंगका होता है जो स्वादमें कषैला और फीका लगता है। यह अनारके फूलकी तरह है; पर उससे बहुत छोटा होता है। इसके सेवनसे चित्त प्रसन्न होता, स्मरण-शक्ति बढ़ती, पित्त विकार दूर होता तथा उन्माद और प्यासको शान्त करता एवं कामलाको लाभकारी है।

इसका बीज सफेद होता है जो स्वादमें लसीला तथा फीका होता है। यह कुसुमके बीजके समान पर उससे छोटा होता है। यह गावजुबाँसे अधिक लाभदायक है।

गाँजा

संस्कृत—भंगा, गंजा, मातुलानी, मादिनी, विजया

जया । हिन्दीमें भाँग, गाँजा। बंगला-सिद्धि, भाँग, गाँजा। मराठी-भाँग, गाँजा । गुजराती-गाँजा, चरस। फारसी-कनवजुज व वस्ठल रकाल । लैटिन-कनेबिस इन्डिका और अंगरेजी-इन्डियन हेम्प । एकही तरहके वृक्षसे गाँजा, भाँग और चरस तीनों की उत्पत्ति है।

गाँजा अग्निवर्द्धक, बलकारक, कामोद्दीपक और पीड़ा निवारक है। कुत्ते और स्यारके काटने पर लाभदायक है। गाँजे का सत्त निकलता है जो गाँजे ही के समान होता है जिसे चरस कहते हैं। गाँजेके बीजोंका तेल पानीमें खानेसे ज्वर, खाँसी और तिजारी रोग नष्ट हो जाता है। भाँग भी इसी को कहते हैं। भाँग खानेसे अजीर्ण रोग दूर होता है।

गिलोय

संस्कृत—गुडुची, मधुपर्णी, अमृतबल्लरी, छिन्ना, छिन्न रुहा, जीवती, सोना। हिन्दी-गिलोय, गुरुच। बंगला-गुलाब। मराठी गुल्वेल, गरुडवेल, गरोल। कर्नाटकी-श्रमदरबल्ली। गुजराती—गलो। तामिली-सिंदा लकोदी । तेलगू-तिप्यतिगा । फारसी-गलो । अंगरेजी—गुलाँचा । लैटिन-टिनोस्पोरेकाडिफालिया।

गिलोयकी बेल पीपलके पत्तोंके समान होती

है, इसके कोने अधिक निकले होते हैं और यह एक प्रकारकी लता वृक्ष है जो बड़े-बड़े वृक्षों पर चढ़ी होती है। इसका चढ़ाव नीम पर अधिक होता है और नीम चढ़ी ही गिलोय उत्तम होती है। इसीसे इसे नीम चढ़ी भी कहा है। वर्षाकाल में यह फूलती है। इसके पत्ते अधिक हरे होते हैं। फल चनेके बराबर गुच्छेदार और हरे रंगके होते हैं। पर पकने पर काले रंगके हो जाते हैं। ग्रीष्म और शरद्कालमें इसमें पत्ते और फल एक भी नहीं रहते।

गिलोय मधुर, कड़वी, पकनेके समय स्वादु रसवाली, ग्राहक, कषैली, हल्की और बलकारी होती है। आम, तृषादाह, धातुक्षीणता, खाँसी, पाण्डुरोग, कामला, कोढ़, श्वास, बवासीर, मूत्रकृच्छ्र, हृदयरोग और बादीको भी यह नष्ट करनेवाली है।

गिलोयका सत्त भी बनता है:—

(१) विधि—गिलोयके छोटे-छोटे टुकड़े कतर के कूट डाले। फिर जलमें डाल कर चलनीसे

छान ले। फिर इसे मथ कर किसी चौरस लोहेके पात्रमें भरकर रख देवे। दूसरे दिन उस जलको सावधानी से निकालकर उसको सुखा लेवे। बस सत्त तैयार हो गया।

(२) गुरुच ३ मा०, नीमकी छाल ३ मा०, लाल चन्दन ३ मा०, धनियाँ ३ मा० पद्माक्ष ३ मा०, सबको कूटकर काढ़ा करके पीनेसे कफका ज्वर दूर हो जाता है।

(३) गिलोय (गुरुच) ३ मा०, पित्त-पापड़ा ३ मा०, नागरमोथा ३ मा०, चिरायता ३ मा०, सोंठ ३ मा० इन सबका काढ़ा करके १० दिन पिलानेसे वात-पित्त ज्वर शान्त हो जाता है।

(४) गिलोय (गुरुच) नीमकी छाल, छड़, कपासकी छाल दोनों पीपल, खरैटी और देवदारु, के क्वाथको तेलमें पकाकर वह तेल पन्द्रह दिन पिलानेसे गलगंड रोग शान्त हो जाता है।

(५) गिलोय, रक्तचन्दन, सोंठ, कमलतंतु, कायफल और दारु हल्दी समान भाग लेकर

छदाम भर चूरेका क्वाथ १० दिन तक पिलाओ तो कफ-पित्त ज्वर दूर हो।

(६) गिलोय, इन्द्रजौ, नीमकी छाल, पटोल, कुटकी, सोंठ, अगर, चन्दन, नागरमोथा और पीपलका तुल्य भाग लेकर चूर्ण कर ४ माशे प्रतिदिन अष्टावशेष जलके साथ पिलाओ तो कफ, ज्वर, खाँसी दूर हो।

सेवतीगुलाब

संस्कृत—शतपत्री, तरुणी कणिका, चारुकेशरा, महाकुमारी' गन्धाढ्या लाक्षा, कृष्ण अतिमंजुला। हिन्दी—गुलाब, सेवती। फारसी—गुलसुर्ख। अरबी—वर्ग, अहमर। कर्नाटकी—चेवड़े। अंगरेजी—रोज।

गुलाब—शीतल, हृदयको हितकारी, शुक्र-जनक, हल्का, त्रिदोषनाशक और रुधिरविकार को दूर करने वाला तथा शरीर के रंग को भी उज्वल करने वाला है। स्वादमें कड़वास और चर्परा तथा पाचक है। गुलाबमें हल किया हुआ सुर्मा नेत्रोंको हितकर है। गुलाबका तेल मर्दन करने से दाहयुक्त पित्त-ज्वर नष्ट हो जाता है।

मुँह आनेपर

गुलाब और कुलफेके पत्ते चबावे तो गर्मीकी सोजिशजुबाँ दूर होवे।

गूलर

इसे संस्कृतमें उदुंबर, जन्तुफल, यज्ञांग, हेमदुग्धक। हिन्दी—गूलर ऊमरा; बं० यज्ञडुमुर, म० उबर, फा० अंजारे आदम, लै० फाइकूसग्लोमिरेटा कहते हैं।

गूलरका वृक्ष बड़ा होता है। इसके पत्ते महुआके समान किन्तु उससे कुछ छोटे और दूसरी पृष्ठ पर कुछ खुरखुरापन लिये होते हैं। इसकी लकड़ी यज्ञके प्रयोगमें भी आती है। फल खाया जाता है। परन्तु फल कृमिकारक, कफकारक होते हैं। किन्तु रुधिर विकार, पित्त, दाह, क्षुधा, प्यास और थकावट को भी दूर करनेवाले होते हैं। सूखीखाँसी और जकड़को भी लाभ पहुँचाते हैं।

प्रदरकी दवा

गूलरके सूखे फलोंका चूर्ण, मिश्री और मधु-में सानकर टके भरकी गोलियाँ बना ले और एक

गोला नित्य ७ दिन खानेसे प्रदर रोग अच्छा हो जाता है।

नासूरकी दवा

गूलरके दूधमें फाया भिगोकर घाव पर रक्खे और कुछ काल पर्यन्त इसी प्रकार करे तो नासूर और भगंदर को गुण करे।

तथा—गूलरके वृक्षकी छाल पानीमें पीसकर तालुवे पर लगावें।

खूनी बवासीरमें

सूखे तथा हरे गूलर पानीमें पीसकर मिश्री मिलाकर पियें तो रुधिर की उल्टी और रुधिरके दस्त को बवासीर और स्त्री धमके रुधिर को अच्छा करता है।

शरीरके श्वेत दागों की दवा

गूलरकी छाल लालाके बीज दोनों बराबर कूट छानकर पानीसे ४० दिन फाँके तो उक्त रोग अच्छा हो जावे।

श्वेतप्रदर की दवा

दो तोला भर कच्चा गूलर कुचल कर उसमें

दो तोला शहद दो तोला मिश्री पीसकर मिलावे और पोड़िया बनाकर खावे। ऊपरसे बिना रोग-वाली गाय का आधा पाव दूध पीवे तो श्वेत-प्रदर दूर हो।

इसप्रकार गूलरके अनेक गुण हैं और इससे अनेक रोगोंकी चिकित्सा होती है लिखा जाय तो एक अलग पुस्तक बन सकती है।

गूमा

संस्कृतमें इसे द्राणा, द्रोणपुष्पी, फलपुष्पी कहते हैं। हिन्दी—गोमा, गूमा। बंगला—गलघसिया। मराठी—तुव। तो-गयल चेट। गुजराती—कुब।

गूमा—गुरु, स्वादु, रुक्ष, गरम, बात, पित्त-कर्त्ता, रसयुक्त, पाकमें स्वादिष्ट, कटु और दस्ता-वर है। साथ ही यह कफ, आम, कामला, सूजन, तमक, श्वास और कीटादिको दूर करनेवाला है। इसका सर्वाङ्ग लिया जाता है।

यह एक क्षुप जातिका पौधा है जो गुच्छे-दार और गठीला होता है। इसका फूल श्वेत

रंगका होता है और इसके भीतर बीज होते हैं। इसके रसकी मात्रा दो तोले की होती है।

गोरखमुण्डी

संस्कृतमें इसे मुण्डी, भिक्षु, श्रावणी, तपोधना, श्रावणाह्वा, मुण्डीतिका, श्रवणशीर्षका कहते है। हिन्दी—गोरखमुण्डी। बंगला—मुंडरी, भुईकदम। कर्नाटी—कियोबोलतर, तेलगू—बात्रसर पुचेट्टु। तामिली—कोदल। अरबी—कमादुरयूस। लैटिन—स्फिरेन्थस इण्डिकम कहते हैं।

यह एक प्रसर जातिकी बूटी है जो बहुधा काली पृथ्वी पर जल-स्थानमें अधिक होती है। इसका छत्ता पृथ्वीमें फैला हुआ रहता है। फूल गोल और कनेरी रंग का होता है।

यह पाकमें कड़वी, उष्ण वीर्य, मधुर, हल्की और स्मरण शक्तिवर्धक है। मूत्रकृच्छ्र, कृमिरोग, योनिरोग, पाण्डु और अरुचि आदी रोगों में यह विशेष लाभ पहुँचाता है। वृक्ष का सर्वाङ्ग लिया जाता है। मुण्डीका अर्क भी निकाला जाता है। जो खूनको साफ करता और शरीरके समस्त विकारों को दूर कर बलवान बनाता है।

गेंदा

संस्कृतमें इसे पद्मचारिणी, अतिचरा, अव्यथा, पद्मा, शारदा गेंद कहते हैं। गेंदे का फूल पीला, लाल और सफेद रंग का होता है।

वृक्ष दो हाथसे अधिक लम्बा नहीं होता। किसीके डंठल सुफेद और किसीके लाल रंगके भी होते हैं। गुणमें सब एक समान। मूत्रकृच्छ्, पथरी, शूल, श्वास और विषके विकारोंमें इसका अच्छा प्रयोग किया जाता है। यह कटु, तिक्त, कषाय और वात पित्त का हरणकर्ता है। गेंदेके पत्तेका अर्क कानमें डालनेसे कानका दर्द बन्द हो जाता है। जिस स्त्रीके स्तनोंमें अकारण अथवा खाज आदिसे सूजन आ गई हो तो उस पर गेंदे के पत्तोंका रस मलना चाहिये।

(१) गेंदाके फूलोंका अर्क बवासीरको गण करता है। पाव सेर गेंदाकी पंखड़ी दो सेर केलेकी जड़के अर्कमें रातको भिगो देवे और प्रातः काल अर्क खींच ले। दो तोले सायंकालके समय पीवे तो बवासीर का रोग दूर होवे।

गोभी

संस्कृत–गोजिह्वा, गोजिका, गोभी, दार्विका, खरपिणनी। हिन्दी–गोभी। बंगला–गोजया। मराठी–पाथरी। कर्नाटकी–पनुनालेगा। गुजराती–यलजमी, भापाथरी।

गोभीके पत्ते लम्बे होते हैं और पत्तोंके बीच-में एक बड़ा पीले रंगका बँधा हुआ फूल होता है। जो शाकके काम आता है। गोभीका शाक प्रसिद्ध और उत्तम है।

यह वातल, शीतल, कफ पित्त नाशक और हृदयको हितकारी है। गोभी पाकमें स्वादिष्ट और स्वादमें कषैली और कड़वी है। प्रमेह, खाँसी, रुधिर विकार, व्रण और ज्वरको भी दूर करती है।

गोखरू

संस्कृत—गोक्षुर, क्षुरक, त्रिकंटक, स्वादुकंटक, गोकंटक, गोक्षुरक, वनशृङ्गाट। हिन्दी–गोखरू। बंगला–गोक्षुरी। मराठी–गोखरू। कर्नाटकी–दाइनेग्गलु। तेलगू–पालेरु। गुजराती–गोखरू। अरबी–बजर, उलखळक। फारसी–तुख्म खारखसक।

गोखरू दो प्रकार का होता है। एक बड़ा और एक छोटा। इसके पत्ते इमलीके समान छोटे-

छोटे होते हैं और डालियों में रुआँ तथा थोड़े २ अन्तर पर गाँठे होती हैं। इन्हीं गाँठों पर से पत्ते और फूल निकलते हैं। फूल सौंफके समान और पीले रंगके होते हैं। फल छोटे, गोल तथा काँटेदार होते हैं। प्रत्येक फल की बाजू पर पाँच-पाँच कँगूरे और उन कँगूरों पर दो-दो कोर तथा भीतर एक बीज होता है। गोखरू शीतल, स्वादु, बलकारक, बस्तिशोधक, मधुर, दीपक, शुक्रजनक वायुनाशक और पुष्टिवर्द्धक है। प्रमेह, पथरी, श्वाँस, खाँसी, बवासीर और कठिन हृदय के रोगों को भी यह अच्छा कर देता है। आँख के प्रयोग में इसका पंचांग आता है।

(१) गोखरू, अधोपुष्पी, खरेंटी, दारुहल्दी, पृष्टपर्णी, इन्द्रयव, सलाई के फूल, बड़ के अंकुर, गूलर के अंकुर और पीपल के कोमल पत्ते, सबको दो-दो टंक भर लेकर कूटकर चूर्ण बना ले। नित्य दो टंक चूर्ण का क्वाथ बनाकर पीनेसे बवासीर का रोग नष्ट हो जाता है।

(२) गोखरूके क्वाथमें जवाखार डालकर पिलाने से मूत्रकृच्छ् का रोग अच्छा हो जाता है।

(३)गोखरू कूटछानकर चूरा करे, गोघृत और शहद मिलाकर खावे तो स्त्रीगमन की शक्ति बढ़े।

ग्वारपाठा—(घी कुवार)

संस्कृत—कुमारी, गृहकन्या, घृतकुमारिका । हिन्दी—घीकुवार, क्वारपाठा, बंगला—घृतकुमारी । मराठी—काकाड । गुजराती—कुचार । तेलगू—पिन्नगोराटकलबन्द । फारसी—दरखतेखिन्न । अरबी—मुसब्बर । लैटिन—एलोय इण्डिका ।

यह एक क्षुप जातिकी वनस्पति है। जलके तट पर यह अधिक होती है। इसके पत्ते लम्बे और दोनों किनारे पर कँटीले होते हैं। पत्ते का सिर अनीदार होता है। इसका फूल लाल रंगका गुच्छेदार होता है और पत्ते के भीतर ही मोटे दलका सफेद और लुआबदार गूदा होता है जो बहुत ठण्डा होता है। मस्तककी गर्मीमें यह गूदा निकाल कर मस्तक पर रखा जाता है। गुल्म रोग, प्लीहा, कफ, ज्वर, बिस्फोटक, रक्त, पित्त

और त्वचाके रोगमें इसका प्रयोग अत्यन्त लाभ-दायक होता है।

विभिन्न रोगों की विभिन्न दवाइयाँ

(१) घी कुवारका गूदा और आमिया हल्दीके लेप से हर प्रकारकी सूजन जाती रहती है।

(२) इन्हीं दोनों के योग से दुखती हुई आँख का दर्द भी दूर होता है।

(३) नेत्र में चाहे कैसा भी दर्द हो केवल ग्वारपाठेका अर्क लगानेसे नत्रोंकी पोड़ा दूर हो जाती है।

(४) ग्वारपाठेका गूदा पीसकर सोते समय कानमें टपकावे तो नेत्रोंके रोग दूर होवें।

(५) ग्वारपाठे को दो टूक करके थोड़ी रसौत और हल्दी गरम करके बाँधे तो फोड़ा बैठ जावे या पकाकर फोड़ देवे।

(६) ग्वारपाठे के रस में सोंठ डालकर खिलाओ तो हिचकी दूर हो।

(७) ग्वारपाठेका रस आँखमें टपकाकर सो रहे तो ढलका अच्छा हो जावे।

बादीके रोग की दवा

ग्वारपाठका रस १ सेर, गायका दूध २ सेर, मिश्री १ पाव, दालचीनी डेढ़ तोला। पहले ग्वारपाठेको दूध में छोड़कर तीन उफान देवे और मिश्री, दालचीनी मिलाकर औटावे। फिर गायका घी आध सेर मिलाकर रख छोड़े। प्रति दिन प्रातः समय आधी छटाँक भर खाय तो वात और कफ के विकार दूर हो जाते हैं।

बादी के रोगोंमें बादी की वस्तु खटाई, मांस, गुड़ तेलसे परहेज करे गेहूँ की रोटी और मूँगकी दाल खाये।

गूगल

इसे संस्कृतमें गुग्गुल, देवधूप, जटायु, कौशिक, पुर, कुस्तालू, खलक, महिषाक्ष और पलंकष कहते हैं। हिन्दी–गूगल, बं० गुगुल, गु० गुगल, क० इटबोल० अ० मुशकिले अर्जक, का० वोयजुदान, इं० वेडल्यम, ला० बालसामाडेन्ड्रोन रोकस वरधाई कहते हैं।

गूगलका वृक्ष बड़ा और पर्वतीय भूमिमें

होता है। इसकी छाल-से, बक्कल-से उत्तरते हैं। इसके पत्ते छोटे-छोटे नीमके सदृश मिले हुए परन्तु इनमें अनी नहीं होती। इसके फूल छोटे-छोटे खिरनी के समान तीन धारवाले होते हैं।

गूगलके वृक्षमें से 'गूगल' गोंदकी जगहसे निकलती है। प्रयोगमें यही गोंद किन्तु नवीन होनी चाहिये और शुद्ध करके डालनी चाहिये।

गूगलकी पाँच जातियाँ हैं। जैसे महिषाक्ष (भैंसा गूगल), महानील, कुमुद, पद्म और हिरण्य। इसमें भैंसा गूगल भौंराके समान काले रंगकी और भैंसाके नेत्रके समान चमकनेवाली तथा कज्जल सदृश होती है। दूसरी महानील गूगल अत्यन्त नीले रंगकी होती है और कुमुदाख्य गूगलका रंग मानिक रत्नके समान और पद्माख्य गूगलका रंग मूँगाके समान लाल तथा हिरण्याख्य गूगल स्वर्णके समान पीले रंगकी होती है।

इसमें महिषाख्य और महानील जातकी

गूगल हाथियोंके वास्ते हितकारी है तथा कुमुद और पद्म नामकी गूगल घोड़ोंके रोगमें दी जाती है और मनुष्योंके वास्ते हिरण्य (सुवर्ण) रंगकी गूगल देनी चाहिये। यदि सुवर्ण गूगल न मिले तो भैंसा गूगल लेवे।

गुणमें—गूगल विषद, कड़वा, उष्णवीर्य, पित्तकर्ता, दस्तावर, कषैली, कटु और पाकमें चरपरी होती है। यह रूक्ष, हलकी, टूटे हुए स्थानको जोड़नेवाली, बलकर्ता, सूक्ष्म, स्वरको उत्तम कर्ता, रसायन, अग्निदीपक और पिच्छिल है।

यह कफ, खाँसी, बादी, व्रण, अपची, मेद-रोग, प्रमेह, पथरी, वायु, शरीरका क्लेश, कुष्ट, आमवात, पीड़िका, गाँठका रोग, सूजन, बवासीर, गंडमाला और कृमि रोगको नाश करती है।

यह मधुर होनेसे बादी, कषैली होनेसे पित्त और कड़वी होनेसे कफको नष्ट करती है। इसलिये गूगल त्रिदोष नाशक है।

नवीन गूगल पुष्टिकारक और बलवर्द्धक है। पुरानी गूगल अत्यन्त लेखन है। नवीन गूगलके ये चिह्न हैं कि वह चिकनी सुवर्णके समान उज्वल सुगन्धित पकी जामुनके समान हो और पिच्छिल हो। पुरानी गूगल सूखी, दुर्गन्ध स्वाभाविक वर्णादि रहित और हीनवीर्य है।

पथ्य—गूगल सेवनके समय खटाई, मिरच आदि तीक्ष्ण पदार्थ, मैथुन करना, परिश्रम, धूपमें डोलना, मद्यपान और क्रोध करना त्याग देवे।

गूगलके वृक्ष माड़वार देशकी पृथ्वीमें होते हैं और वह गरमियोंकी ऋतुमें सूर्यकी धूपसे संतापित हो और शिशिर ऋतुमें सरदीके मारे पाँच प्रकारके गूगल रसको छोड़ते हैं। जैसे सुवर्णके समान, महिष नेत्रोपम, पद्मरागके सदृश, भौंराके समान और कुमुदकी कान्तिके सदृश। इस रसको विधिपूर्वक लेकर परीक्षा करे।

हिन्दुस्तानी वैद्य—गूगलको प्रमेह और अन्य-अन्य बीमारियोंमें घीके साथ मिलाकर तथा

खुजली आदि तथा दुष्ट नासूर और घाव पर लगानेको नीबूके रस और नारियलके तेलके साथ मिलाकर देनेकी प्रशंसा करते हैं।

यूनानी हकीम—गूगलको रुधिर शुद्धकर्ता, बलवर्द्धक और दस्त खुलासा लानेवाला मानते हैं तथा दूसरी सुगन्धित द्रव्योंके साथ मिलाकर संधिवात और अन्य सन्धिके रोग, त्वचारोग और मूत्रस्थानके रोगोंमें देनेको कहते हैं।

चरकसंहितामें—गूगलको पुरीष, विरंजनीय (मलका रंग बदलनेवाला) स्वर शुद्धिकर, कफहर और मूत्रस्थान तथा फेफड़ेकी बीमारीका नाशकर्ता माना है।

सुश्रुत संहितामें गूगलको मेदहर और कफहर तथा योनि दोषहर माना है।

गूगल अग्निमें डालनेसे जल उठे और धूपमें रखनेसे पिघल जावे, गरम जलमें डालनेसे गलकर जलके समान हो जावे, इत्यादि लक्षणवाली गूगल उत्तम होती है। इसलिए तत्कालकी उत्पन्न हुई

गूगल वैद्य ग्रहण करे और जो पुरानी है तथा जिसका रंग अंगारेके समान है, जिसमें राधके समान दुर्गन्ध आती हो वह निकृष्ट है। ऐसी गूगल को औषधियें नहीं लेनी चाहिए।

घी (घृत)

इसके 'आज्य-हविष, घृत' आदि नाम हैं। यह रसायन, मीठा, भारी, ठण्ड, दीपन और चिकना है। नेत्रों की ज्योति देता, विषकर्ता, बादी, पित्त, उदावर्त, ज्वर, उन्माद, शूल, अफरा आदिको दूर करता, कान्ति, पराक्रमको बढ़ता और कफको उत्पन्न करता है।

दाद की दवा

(१) दादको खुजलाकर घी से चुपड़ कर चूना लगा देवे।

(२) घृत और गुड़के भक्षणसे वात स्वर-भंग दूर होता है।

(३) घृत और मधुसे पित्त स्वर भंग दूर होता है।

(४) घृतमें सेंधा नोन डालकर पिवे तो वात दर्द दूर हो।

घुय्याँ (अरुई)

संस्कृत-गजकर्णालु। हिन्दी-घुय्याँ। अरबी-आलू। मराठी-अळवाया, कादा। गुजराती-अलवी।

अरवी बलकारी, स्निग्ध, कफनाशक और विष्टंभकर्त्ता है। तेलमें बनाई हुई अरवी अरुचिको उत्पन्न करती है। इसके पत्ते चौड़े और गोल होते हैं। इसका सर्वाङ्ग काममें लिया जाता है। अरवी की भाजी अच्छी होती है। इसको अजवायनसे ही छौंकना चाहिए। यह धातु और संग्रहणी के लिये अत्यन्त लाभदायक है।

घुँघुँची

संस्कृतमें-काकदनी, काकपीभू, काकचिची, काकनन्ती, काकवल्लरी। हिन्दी-घुँघुँची, चिरमिटी, गुञ्जा, चोटली। बंगला-श्वेतकुच, लालकुच, मराठी-गुञ्ज, कालिङ्गड़ा गुलगुञ्जे, एरड्ड। गुजराती-चणोठी। तेलगू-गुलविन्दे। फारशी-चश्मेखरुश। अरबी-हब्बशर्ख। उड़िया-रुज्ज।

चिरमिटी दो प्रकारकी होती है। एकलाल

दूसरा सफेद । आकार प्रकार तथा गुणमें दोनों ही समान हैं। इसके पत्ते इमली कैसे छोटे-छोटे और पतले होते हैं। इसका फूल सफेद और भूरे रङ्गका होता है। फल बबूलके समान होते हैं। इसकी जड़ मुलहठीके समान मीठी होती है। वात पित्त ज्वर, मुखशोथ, भ्रमरोग स्वास, तृष्णा, मदात्य, नेत्ररोग, खुजली और कृमिरोगकी औषधियोंमें इसका प्रयोग किया जाता है। औषधिमें इसके जड़ पत्ते और बीज लिये जाते हैं चिरमिटीके पत्तोंको इलायची और मिश्रीके साथ चबानेसे आनशकका रोग दूर होता है। चिरमिटीके पत्तों को चबानेसे निनावाँ और मुँहके छाले दूर होते हैं।

चमेली

चमेली को संस्कृतमें राजपुत्रिका, चेतिका और हृद्यगन्धा, मालती और सुमना कहते हैं।

यह क्षुप जाति का पौधा है। यह दो तरहकी होती है। एक जाति और दूसरा सुवर्ण जाति।

जाति का फूल सफेद तथा सुवर्ण जातिका पीलापन लिये होता है।

दोनों प्रकारकी चमेली गरम, कषैली, हल्की, और दोषहरण कर्ता है। इसके द्वारा मस्तक और नेत्रकी पीड़ा दूर होती है। विषजन्य रोग, कोढ़, बादी और रुधिरके दोष दूर होते हैं। यह चित्त को प्रसन्न करती है। इसके पीने से वात और कफके विकार पाखाने द्वारा बाहर निकल जाते हैं। यह लकवा और गठियाके लिये हितकर है। इसका लेप स्तम्भनशक्ति को बढ़ाता है। इसके पत्तोंके काढ़ासे कुल्ला करनेसे दाँतों और मुखकी पीड़ा, मसूड़ोंकी सूजन और मुँहके दाने अच्छे होते हैं। इसका तेल दिमागको ताजा और ठण्डा करता है।

रतौंधी को दवा

चमेलीका पत्ता या फूल, दोनों हल्दी, नीम का पत्ता और रसौतको गोबरके रसमें पीसकर शिरमें लेप करनेसे रतौंधी अच्छी हो जाती है।

कामदेव पुष्टिकारक तेल

सफेद चमेलीकी पत्तियाँ पीसकर उसका रस लेकर मीठे तेलमें जलावे। जब पानी जल जाय और तेल मात्र रह जाय तो उसे शीशीमें रख लेवे। स्त्री विलासके दो घड़ी पहिले लिंग पर मलके पान बाँधे।

अथवा

पाव सेर चमेली की पत्तियाँ पाव सेर मीठे तेलमें डालकर कड़ाहीमें औटावे। जब पत्तियाँ जलकर तेल रह जावे तब कड़ुवा कूट, कच्चा सुहागा, प्रत्येक चौदह माशे थोड़े तेलमें डाले जब मिलकर रंग लाल हो जाय, तब कड़ाही उतार कर तेलको फूल या कांसेके बर्तनमें दोपहर नीम की लकड़ीसे रगड़कर शीशेमें भरकर रखे और एक माशे लिंग पर सिर छोड़कर मले और ऊपरसे पान बांधे। इसी प्रकार एक सप्ताह पर्यन्त दो दिन काबीचदेकर लगावे औरइसकालमें स्त्रीभोगन करे।

तथाच—

चमेलीकी पत्तियोंका रस तीन तोले चार

माशे, संखिया दश माशे, मीठे तेल, कड़वा कूट प्रत्येक १ तो० ८ माशे, सुहागा १ तो० ८ माशे, तिलका तेल ११ तोले १० माशे, पत्तियाँ पीसकर टिकिया बनावे और तेलमें पानी मिलाकर उसको जलावे, जब पानी जलकर तेलमात्र रह जावे तब उसमें पिसी औषधियाँ मिलाकर रगड़े और एक सप्ताह पर्यन्त लिंग पर मले।

बालकके मुख पकनेपर यत्न

यदि बालक का मुख पक जाय तो चमेलीके कोमल पत्ते और फूलोंको शहदमें मिलाकर मुखमें लगानेसे अथवा चमेलीके पत्ते और फूलोंको उबाल शीतल कर कुल्ले कराने से रोगको दूर करता है।

कानके रोगकी दवा

चमेलीके तेलमें एलुआ रगड़कर कानमें डाले तो कानकी खुजली और पीड़ा दूर होती है।

खुजली की दवा

शुद्ध चमेली (उत्तम) के तेलमें कागजी नीबू निचोड़ कर सर्वाङ्गमें लेप करे। प्रातः स्नान

कर लेवे। खुजली के लिए इस प्रकारका लेप शरीर को शुद्ध कर्ता और खुजली को दूर करता है। १०-१५ दिन तक करता जावे।

चव्य

इसे संस्कृतमें चव्य, चविका, ऊषणा। हिन्दीमें चव्य, बं० चट्ट। म० गु० चवक, ला० चवीका ऐक्सवघी आई कहते हैं।

यह क्षुप जातिकी रूखड़ी है और सर्वप्रसिद्ध है। चव्य पिपरामूल के समान गुणकारी है। विशेषकर यह बवासीर को गुण करता है। औषधि में इसकी छाल ली जाती है। मात्रा १ माशेकी है।

इसकी बेल बड़ी कठोर होती है। कोई काली मिरचके वृक्षका भाग, कोई गजपीपलकी जड़ और कोई इसकी बेल पृथक मानते हैं।

चव्यादि चूर्ण

चव्य, अमलवेत, सोंठ, काली मिर्च, पीपल, डाँसरे, तज, पत्रज, जीरा, चित्रक और इलायची इन सबका दो टंक चूर्ण तिगुने गुड़के साथ नित्य सेवन करावे तो स्वरभंग, पीनस, कफ रोग और अरुचि ये सब दूर हो। इसे चव्यादि चूर्ण कहते हैं।

चित्रक (चीता)

इसे संस्कृतमें चित्रक, पाठ, व्याल और ऊष्ण कहते हैं। हिन्दीमें चित्रक, चीता और चितरक कहा जाता है। बं० चिता, म० चित्रक, का० चित्रमूल, तै० चित्रमूलन् ता० शिवपु, चित्रिर, गु० चित्रो, अ० शीतरज, फा० बखवरंदा और इं० प्लविगो कौरुले ऐसो कहा जाता है।

गुण—यह पाकमें चरपरा है (जायका भी तीक्ष्ण है) अग्निवर्द्धक, पाचन, हलकी, रूक्ष, गरम और ग्राही है।

यह ग्रहणी, कुष्ट, सूजन, बवासीर, कृमिरोग, खाँसी, वात, कफ, वातार्श और श्लेष्माको नाश करता है।

(१) यदि सिर्कामें पका करके लेप करे तो सफेद कुष्ट, खुजली तिल्ली, अण्डवृद्धि और उरुस्तंभ को करता है

इसके प्रतिनिधिमें पिपरामूल अथवा अकरकरा लेवे। प्रयोगमें इसकी छाल ली जाती है। मात्रा ४।। माशेकी है। इसका दर्पनाशक रूमी मस्तगी और पीला चन्दन कहा है।

आमवात की दवा

चित्रक, कुटकी, हर्रकी छाल, वच, देवदारु, अतीस, गुर्चके दो टंक चूर्णका क्वाथ नित्य पिलाओ।

चना

इसे संस्कृतमें चाणक, हरिमंथ और सकल प्रिय कहते हैं। हिन्दीमें चना, छोला, बं० चणक, म० हरभन्या, का० कडले, गु० चण्या, तै० शलंगालू, अ० हुम्स, फा० नखुद, अं० ग्राम, ला० सीसरएरिएटिनन् हैं।

गुण—चना शीतल, रूक्ष, पित्त, रक्त और कफको नष्ट करता है। यह हल्का, कषैला, विष्टम्भ-कर्ता, वातल और ज्वरनाशक है। यदि इनको अग्निपर या तेलमें भून लिया जाय तो भी पूर्वोक्त गुण करता है। गीला करके भुना हुआ चना बलकारी और रोचक है। सूखा भुना चना अति रूक्ष वात और कोढ़को कुपित करता है। उबला हुआ चना पित्त और कफको नष्ट करता है। भींगा हुआ चना अति कोमल, रुचिकारी, पित्त,

शुक्र हरणकर्ता, शीतल, कषैला, वातकर्ता, ग्राही, कफ और पित्त हरणकर्ता हल्का है।

जलंधर की दवा

साढ़े तीन तोले चना पावसेर पानीमें औटाकर जब आधा रहे छानकर पीवे तो जलंधर व्याधिको गुण करता है।

कुष्टकी दवा

चनेकी भूसी आध पाव सेरभर पानीमें भिगोकर प्रातःकाल मल छानकर पिये इसी प्रकार एक मास उन्नीस दिन पर्यन्त सेवन करे। तन्दुल, दूध, दधि और जो वस्तु श्वेत हो तथा खटाई से पथ्य करे, माँस, गुड़, शक्कर जो इनमेंसे प्राप्त हो सके खाय। रोग कुछ शेष रहे तो और पिये।

प्रदर रोग में

चनाका सेवन हितकर है।

चौराई

इसे संस्कृतमें तंतुलीय, मेघनाद, कांडेर, तंदुलेरक, भंडीर तंदुलबीज, विघ्न और अल्मानीष कहते हैं। हिन्दीमें चौराई,

चौलाई, बं० नटेशाक, म० तांदुलजार, गु० तांदुलजो, ता० मुल्लूक्किरई, का० किसकुशाले, ते० मोछाकुरा, इं० फोडाईएमेरैंथ।

यह गुणमें लघु, शीतल, रूक्ष, पित्त कफ-नाशक, रुधिरदोष निवारक, मलमूत्र निःसारक, अग्निकारक और विषनाशक है।

नाहरवा रोग में

जो एक ऐसा दाना है जब फूट जाता है तब उसके अन्दरसे एक तागा निकलता है, उसपर चौराईकी जड़ पीसकर बाँधे।

झाँई की दवा

चौराईकी जड़ और टहनी जलाकर जलमें पीसकर झाँई पर मले और एक घड़ी धूपमें बैठे। सूख जानेके पश्चात् गरम जलसे धो डाले और सेंधा नोन पीसकर मुख पर मले।

छीपकी दवा

चौराईकी जड़ और टहनियाँ जलाकर उनको भस्म पानीमें मिलाकर छीप पर लगावे और एक घड़ी धूपमें बैठकर पश्चात् गरम जलसे धो डाले।

सब प्रकाके गरम विषमें

चौराईकी ताजा जड़ १ तोला सूखी हो तो ६ माशे जलमें पीसकर गौ के घृतके साथ खावे।

राजरोग और बहुमूत्रकी दवा

चौराईको पकाकर घृतके साथ नित्य खिलाओ तो उक्त रोग दूर हो।

श्वेत प्रदरकी दवा

रसौत, तवाखीर, लाल चौराईकी जड़, इनका चूर्ण चार २ माशे सायंकाल और प्रातः समय चावलों के पानीके साथ पीनेसे श्वेत प्रदर रोग शान्त होता है।

तथा प्रदरमें

चौराईका रस, शहद एक तोला- रसौत दस माशा इनको मिलाकर पीनेसे सात दिनमें प्रदर-रोग अवश्य दूर हो जाता है।

चिरमिटी या गुञ्जा या घुँघची

इसे संस्कृतमें उच्चटा और कृष्णला कहते हैं। यह दो प्रकार की होती है। लाल और सफेद। हिन्दीमें सफेद और लाल घुँघची कहते हैं। चिरमिटी, गुंज और चोटला भी

कहा जाता है। बं० श्वेतकुच, लालकुच, म० गुंज, गुलगुंजे, एरहु, गु० चणोठी, तै० गुलुविंदे, फा० चश्मेखरूश, अ० हब्बशुर्ख, अं० रुंज, ला० आब्रसप्रीकेटोरिअस।

चिरमिटी के इमली के समान लम्बे पत्ते होते हैं और स्वादमें मीठे होते हैं। फूल सफेद भूरे रंग का होता है। फल बबूलकी फलीके समान होता है। इसमेंसे घुँघची निकलती है। इसकी जड़ मुलहठी के समान मीठी होती है। इसीसे बहुतसे पंसारी और अत्तार लोग मुलहठी के एवजमें घुँघची की जड़ दे देते हैं। घुँघची भी सात उपविषोंमें एक उपविष मानी जाती है।

गुण—दोनों प्रकारकी घुँघची बालोंका हितकारी, शुक्र प्रकटकर्ता और बलकारी है।

इसे वात, पित्तज्वर, मुखशोथ, भ्रमरोग, श्वास, तृष्णा, मदरोग, नेत्ररोग, खुजली, व्रण, कृमि और इन्द्रलुप्त (इन्द्रलुप्त वह रोग है कि जो शिरके बाल रुपये बराबर उड़ जायें और वह जगह खाली हो जाय) इन रोगों पर दोनों प्रकार

की घुँघची देनी चाहिए। प्रयोगमें इसकी जड़, पत्ते और बीज लिये जाते हैं।

गुंजा अर्थात् चिरमिटी दो जाति की कही है। लाल और सफेद। चिरमिटीके बीज विषैले हैं अर्थात् खानेसे जहरका असर करते हैं तथा ज्ञानतन्तुके रोगमें लिये जाते हैं तथा त्वचा रोग और नासूर पर लेप किया जाता है। घुँघची की जड़ वमन लानेवाली है। (चाकदत्त)

डाक्टर लोग-चिरमिटीकी जड़का उपयोग मुलहठीकी प्रतिनिधिमें करते हैं।

चिरमिटीकी जड़ मुलहठी के समान हूबहू मिली हुई होती है। बंगालमें उसको मुलहठीके स्थानमें बेचते हैं। (डा० एम्सली)

चिरमिटीकी डालीमें पत्तेसे भी अधिक मिठास होती है तथा उसमेंसे सत्व काढ़ना हो तो निकल सकता है। (मि० मोहिदीन सरीफ)

सफेद चिरमिटीकी जड़ मीठी होती है और खाँसी के रोगमें बहुत उपयोगी है। (म० चेकर)

सूजन पर

चिरमिटीके पत्तोंको शहदमें पीसकर सूजन पर लेप करे।

खाँसी में

चिरमिटीके पत्ते मिश्रीके साथ चाटे तो खाँसी दूर हो।

चिरायता

इसे संस्कृतमें अर्द्धतिक्त, ज्वरान्तक, नेपालनिंब। हिन्दीमें चिरायता, चिरेता, बं० चिराता, म० किराईत, का० नेलवेउच; गु० करिआंतु, तै० नेलानेमु, फा० कसबुज्जरीरा, नेनिहाद, इं० चिरेटा।

गुण-चिरायता सारक (दस्तावर) रूक्ष, शीतल, कड़वा और हल्का है।

प्रयोग—यह सन्निपात, ज्वर, श्वास, कफ, रक्त, पित्त, दाह, खाँसी, श्वास, शोथ, तृषा, कुष्ट, ज्वर, व्रण और कृमि रोगको नष्ट करता है। मात्रा १ माशेकी है। प्रतिनिधि पीला चन्दन और केशर है।

खुजली की दवा

कड़वा चिरायता, पित्तपापड़ा, काली हरड़,

प्रत्येक १ तोला रात को पानी में भिगोकर प्रातः काल पीस छानकर पिये।

विषमज्वर की दवा

चिरायता, कुटकी, निशोथ, नागरमोथा, पीपली, वायविडंग, सोंठ और नीमकी छालको समान महीन पीस छानकर चूर्ण बनाओ और इसमेंसे १ टंक प्रतिदिन उष्ण जलके साथ ७ दिन तक सेवे तो विषमज्वर नष्ट होकर भूख बढ़ेगी।

छतिवन

इसे संस्कृतमें सतपर्ण, विशालत्वक्, शारद और विषमच्छेद कहते हैं। हिन्दीमें सतवन, सतोंना, बं० छातिम, म० सातविण, सातविण, का० एलेलेग, तै० एडाकुल, ला० आलस्टोनिन्या स्कालारीस कहते हैं।

इस वृक्षके पत्ते सात खूँटवाले होते हैं और यह शरद्‌ऋतु में फूलता है। यह गुणमें कषैला, दस्तावर, दीपन, स्निग्ध और उष्ण है। यह व्रण, कफ, वात, कोढ़, रुधिर विकार, कृमिरोग, श्वास और गोलाको दूर करता है। प्रयोग में इसकी छाल ली जाती है। यह स्वादमें कड़वा होता है।

सर्दीके ज्वरमें

छतिवनकी छाल, गिलोय और नीमके भीतर की छाल सब दो-दो तोले लेकर सबको एक कर क्वाथ करे और पीये ।

त्वचारोगमें बहुतसे योगोंमें इसकी छालको डालते हैं ।

इस वृक्षके विषयमें देशवालोंका ऐसा भ्रम है कि जंगलके सब वृक्ष वर्ष दिनमें एक दिन उसको मान देनेके वास्ते इसके पास आते हैं। ईसवी सन् १६७८ में मोष्टररीडे और ईसवी सन् १७४१ में रमपोअसने इस वृक्षका चित्र प्रकट किया । देशी वैद्य उसको औषधके तौरपर बर्तते हैं। इसके बाद सन् १८३६ में मि० निमोथाने इसके पाचनशक्ति वर्द्धक और ज्वर नाशक गुण प्रकट किया । डाक्टर गिवसन्‌ने ईसवी सन् १८५३ में इसके गुणों का वर्णन फारमेक्युटिकल जनरलमें छापा था । डाक्टर यु इसको ग्राही, पाचनशक्तिवर्द्धक, पेटके

कीड़े निकालनेवाला और ज्वरनाशक मानते हैं।

मनीलाके एक ग्रफ नामक वैद्यने इसकी छालमेंसे डिएटीन नामका स्फाटिक नहीं बंधे ऐसा सत्व तलाश करके निकाला।

अमेरिकाके फारमेक्यूटीकल असोसियेशन ईसवी सन् १८७७ की रिपोर्टमें लिखता है कि, यह वृक्ष ल्यूआनके टापूमें जंगली उत्पन्न होता है। वहाँके रहनेवाले मनुष्य उसको टीटा नामसे बोलते हैं। उस देशवाले उसको पाचनशक्ति वर्द्धक और ज्वर नाशक मानते हैं। बारम्बार आने वाले तथा बहुत दिनके अन्तर देकर और सरदीकी हवामें उत्पन्न होने वाले ज्वरमें इस औषधि को सर्वदा बर्तते हैं। तथा इसके परिणाम बहुत संतोषकारी हुए थे। इस रिपोर्टसे बड़े-बड़े विद्वान् अंग्रेज वैद्यों का ध्यान इसकी तरफ खिंच गया है। तथा हालमें ऊपर कहा हुआ सत्व उत्तमसे उत्तम कुनैनके समान गुणकर्त्ता मानते हैं और इस कारण विलायतसे

गँगाया जाता है। जनन और डिपेटिन सत्व दोनों एक सी मात्रामें दिये जाते हैं और दोनों का एकसा परिणाम होता है। तथा कुनेनसे अधिक फायदा यह होता है कि, कुनेन अधिक देनेसे बहरापन उत्पन्न करती है, नींद नहीं आती, परन्तु इसमें यह सब नहीं होता। तथा इसका असर बहुत जल्दी होता है और कभी निष्फल नहीं जाता। छोटे-छोटे बच्चोंके वास्ते इस तत्व की मात्रा आधा ड्राम और बड़ेके लिये १ ड्राम सब दिनके वास्ते है। यह मात्रा देते समय अवश्य करके अवस्था, जाति, प्रकृति आदि विचारना अति आवश्यक है। पुल्टिशके रूपमें भी यह पदार्थ वर्तनेसे लाभदायक होता है।

इसके बनानेकी विधि यह है—छतिवनकी छाल और कोर्नफ्लोर अथवा चून ये दोनों प्रत्येक आध-आधसेरकोगरमजलमेंमिलाकर खीलकेसमान करे और कपड़ेके ऊपर फैलाके बगलमें हाथकी संधियोंमें और घोटुओंके ऊपर लगाके अच्छी

तरह सूख जानेके बाद बदलता रहे। इस प्रकार जहाँ तक हो लगाकर सुखाये। लश्करी अस्पतालोंमें डोटेइन कुनेनके बदले बर्तते हैं।

छिकनी, नकछिकनी

संस्कृतमें इसको छिक्कनी, क्षवकृत, तीक्ष्णा, छिक्किका और प्राणदुःखदा कहते हैं। हिन्दी नकछिकनी, बं० हेंचुटी, म० नाकशिंकणी फा० वेख गाउजवी, अ० उफरककुदुश कहते हैं।

यह कटु, रुचिदाता, तीक्ष्ण, गरम, अग्निकारी, पित्त प्रकटकर्त्ता, वात–कफ–नाशक और मस्तक विरेचक है।

यह वात, रक्त, कोढ़ कृमि रोग और हँसली के रोगोंको दूर करती है। इसका वृक्ष बहुत छोटा-छोटा जमीनसे सटा हुआ होता है।

छिरहिटा

इसे संस्कृतमें छिलहिट, महामूल, पातालगरुड़। हिन्दी छिरहिटा, बं० पातालगुरुड़ी। म० तानीचावेल। ते० वासनवेल, वासनी, वासगसण्डा। कर्नाटकी पातालगरुडी, निवली, चावेल, भुइ पाडल और सीता। गु० पातालतुवंडी कहते हैं।

छिरहिटाकी बेल गिलोयकी बेलकी तरह

होती है। गुजरातमें यह छोटे २ बालकोंके लिये उपयोगमें लायी जाती है। यह बलकारक, बात-नाशक और कफघ्न होता है। इसकी लता का समस्त अंग काममें लाना चाहिये। इसका प्रयोग दो माशेकी मात्रामें होता है। इसके पत्ते का आकार सीसमके पत्ते के समान ही होता है और गुणमें भी यह वैसा ही लाभदायक है।

छुई-मुई

संस्कृतमें इसे लज्जावन्ती और लज्जालु कहते हैं। हिन्दी छुई-मुई, बंगला लाजुक, लज्जावती, मराठी लाजरी, गुजराती रिसामणी कहते हैं।

इसके दो भेद हैं। एक पीली दूसरी लाल। दोनोंके वृक्ष और पत्तों की यह प्रधानता है कि, वे छूते ही मुरझा जाते हैं। रविवारके दिन इसका वृक्ष उखाड़ कर कमरमें बाँधनेसे आँतका उतरना बन्द हो जाता है। इसकी लुगदीसे मूँगा और सिंगरफका भस्म बनता है।

जंभीरी

संस्कृतमें इसको जम्बार, दंतसठ, जम्भ और जम्भल कहते हैं। हिन्दी जम्भीरी, बंगला बोड़ा लेबू और कागजी लेबू, म० लघुइंडनिंबु, कालिङ्गड़ा कचिलवू कहते हैं।

यह एक क्षुप जातिका पौधा है जो गरम, भारी, खट्टा, बात, कफ और विषको दूर करता है। शूल, खाँसी, वमन, तृषा और आमके दोषको हरण करता है। मुखकी विरसता, हृदय की पीड़ा, मन्दाग्नि और कृमि रोगमें अचूक लाभ पहुँचता है। इसी प्रकार छोटी जंभीरीमें भी गुण हैं। विशेषता यह है कि यह तृषा और वमन होनेको दूर करती है।

जमालगोटा

संस्कृत जयपाल, दन्तजी, तान्तली फल। हिन्दी जमालगोटा, अजेपाल। बंगला जयपाल। मराठी जपाल। कर्नाटकी जेपाल। गुजराती नेपालो अरबी हब्बस सलातान। फारसी तुख्मुवेदंजीर। अंगरेजी क्रोटनसीड। लैटिन ओलियम क्रेटोनिस।

जमालगोटा भारी, चिकना, दस्तकारक और

कफ पित्त को हरण करता है। इसका बीज हरी औषधिके काममें लाया जाता है और वह भी शुद्ध किया हुआ होना चाहिये। हकीम लोग जमालगोटेसे कोठमें सूजन उत्पन्न होनेके कारण इसको देना वर्जित करते हैं। कदाचित किसीने भूलसे खा लिया हो तो उसका दर्पनाशक इसकी छाल तथा केवल घृतपान कहा गया है।

(१) जमालगोटेके दश टंक बीज, १ टंक काली मिर्च और एक टंक पिपलामूल—इन तीनोंको जँभीरी नीबूके रसमें ७ दिन खरल करके नेत्रोंमें लगानेसे नेत्र रोग शांत होता है।

जमींकन्द

संस्कृत सुरण, कंद, ओल, कंदल। हिन्दी सूरन, जमींकन्द, ओल। बंगला ओल। मराठी सूरण। तेलगू मंचाबन्दा।

यह दीपन, रुक्ष, कषैला, खुजलीकर्त्ता, चरपरा, विषद्, रुचिकारी, कफ, बवासीरको नष्ट कर्त्ता और हल्का है। यह विशेष करके बवासीर रोगका पथ्य है। पील्हा और गोलेके रोगों को नष्ट करता

है। सब कन्दोंके सागोंमें सूरण अच्छा है। दाद, कोढ़ और रक्त-पित्तके रोगियोंके लिये हितकर नहीं है। इसका संधाना डालनेसे अधिक गुणकारी होता है। सूरन का संधाना सेरों और फीजी द्वीपमें बहुत डालते हैं।

अर्श (बवासीर) की दवा

जमींकन्द पर मिट्टी लपेटकर भुरता बनाओ इसे घृत या तेलमें लपेटके १ टके भर नित्यप्रति ३१ दिन खिलाओ।

जवासा

संस्कृत—यास, यवास, दुस्पर्श, धन्वमास, कुनासक। हिन्दी जवासा। बंगला यवासा। गुजराती जवासो। अंगरेजी हाज। फारसी मुत्तर। लाटिन अलहागीमोरोरम।

यह एक क्षुप जाति का वृक्ष है। इसका गुण बलकारक, अग्निको दीपन करनेवाला, कफ, पित्त तथा रक्त, खाँसी, ज्वर अन्य रोगोंकी औषधिमें प्रयोग आता है। गर्मीसे उत्पन्न पुरानीसे पुरानी मस्तक पीड़ाको दूर कर देता है। पेशाब अधिक

लाता है, मूत्रकृच्छ्र (सूजाक) को लाभ पहुँचाता है। इसका सुर्मा नेत्रोंके जाला को लाभदायक है। इसका तेल गठियाके लिये अत्यन्त हितकारी है।

जामुन

संस्कृत क्षुद्राजंबू, सूक्ष्मपत्रा, नादेयी और जलजंबूका ये छोटी जामुनके नाम हैं। बंगला जाम। मराठी जांबूला गुजराती जाम्ब, अंगरेजी जाम्बूल।

जामुन दो प्रकारकी होती है। एक कठ-जामुन होती है, जिसके पत्ते कनेरके समान लम्बे और भालेके समान नोकीले होते हैं। दूसरी महा जामुन (फरेंद) के पत्ते मोटे और उससे कुछ छोटे होते हैं। इस वृक्षमें गुच्छापुष्प और गुच्छा फल होता है। जामुन संग्राही, रूखी, कफ, रुधिर और दाह को दूर करता है।

अतिसारकी दवा

जामुनकी गुठली, आमकी गुठली, अजमोद मोचरस और धावड़ेके फूल तथा इन्द्रजौके २ टंक चूर्णको भैंसके मट्ठेमें मिलाकर पानीसे पक्वातिसार नष्ट होता है।

जायफल

संस्कृत जातिफल, जातिकोष, मालतीफल। भारतवर्ष की समस्त भाषाओंमें इसे जायफल ही कहते हैं।

जायफलका वृक्ष बड़ा होता है। इसके फल जामुनके समान होते हैं। इसकी छाल निकाल डालनेसे लाल गुच्छा निकलता है। उसको जावित्री कहते हैं। थोड़ी देरमें ही इसका रंग पीला हो जाता है। इसकेभीतर कठोरछिलका और बीजहोता है जिसे तोड़नेसे जायफल निकलता है। जायफल कड़वा, तीक्ष्णोष्ण, रोचक, लघु, कटु, दीपन ग्राही और स्वरशोधक है। जायफल के सेवन करनेसे बादी, कफ, कृमि, खाँसी, वमन, श्वास, शोष, पीनस और हृद् रोग दूर होते हैं। मात्रा दो माशे की है। प्रतिनिधि जायपत्री।

(१) जायफल, सोंठ, कालीमिर्च, पीपली, तज, पत्रज, इलायची, लौंग, वंशलोचन, कपूर और अनारदानाको पीसकर सबके तुल्य कान्ति सार तथा इन सबके तुल्य मिश्री मिला देनेसे

गगनापासचूर्ण बनाया जाता है। इसे दो टंक प्रतिदिन बकरीके दूधके साथ खिलानेसे राजरोग, मन्दाग्नि, तथा बीस प्रकारके प्रमेह दूर हो जाते हैं।

जेठी मधु (मुलहठी)

संस्कृत यष्ठीमधु, यष्ठीमक्षुक, क्लीतक, उपमधूलिका। हिन्दी मुलहठी, मुरहठी, मीठी लकड़ी। तेलगू यष्ठीमधूकमु। बंगला यष्ठीमधु। मरइठी जेठीमधु। गुजराती जेठीमधु। फारसी रब्बुलसुस। अरबी बेखमहक। अंग्रेजी लिकरिस रूट।

मुलहठी शीतल, भारी, नेत्रोंको हितकारी, बलकारक, शुक्रोत्पादक, बलवर्धक और स्वरभंग नाशक है। मुलहठीके सेवन करनेसे व्रण, सूजन और खाँसीका रोग नष्ट हो जाता है। यह कान्ति कारी, कण्ठ हितकारी, दाह-प्रशमन-कर्ता और रक्तशोधक है। मुलहठीके सेवन करनेसे खाँसी चली जाती है मुलहठी, काली तिल्ली भैंस का दूध और मक्खनको पीसकर लेप करनेसे भिलावे की सूजन नष्ट हो जाती है। शीतके कारण यदि पेटमें पीड़ा होती हो तो मुलहठी क्वाथ देना हितकारी होता है।

(१) नेत्रोंकी ज्योति बढ़ानेके लिये मुल-हठीके रसका बूँद नेत्रोंमें डालना चाहिए।

(२) यदि मस्तकमें फोड़े हो गए हों तो मुलहठीके पत्तोंकी पुल्टिश बाँधनी चाहिए।

हिचकीकी दवा

मुलहठीका चूर्ण मधुके साथ चटावे तो हिचकी बन्द हो।

अल्पकेशता दूर हो

मुलहठी, नीलकमलकी नाल (जड़) और दाख इन सबको घी या तेल या दूधमें भली-भाँति पीसकर बालोंमें लगाओ तो बाल बढ़कर अल्प-केश रोग दूर हो।

पुष्टिकारक औषधि

मौरेठी चूर्ण सहित, दूध घी से खाव।
तो तिय संगम अति करैं, वीर्य पुष्ट हो जाय।

गर्भ स्थिर रहे

लोध और मुरेठी बराबर पीसकर नौ मासा

भर लेकर गायके दूधमें मिलाकर पीनेसे गर्भ स्थिर रहता है।

जीरक (जीर, कालाजीरा, कलौंजी)

इसके जीरा, जीण, अजाजी, कण तथा दीर्घजीरक ये सब सफेद जीरेके पर्यायवाचक नाम हैं। कृष्णजीर, सुगन्ध उद्गार-शोधक ये सब काले जीरेके नाम हैं। कालाजाजी, सुषवी, कालिका, उपकालिका, पृथ्वीका, कारवी, पृथ्वी, पृथुकृष्ण, उपकुंचिका, उपकुंची, कंची और वृहज़ीरक ये सब कलौंजीके संस्कृत नाम हैं। म० सफेदजीरेको, पाँडरेजिरे, क० बिलियजीरगे। कालेजीरे को कालेज़रे, क० करिजीरगे, कलौंजी। क० में करिजोदुजीरगे, तै० जिलकरर कहते हैं। बं० शुक्लजीरा, कृष्णजीरा और कलौंजी कहते हैं। गु० धालुंजीरुं, कालीज़ीरी और कलौंजी जरूँ, फा० कमूना शोन जत, हब्ब, असवद, इं० कम्मिनन्सीड कहते हैं।

यह भी क्षुप जातिकी बनस्पति है। और सर्वत्र प्रसिद्ध है। कालाजीरा काबुलके राज्यमें तथा हिन्दुस्तानके उत्तरी पहाड़ों में होता है।

तीनों प्रकारके जीरे का गुण रूक्ष, कटु, (चरपरा) गरम, अग्निदीपक, हलका, संग्राहक, पित्तकर्ता, स्मरणशक्ति वर्द्धक (भूलके रोगको दूर

करनेवाला) गर्भाशय (जारायु) शोधक, ज्वर-नाशक, पाचक, शुक्रवर्द्धक, बलकारक, रुचिकारक कफनाशक और नेत्रों को हितकारी है ।

बादीसे पेटके फूलने पर, गोलेका रोग होने पर, वमन और अतिसारके रोग पर इसका प्रयोग किया जाता है, अर्थात् यह इन रोगों को नाश करनेवाला है । यथा—

(१) इसके चूर्णको सिर्काके साथ पीए तो मिट्टी खानेके रोगको दूर करता है ।

(२) दाँतोंसे कुचलकर कपड़ेसे रस छान-कर अंजन करे तो नेत्रों का नाखुना विकार दूर होता है ।

(३) यह शूल और अजीर्णको नष्टकर्त्ता और पक्वाशय को बदलता है ।

इसके फल की मात्रा दो माशे की है और इसके उपद्रव का नाश करनेवाला कतीरा है और अजवायन इसकी प्रतिनिधि है ।

सम्मतियाँ

१—यूनानी हकीम सफेद जीरेको खुशबूदार पेटकी ऐंठन नष्टकर्ता और ग्राही गिनते हैं। इसमें से आँख धोनेका पानी बनाते हैं कि जो उनके मतानुसार नेत्रका तेज बढ़ाता है और छातीके दर्दमें भी इसको बर्तते हैं। इससे मूत्र अधिक आता है तथा पेटके जीव (कीड़े) निकल जाते हैं। गर्भ-स्थानमें सूजन आकर अधिक दर्द होता हो तो इस जीरेके पानीमें स्त्रीको बैठानेकी प्रशंसा करते हैं। उसी प्रकार इस जीरेको पीसकर पुल्टिश बनाकर बाँधनेसे बाहर निकले हुए मस्से और अत्यन्त दर्द करनेवाली बवासीर जाती रहती है।

२—पंजाब प्रान्तमें जीरेसे मूत्र अधिक उतरता तथा स्तनोंमें दूध अधिक उत्पन्न होता है ऐसा मानते हैं।

३—इंगलिश औषधोंमें इसे पाचक और पेटकी ऐंठन नष्टकर्ता कहा है और इसको पेटमें

वायुगोला, पेट फूलनेकी औषधि, बदहजमी और अँतड़ेका शूल होता हो तो इसे उपयोगी गिनते हैं।

४—सुश्रुत संहितामें इसको वात-कफनाशक, अरुचिनाशक, दीपन, गुल्म, शूल और आमका नष्टकर्ता कहा है (अर्थात् सूजन, शूल और आम पड़ती को बन्द करनेवाला है)।

५—चरकसंहितामें जीरेको शूल-प्रशमन (शूल-नष्टकर्ता) मानते हैं।

किसीके मतसे जीरा पाँच प्रकारका है। जैसे १ साधारण जीरा, २ काला जीरा, ३ स्याहजीरा, ४ कलौंजी, ५ शंखजीरा।

जीरकादि चूर्ण, अजीर्ण, मन्दाग्निकी दवा

जीरा, सोंचर नोन, सोंठ, मिर्च, पिपलि, सेंधा नोन, अजमोद, सेंकी हींग, हर्र की छाल (ये सब अधेले२ भर) और २ टके भर निशोथ इन सबका चूर्ण बनाके दो टंक नित्य उष्ण जलके साथ सेवन कराओ तो अजीर्ण मात्र दूर होकर

क्षुधा बढ़ेगी । इसे जीरकादि चूर्ण कहते हैं, यह तरंगिणीमें लिखा है ।

दूध बढ़ने की दवा

सफेद जीरा, साँठी चावल और लोध छै-छै माशा भर लेकर गायके दूधमें औटाकर गाय का घी मिलाकर पीनेसे दूध बढ़ता है । तथा सफेद जीरा सेंधा नोन, पीपरि, बड़ी इलायचीके दाना तीन-तीन माशे कूट पीसकर सकोरेमें भरकर गायके दहीमें मिलावै । प्रातः समय खाय सात दिनमें दूध बढ़ जाता है ।

वायगोला की दवा

काला जीरा, भुनी हींग, अजवायन, सेंधा-नोन, सोंठ, मिर्च, पीपरि इनको बराबर लेके बारीक पीसे और भोजनके आदि अन्तमें खाय तो वायु गोला दूर हो ।

रक्तातिसार और प्रदर की दवा

सफेद जीरा, पोस्तेका दाना, इमलीकी गिरी, आमकोकोंपल, जायफल, पठानीलोध, बेलकीगिरी,

जावित्री, जायफल, मोचरस, सोंठ, मिर्च, पीपरि, अफीम, नागरमोथा, धायके फूल, सोहागा, अजवायन, इन्द्रजौ धतूरेके फूल, धतूरेके शुद्ध बीज, एक-एक तोले लेकर बारीक चूर्ण बनावे और केलाके पानीसे घोंटकर मटरके बराबर गोली बनाकर छायामें सुखावे। साँझ सवेरे एक-एक गोली चावलके धोवनके साथ खावे तो उक्त रोग दूर हो जावे।

जटामांसी

संस्कृतमें जटामांसी, भूत जटा, जटिला, तपस्विनी और मांसी कहते हैं। हिं० और बं० में जटामांसी। गु० बालछड़ फा० सुबुल, अ० सुबुलतीख, क० बहुलगंध और सब भाषाओंमें इसी नामसे प्रसिद्ध है। ल० नार्डेस्टीकस कहते हैं।

इसका वृक्ष सुगन्धदार होता है। इसकी जड़ कुछ-कुछ कड़वी होती है। यह गुणमें कड़वी, कषैली, स्मरण शक्ति बढ़ाने वाली, बलकारक, कांतिप्रद, स्वादु, शीतल त्रिदोषी और रुक्षता-नाशक है। रुधिर दोष–दाह, अपस्मार (मृगी)

कोढ़, ज्वर और अनेक प्रकारके चर्मरोग अर्थात् सब प्रकार के कोढ़ इनको दूर करती है। प्रयोगमें इसकी जड़ ६ रत्ती ली जाती है।

सम्मतियाँ

१—मखजनमें लिखा है कि जटामांसी पेटके विकार निकालनेवाली है। यह जागृत करता, साफ पेशाब लानेवाली और पित्तको निकालने वाली है। फेफड़ेकी बीमारीमें तथा ज्ञान तंतुओंको बलिष्ट करनेको तथा हिस्टीरियाके रोगमें देनेकी प्रशंसा करते हैं और इस प्रकार कहा है कि इसके उपयोग से मस्तक के बाल काले और लम्बे होते हैं।

२—डा० एन्सली कहता है, इस पदार्थमेंसे मस्तकमें डालनेका सुगन्धित तेल निकलता है तथा रुधिर शुद्ध करने को उसे खानेके वास्ते देते हैं।

३—सर विलियम ओधशंगनेसी—जटामांसी को वेलरियन दवाके बदलेमें इस्तेमाल करनेकी तारीफ करता है।

४—चरकसंहितामें इसे विकृत, चेतनास्थापन और उन्माद अपस्मार तथा बादोंके विकारोंके ऊपर अक्सीर दवा मानते हैं।

५—सुश्रुतमें इसे वात-कफ-हरणकर्त्ता, वर्णप्रसादन, दुष्ट खुजली नष्टकर्त्ता और पीड़ा शामक वर्णन किया है।

तुलसी

संस्कृत—तुलसी, वैष्णवी, वृन्दा, सुगन्धा, गंधहारिणी, अमृता, पत्रपुष्पा, सुरवल्लभो, पवित्रा, विष्णुवल्लभा, सुरभी, सुरदुन्दभि, श्यामा, गौरी, त्रिदशमंजरी, भूतघ्नी, भूतपत्री, सुरसा-सुलभा, ग्राम्या, बहुमंजरी, अपेता, राक्षघ्नी, शूलघ्नी और देव-दुन्दुभी। हिन्दी—तुलसी, काली तुलसी। बंगला—तुलसी। काली तुलसी। गुजराती—तुलसी। पंजाबी—तुलसी, वनतुलसी। मराठी—तुलसचे झाड़, रानतुलसी, कृष्ण तुलसी। तैलगू—कृष्णगडोर चट्ट, इन्युषसि, तुलसी चेट्ट, कृष्ण तुलसी। तामिल—तुलसी, अलंगई, पिरुन्दम। कनारी—एरेड तुलसी, तुलसी गिडा। मद्रासी तुलस। द्राविड़—तुल्स मलयालम—नियल्ल, तिरुनआ, नल्लूतरत; कृष्ण तुलसी, सिंहली—मदलतुल्ल। ब्राह्मी—लुन। फारसी—रेहान, रहाँ, शाहशिफरम्। अरबी—तुलसीबदरूत लैटिन—ओसिनं आल्वं, ओसिन सेक्टम्। अंग्रेजी—ह्वाइटवेफिल, परपिल स्काक्डबेफिल।

किन्तु यूरोपके अनेक देशोंमें तुलसी 'हिलो-वेसिल' के ही नामसे विशेष प्रसिद्ध है।

पुराणोंमें इसके और भी नाम पाये जाते हैं। जैसे—श्री, लक्ष्मी, यशस्विनी, धर्म्या, देवी, देव-मनः प्रिया, प्रियसखी, अचला, धर्माननना आदि।

तुलसीके पौधे बन, बाग, एवं घरोंमें भी गमले आदिमें लगाये जाते हैं। यह पौधा डेढ़, दो तीन हाथसे अधिक नहीं बढ़ता। किन्तु यदि मंजरी तोड़ता जाय तो अधिक लम्बा एवं मोटा भी हो सकता है। इसकी पत्ती कुछ गोलाई लिए लम्बी होती है। पत्तीके ही शाखाओंमें बालें निकलती हैं, जिन्हें मंजरी कहते हैं। इसी मंजरीमें तुलसीके 'बीज' (बीआ) होते हैं। यह कोमल और सुगन्धित होती है। ऐसे तो इसकी कई जातियाँ हैं। साथ ही देश एवं प्रान्त—भेदसे भी इसमें अन्तर है, किन्तु वैद्यक शास्त्रोंमें मुख्य दो भेद ही माना गया है। काली-कृष्णा-श्यामा और

श्वेत रामा ही विशेष प्रसिद्ध है। रामासे श्यामा विशेष गुणवाली होती है, किन्तु कृष्णाके अभाव में रामा साधारण तुलसी ही काममें लानी चाहिये। दोनों तुलसीके गुण एक ही समान है। तुलसीकी उत्पत्ति एवं विवरणके सम्बन्धमें विशेष लिखना व्यर्थ है। क्योंकि प्रत्येक हिन्दू जातिके घरमें इसका पौधा होता है। अथवा यह कहा जाय तब भी अनुचित न होगा कि, प्रत्येक हिन्दू तुलसीसे परिचित हैं।

यह खाँसी, विष, श्वास एवं पार्श्वशूलका नाश करती है। साथ ही पित्तकारक, कफ, वायु और दुर्गन्ध को नाश करती है।

इसका उपयोग प्रायः आमांश और कृमि आदि रोगोंमें होता है। मद्रास, पंजाब, ईरान आदिमें उत्पन्न होने वाली बादी, प्रसूत और मंदाग्नि आदिमें इसका उपयोग विशेष लाभकारी होता है। बंगाल, नेपाल, बर्मा आदिमें उत्पन्न होने वाली

दद्रिह कफ विकार, अपान वायु, गठिया आदि रोगोंमें अपना प्रभाव शीघ्र दिखलाती है।

१—यूनानी मतसे तुलसीके गुण—तुलसी पहले दर्जेमें गर्म, दूसरेमें रूखी, मस्तिष्कके रोगों की उद्घाटक, शोथ, वायु, रोमविकारका नाश करने वाली है एवं मन्दाग्नि को दूर करती है। इसका पौधा घर-घरमें लगानेसे जीव-जन्तु विशेष कर खटमल और मच्छर नहीं रहते। दूषित वायु को शुद्ध करता है। जहाँ इसका पौधा रहता है, वहाँ सर्प नहीं जाता।

२—एलोपैथिक मतसे तुलसीके गुण—तुलसी कफ को निकालने वाली और मलेरिया आदि अनेक रोगों को नाश करती है। सर्दीके कारण होने वाले अनेक रोगोंमें विशेषकर खाँसी पार्श्व-शूल, ब्रङ्काइटिस न्युमोनिया, हैजा, इन्फ्लुएंजा आदि रोगोंमें तुलसी अधिक उपयोगी है। अल्प परिमाणमें मूत्रका स्राव होने पर मूत्र लानेके लिये

और स्निग्धता उत्पन्न करनेके लिये तुलसी का उपयोग करना चाहिये।

३—एक फारसी पुस्तकसे तुलसीके गुण—तुलसी पेचिस और मरोड़के लिये आश्चर्यजनक गुण रखती है। पेचिसमें शक्करके साथ खिलाना चाहिये। सूखी घाँस, खाँसी और छातीकी खरखराहटके लिये अत्यन्त लाभदायक है। वीर्यको गाढ़ा करती है। केवल इसका पौधा ही घरमें रखने से बात जनक रोगोंसे बचाता है।

जंगली तुलसी कफजनित सूजनको नष्ट करती है। इसकी पत्ती का रस नाकमें डालनेसे दाँतके कीड़े मरकर गिर जाते हैं। यह इसमें विलक्षण गुण हैं।

तुलसीका मारक गुलाब है और तुलसीकी प्रतिनिधि केंवाच है।

बालकोंके पेटकी पीड़ा

तुलसी और आदी का रस समभाग लेकर

गरम करके दे। इससे बालकोंके पेटका समस्त विकार दूर हो जाता है। इसे सदैव पिलाया जाय तो कभी भी बालकोंको उदर सम्बन्धी कोई रोग न होगा।

बालकोंको दस्त खुलासा होनेके लिए

तुलसी और पान का रस गरम करके गरम सहन करने योग्य पिलावे। इससे बालकोंके पेटका फूलना और अफरा दूर होता है।

बालकोंके सर्दी और खाँसी आदि पर

तुलसीकी पत्तीका रस चार ड्राम, शुद्ध शहद एक औंस आदीका रस दो ड्राम और अजवायन का चूर्ण दो ड्राम, सबको एकत्र खलमें घोंटकर मिलाले। इसकी मात्रा अवस्थानुसार ३० से ६० बूँद तक की है।

बालकोंके शीतलता और चेचक पर

तुलसी की मंजरी, अजवायन और आदी सब भाग पीसकर दे।

बालकों का बल बढ़ानेके लिए

तुलसीके पत्तियोंका रस थोड़े पानीके साथ पाँचसे दश बूँद अवस्थानुसार, बालकोंको पिलाने से उनके जोड़ सुदृढ़ एवं बलवान होते हैं।

बालकोंके ज्वर पर

तुलसीकी पत्ती, बबूलकी कोपल और अजवायन तीनों एक-एक माशा लेकर सबको ढाई तोले जलमें पकावे, जब वह चौथाई रह जाय, तब मिश्री मिलाकर दे।

(१) तुलसीका रस गरम कर कानमें छोड़े तो बालक की कान की पीड़ा दूर हो।

(२) एकसे तीन माशे तक, अवस्थानुसार तुलसी के रसमें शहद मिलाकर दे तो बालकका श्वास रोग अच्छा हो जावे।

(३) बालकोंको दाँत निकलते समय एक या दो रत्ती तुलसी का चूर्ण अनारके शर्बतमें देवें।

(४) तुलसीका रस शहदमें मिलाकर चाटे।

५—लू लगने पर तुलसी का रस रस चीनी मिलाकर पिये।

६—तुलसीकी जड़का चूर्ण पानमें रखकर दे तो आमाशयका रक्तस्राव बन्द हो।

७—चेचकमें तुलसी और अजवायन पीसकर प्रतिदिन सेवन करे।

८—रक्तस्राव और चक्कर पर तुलसी के रसमें खाँड़ मिलाकर देवे।

९—प्रसव पीड़ामें, तुलसीका रस देवे।

१०—मूत्रकी नली में दाह होता हो तो तुलसीकी पत्ती चाबे।

११—वमन पर, तुलसी का रस, छोटी इलायचीका चूर्ण और चीनी मिलाकर देवे।

१२—दाँत दर्दमें, तुलसीकी पत्ती और काली मिर्चको गोली बनाकर दाँतों तले दबावे।

१३—मुखके छालेपर, तुलसी और चमेली की पत्तियोंको चबावे।

१४—हैजेपर, तुलसी और काली मिर्चकी गोली बनाकर देवे।

१५—पेटमें पीड़ा हो तो, तुलसी और आदीका रस गरम कर पीये।

१६—घावपर, तुलसीके बीज पीसकर बाँधे।

१७—आमाशयमें दर्द हो तो, तुलसीकी चाय पीए।

१८—पसीना लानेके लिये, तुलसीका काढ़ा पीवे।

१९—खाँसीमें, तुलसीकी मंजरी आदीके रसमें पीसकर शहदसे चाटे।

२०—खाँसीमें तुलसी और अडूसेका पत्ती का रस समभागमें मिलाकर लेवे।

२१—उदरकी शिकायत हो तो तुलसीका रस दो तोला चावलके माँड़के साथ सात दिन देवे। दूध-भात और घी-भात खावे।

२२—रतौंधी हो तो तुलसीका रस दिनमें कई बार आँखोंमें डाले।

२३—शीघ्रपतनमें, तुलसीके दो चार रत्ती बीजों को पानमें खाया करे।

२४—अँतरिया बुखारमें, तुलसीका रस तीन माशे, काली मिर्चका चूर्ण दो आने भर लेकर दोनोंको मिलाकर चाटे। ऊपरसे गरम जल पी लेवे।

२५—ज्वर और खाँसीमें, तुलसीका रस सवा तोले शुद्ध शहद ढाई तोले, आदी दश आने भर, सबको एकमें मिलाकर रख लेवे। ३० से ६० बूँद तक सेवन करे।

२६—प्लेगमें तुलसी, काली मिर्च और मिश्री खावे।

२७—जीर्ण ज्वर, खाँसी और छातीके दर्दमें, तुलसीके रसमें मिश्री मिलाकर देवे।

२८—ज्वरमें घबराहट हो तो तुलसी का शर्बत देवे।

२९—विषम ज्वरमें काली तुलसीके रसमें मिर्चका चूर्ण मिलाकर पिलावे।

३०—जड़ैयाके ज्वरमें तुलसीकी पत्ती ६ नग

और काली मिर्च दो, एक तोले जलमें पीसकर सेवन करे।

३१—मोठे ज्वरमें काली तुलसी, बन-तुलसी और पुदीनाका रस तीन अथवा सात दिन तक देवे।

३२—दाद पर तुलसी की पत्ती रगड़े।

३३—शिरमें दाद हो तो तुलसी और नीबू का रस लगावे।

३४—कुष्ट रोगमें तुलसो की पत्ती खाए, लगावे।

३५—बवासीर की दवा—तुलसीका बीज दिनमें दो बार ले।

३६—गर्भ स्थितिके लिए—मासिक धर्मके दिनोंमें तीन दिन तुलसीका बीज चबावे या बीजों का काढ़ा करके गरम २ पीवे।

३७—सर्दी, जुकाममें तुलसी की पत्ती कालो मिर्च और सेंधा नमक का काढ़ा पीए। तुलसी

का रस शरीर पर मालिस करे। तुलसी और आदी का रस शहदके साथ चाटे।

३८—शिर-दर्दमें तुलसी का चूर्ण शहदमें प्रातः समय लिया करे।

३९—पित्त प्रकोपमें तुलसी और अदरकका रस और दोनोंसे दूने नीबूके रसमें मिश्री मिला कर देवे।

४०—कान पर सूजन हो तो ताजा तुलसी मंजरी सहित का रस निकालकर दो चार बूँद कानमें छोड़े।

४१—दाँतोंमें कीड़े हों तो तुलसीके रस में थोड़ा कपूर मिलाकर उसमें रूई भिगोकर पीड़ित स्थान पर रखे।

४२—मुखमें छाले पड़ गये हों और मुखसे दुर्गन्ध आती हो तो तुलसीकी पत्ती फाँका करे।

४३—पाचनशक्तिके लिये तुलसीकी पत्ती पीसकर पीवे।

४४—सूजन पर तुलसीकी पत्ती लेप करे।

४५—पीनस पर तुलसी का रस दिनमें कई बार नाक पर छोड़े और तुलसी की सुँघनी सूँघे।

४६—गलेमें दर्द हो तो तुलसी का रस शहदमें चाटे।

तरबूज

इसे संस्कृतमें कालिंद, कृष्णबीज, कालिंग और सुवर्तुल कहते हैं। हिं० तरबूज, बं० तरबूज, म० कलिंगड़, कालिंगण, तरबूज, गु० तडबूज, कालिंगड्ड, तै० तरबुज; पुच्चकाया, का० कौंडे, उ० तरबुज, अं० वाटरमेलन्, ला० साइट्रूलस वलगेरिस्; फा० वितीखजकी कहते हैं।

यह गुणमें (कच्चा तरबूज) ग्राही है और नेत्र, पित्त और शुक्रका हरणकर्त्ता शीतल तथा भारी है। पका हुआ तरबूज गरम, क्षारयुक्त, पित्तकर्त्ता और कफ, बात को जीतने वाला है।

होंठ फटने और खुश्कीमें

मीठे घीया और तरबूजकी मिंगी पानीमें घोटकर पतला लेप करे तो अच्छा हो जाये।

शिर दर्द पर

तरबूजके बीज और मुचकुन्दके फूल दोनों या एकको पानीमें पीसकर लगाना गुणकारी है।

झाईं की दवा

तरबूजमें छिद्र करके उसमें चावल भर कर दिन भर रख दे। फिर चावल निकाल कर उबटन लगाकर मुख पर मले।

तिल

इसे संस्कृतमें सवर्ण्य कहते हैं। हि० तिल, म० तील, गु० तल, तै० नुव्वुलु, का० एलु अ० खिमसिम, फा० कुंजद, अ० सिसेमनैजर सीडस, ला० सिसेमुस इंडिकम्।

यह काला, सफेद और लाल तीन प्रकार का होता है। यह गुणमें कटु, तिक्त, मधुर, कषैला और भारी होता है। पाकमें कटु, मधुर, स्निग्धोष्ण कफ पित्त-नाशक, त्वचाकी स्वस्थताकारक्षक, स्तनों में दूध प्रकटकर्त्ता, व्रण को हितकारी, दाँतों का रक्षक, अल्प मूत्र कारक, ग्राही, वात-नाशक,

अग्निकारक और बुद्धिदाता है। तिलोंमें काला तिल उत्तम है। सफेद मध्यम और अन्य तिल हीन गुणवाले हैं।

बिच्छूके डंक पर

जहाँ बिच्छू मारे हो वहाँ तिल सिरकेमें पीसकर मले।

वातप्समार पर

तिल्लो और लहसुन मिलाकर खिलावे।

पादफूटन (पगफूटन) की दवा

तिल, साँभरनोन, हल्दी और धतूरेके बीजों को पानीमें महीन पीसकर इन सबके बराबर गौ का मक्खन और इन सबसे चौगुना गौ मूत्र ये सब एकत्र करके आँचसे पकाओ। जब और औषधियां जलकर घी मात्र रह जावे, तब छानकर पैरके तलुओंमें मर्दन करे तो पैर फूटना बन्द हो।

तगर

इसे संस्कृतमें कालानुसार्य, तगर, कुटिल और लघुसंनत कहते हैं। हि० तगर, बं० तगर पादुका, म० गांठ्या तगर,

गोडे तगर और नेपालमें चम्पा; फा० असारून कहते हैं।

यह एक प्रकारका सुगन्धित तृण अल्मोड़े के पहाड़ पर होता है। दूसरी एक प्रकार की तगर और है। दोनों प्रकारकी तगर गरम, स्वादु, स्निग्ध और हल्की है।

प्रयोग—तगरका सेवन विष दोष, अपस्मार शूल, नेत्र-रोग और वातादि दोषभय को नष्ट करता है। मात्रा ३॥ माशेसे लेकर ४॥ माशे तक है और प्रतिनिधि बच, कपूर और सोंठ है।

१—चरक संहितामें तगरको सरदी नष्ट-कर्ता और चेतनास्थापक कहा है।

२—सुश्रुतमें तगरको वात, कफहर, विषहर, वर्ण प्रसादन खुजली और कुष्टनाशक वर्णन किया है।

ताड़ वृक्ष

संस्कृतमें इसको ताल, लेखपत्र, तृणराज और महोन्नत कहते हैं। हिं० ताड़, बं० ताल, ता० पनल, अं० तार, अ० पालमाई पाम, ला० कोरेसम प्रलेवेलि कोमिस कहते हैं।

पका हुआ तालका फल, दुर्जर (सहज ही नहीं पचता) खानेसे रक्त पित्त और कफ की वृद्धि करता है। मूत्र अधिक लाता, अभिष्यंदी और शुक्रजनक है। किन्तु नवीन तालमज्जा किंचित् मद उत्पादक, हल्का, कफजनक, वात पित्तघ्न, स्निग्ध, मधुर और दस्तावर है।

सोम रोग की दवा

तालवृक्षकी जड़, खजूरकी जड़, बिलाइकन्द और मुलहठी इनको कूट पीस छानकर चूर्ण बनावे और छः छः माशे प्रतिदिन प्रातःकाल गायके दूधके साथ अथवा चावलके धोवनकेसाथ सेवनकरे। तो तीन सप्ताहमें सोम रोग शान्त हो जाता है।

तूत, शहतूत

संस्कृतमें इसको तूल, स्थूल, पूग, क्रमुक और ब्रह्मपाश कहते हैं। हिं० शहतूत, बं तूत, म० तूत, तै० कंबळीचट्टु, ता० मपुकट्टाइचेडि, अं० मलचेर्गिझ, ला० मारस इन्डिका कहते हैं।

पके शहतूत भारी, स्वादिष्ट, शीतल, पित्त, बादी, इनको नष्ट करते हैं। कच्चे भारी दस्तावर खट्टे गरम और रक्त पित्तकारी हैं।

मुँहसे लार गिरने पर

शहतूतका रस, धनियाँ, मसूर भिगोकर उसका पानी मिलाकर गुनगुने २ गरारा करे।

तथा च

तूतकी जड़, पत्तियाँ और नरम २ डालियाँ पानीमें औटाकर गरगरे करे।

त्रिफला

हरड़, बहेड़ा, आंवला तीनों की छाल समान लेना, इसको त्रिफला कहते हैं। तथा फलत्रिक वरा (और जितने वराके संस्कृतमें पर्यायवाचक शब्द हैं। जैसे श्रेष्ठा, अग्रया, सब त्रिफलाके जानो) हिन्दुस्तानकी सब भाषाओंमें यह त्रिफला के नामसे ही प्रसिद्ध है। त्रिफलामें बड़ी हरड़का छिल्का डालै, कोई त्रिफलाका प्रमाण इस प्रकार कहते हैं कि, एक हरड़ दो बहेड़े और ४ आँवले

लेना इसको त्रिफला कहते हैं, सो यह भी ठीक है। फारसीमें इसको इतरीफ कहते हैं।

त्रिफला कफ, पित्त, प्रमेह, कुष्ठ इनको हरण करता है, (कफ, पित्तादि दोषों को दस्तके मार्गसे निकालनेवाला) नेत्रों को हितकारी, अग्नि दीपनकर्त्ता, रुचि करता और विषम ज्वरको नाश करने वाला है।

त्रिफला-पाक

एक भाग हर, दो भाग बहेड़ा, चार भाग आँवला, इस प्रकार यह त्रिफला लेकर चूर्ण करे और आध पाव लेकर एक पाव भर जलमें भिगोय पाव भर घीमें मन्द अग्निसे सेंके, फिर १ सेर मिश्रीकी चासनीमें डाले। फिर सोंठ, मिर्च, पिपरि इलायची, मोथा, तज, पत्रज, चित्रक, पोहकरमूल यह सब चीजें आठ-आठ माशा, धनियाँ दो तोले, शुद्ध शिलाजीत और केशर छः छः माशा, और शहद पाव भर मिलावे। यह प्रतिदिन दोनों समय एक-एक तोला अथवा दो-दो तोला सेवन करे तो शिर

रोग, सब प्रकारका प्रमेह, नेत्रोंसे पानी बहना, जुकाम, रक्त-विकार आदि यह सब रोग दूर होवेंगे।

नेत्र-रोग की दवा

यदि बच्चे की आँख किचड़ाती हो तो त्रिफलाके पानीसे धोवे।

प्रदर की दवा

त्रिफला (हरड़, बहेड़ा एक-एक भाग, आँवला ४ भाग) लेकर चूर्ण बनाय शहदके साथ दिनमें तीन बार छ माशे भर चाटे। अथवा—

त्रिफला १ तोला, गोखरू ६ माशा दोनों को पानीमें भिगोकर शहद डालकर पीवे तो श्वेत प्रदर रोग जावे।

(१) त्रिफलाका चूर्ण मधु या मिश्रीके साथ चटानेसे पित्तगुल्म नष्ट होता है।

(२) त्रिफलाका चूर्ण मधु या घीके साथ देनेसे शूल रोग नष्ट होता है।

(३) जिसके हाथ और पांवके तलुओंमें जलन हो, रातको नींद न आती हो, भोजन करने

में अरुचि हो उसे चाहिए कि त्रिफला और नीम की गुर्चिको किसी मिट्टीके पात्रमें रात भर भिगो छोड़े। प्रातःकाल होने पर उन तीनोंको खूब मसल-मसलकर छान ले। पुनः आधा अर्क तो पी डाले और आधेसे हाथ पाँव और मस्तकको धोवे। दस दिन ऐसा करनेसे उपरोक्त सभी विकार नष्ट हो जायँगे।

[४] त्रिफला नेत्र–ज्योतिको बढ़ाता और प्रमेह रोगको शान्त करता है।

थूहर

संस्कृत—सेहुण्ड, स्नुही गुडा। हिन्दी—थूहर सेंहुड़। बं० सिजवृक्ष, मनसागाछ। मराठी—निवडुङ्ग, साबर। गुजराती—थोर। कर्नाटकी–निवडुङ्ग। तेलगू–चेमुण्डु। फारसी–लादनाम। अरबी–जकुम। अंगरेजी–गुफोर्ब्या।

थूहरका वृक्ष कटीला होता है। इसमें श्वेत रंगका किन्तु गाढ़ा दूध निकलता है जो अनेक औषधियोंके प्रयोगमें लाया जाता है। इसमें एक प्रकारकी गन्ध होती है। यह कटु, स्वादु, तिक्त,

स्निग्ध, त्रिदोषनाशक, मेधा-शक्ति-वर्धक, कृमि-नाशक, रुचिकारी और शुक्र-प्रगटकर्ता है। इसका वृक्ष अधिकसे अधिक ८-१० हाथ लम्बा होता है। पत्तोंको बकरियां अधिक खाती हैं और कानको पीड़ा में गरम करके इसके पत्तोंका रस तथा भुनी हुई कौड़ीका चूर्ण डाला जाता है। अबोध बालकको खांसी, दस्त, दुर्बलता और सर्दी होने पर माताएँ थूहरके पत्तोंके रसमें अपने स्तन का दूध और राई भर हींग मिलाकर पिलाती हैं। इससे बच्चे प्रसन्न रहते हैं।

सन्निपात की दवा

थूहरके दूध में पीपल या हर्रेको तीन दिन भिगो कर सुखा लेना चाहिए। इसका दो टंक चूर्ण दस दिन सेवन कराने से सन्निपात रोग दूर हो जाता है।

जलोदर की दवा

थूहरके दूध तथा किरमालेके गूदेके रससे नीला थोथा, गन्धक, पीपलकी छा का चूर्ण पाँच

दिन खरल करके गरम जलके साथ नित्य एक माशे का सेवन करनेसे जलोदर रोग अच्छा होता है।

वायु रोग की दवा

थूहरपत्र, अरंडपत्र, बकायनपत्र, संभालू पत्र शोभांजनपत्र, और कनेरपत्र इन सबका रस, इन सब रसोंसे चतुर्थांश तेल और सोंठ इन सबको एकत्र कर पकाओ। रस जल–जलकर तेलमात्र रह जाने पर छानकर मर्दन करो तो सर्व बात रोग दूर होंगे। यह अष्टांग तेल कहलाता है।

जोड़ों की पीड़ामें

काँटेदार थूहर को फाड़कर पीड़–स्थान पर एक दिन रात बाँधे और कई एक दिवस इसी प्रकार करे तो दर्द दूर हो।

अजीर्ण और मन्दाग्नि की दवा

थूहर, आक, चित्रक, अरंडी, पुनर्नवा, तिल्ली, आँधीफोड़, कदली, पलास और डासरा (इन प्रत्येक का खार) अजवायन, अजमोद, जीरा सोंठ, कालीमिर्च, पीपर और सेको हुई हींग, इन सब

का चूर्ण अदरकके रसमें छः पुट देकर खरल करे। यह चूर्ण नित्य शीतल जलके साथ सेवन कराओ तो बहुत लाभ हो। इसे वैश्वानर चूर्ण कहते हैं।

दवना

इसे संस्कृतमें दमनक, दाँत, मुनिपुत्र, तपोधन, गंधोत्कर, विनीत और कलपत्र कहते हैं। हिन्दीमें दवना, दौना, म० दवड़ा, बं० चित्तरेटें, गु० डमरो, तै० सवित्रटेच, अं० वर्मबुड।

यह गुणमें कषैला, कड़वा, हृदयको हित-कारी, बलकारक और सुगन्धित है। यह सेवन करनेसे विषविकार, कोढ़, रुधिर—विकार, क्लेद खुजली और त्रिदोषको दूर करता है।

दशमूल

कई प्रकारकी औषधियोंके योगको दशमूल कहते हैं। उनके नाम ये हैं—शालपर्णी, पृष्टपर्णी, छोटी कटेरी, बड़ी कटेरी, गोखरू, खम्भारी पाड़र, अरणी और स्योनक। दशमूल त्रिदोशको नष्ट करने वाला। श्वाँस, खाँसी, मस्तक रोग, तन्द्रा, सूजन अफरा और अरुचि रोगमें भी प्रयोग किया

जाता है। यह गुणमें हल्की, बलकारी सुस्वादु, बात-पित्त नाशक और पुष्टिदा है। दशमूल, रास्ना, आँवला, खश, धमासा, गुरुच, धनियाँ और नागर-मोथाका क्वाथ पिलानेसे बादीकी बवासीर अच्छी हो जाती है।

दाख

संस्कृत–स्वादुफला, द्राक्षा, मधुरसा। हिन्दी–दाख। गु०–धाख। तामिल—कोडिमंडिरिष्पझाम। अंगरेजी—ग्रेपरोझिन्स लैटिन—वाइटिस, विनीफोरा।

पकीदाख--शीतल, दस्तावर, नेत्रहितकारी, पुष्टिकारी, भारी, स्वादु, स्वर–शोधक, मूत्रकारक, कफकारक, पुष्टिकर तथा ज्वर, श्वाँस, कामला, रक्त-पित्त-प्रमेह दाह और शोथ आदि रोगोंको नष्ट करता है। कच्ची दाख अल्प शक्तिवाली भारी, खट्टी और रक्त पित्त रोगोत्पादक है। दाख किसमिस और मुनक्काके ही समान गुणकारी है।

रक्तस्राव की दवा

दाख, चन्दन, लोद, गोदिनीके पुष्पको पीस

कर मधुके साथ १० दिन सेवन करनेसे सब प्रकारके रक्त पित्त रोग नष्ट हो जाते हैं रक्त-स्राव बन्द हो जाता है।

अरुचि की दवा

दाख, गिरी, धनियाँ, कुटकी, नागरमोथा, पिपलामूल, सोंठ और पीपलके चूर्णमें छदाम भर का क्वाथ १० दिन तक पिलानेसे कफ पित्त ज्वर, शूल, भ्रम, मूर्छा, अरुचि और उल्टीके रोग दूर होते हैं।

दुद्धी

संस्कृत–दुग्धि, स्वादुपर्णी क्षीरा, अविक्षीरिणी। हिन्दी–दुद्धि, दूधी, दूधिया। बंगला–क्षीरूइ। मराठी–दुधो, खिलकुला, गुजराती–दुधेली, नागार्जुनी।

दुद्धी दो प्रकार की होती है। एकके डंठल लाल, पत्ते भूरे और दूसरीके डंठल और पत्ते दोनों हरे रंगके पृथ्वीमें फैले हुए रहते हैं। पत्ते छोटे २ और अनीदार होते हैं। उसकी शाखाओं और पत्तेमें दूध होता है। गुणमें यह कफ को शान्त

करती और कोढ़, पाँवकी बेवाई, सूजाक, कृमि रोग और तिजारी रोगको हितकर और मूत्रकृच्छ्रको भी दूर करने वाली है।

दूब

यह दो प्रकार की होती है। एक हरी और दूसरी श्वेत। संस्कृतमें इसे श्वेतदूर्वा, गोलोमी और शतवीर्या कहते हैं। हिन्दी–सफेद दूब। मराठी–पांढरी, हरियाली। गुजराती–गोलीध्रो।

दूब, कषैली, स्वादु, बलकारक, जीवन शक्ति-वर्द्धक, कड़वी और शीतल है। रुधिर दोष और तृषा को हरण करती है।

खुजली की दवा

दूब, हर्रका छाल, सेंधानोन, पँवारके बीज, कनेरकी छाल, इन सबको काजी या छाँछमें पीस कर लेप करनेसे दाद-खाज और खुजली दूर होती है।

बवासीर की दवा

दूब, काली मिर्च, छोटी इलायची और मुलहठी को समान भागमें लेकर सात दिन तक पीनेसे बवासीरके रोगमें पर्याप्त लाभ पहुँचता है।

बवासीर की दवा

हरी दूबको लाकर पानीमें खौलाकर बफारा देनेसे बवासीर की पीड़ा शान्त होती है।

देवदारु

संस्कृत–दारुगंध, गंधमादिनी, तरुणी, तारा। हिन्दी–चाढ़, देवदारु।

यह एक प्रकारका पहाड़ी वृक्ष है। यह स्वाद में चरपरा होता है और खाँसी तथा कफ पित्त दोष और परिश्रम को दूर करता है। देवदारु, कायफल, भारंगी, नागरमोथा, धनियाँ, पित्त-पापड़ा, हर्रकी छाल, सोंठ, केवाँचकी जड़ को समान भागमें चूर्ण कर दो टंक भर का क्वाथ पिलानेसे बात, कफ, ज्वर खाँसी और सूजन नष्ट होती है।

धतूरा

संस्कृत–धतूर, धूर्त, धुत्तूरा, उन्मत्त, देवता, महामोहा, शिवप्रिय, मातुल, मदन। हिन्दी—धतूरा। बंगला—धतूरा। मराठी—धोतरा। का० मदकुड़िके। तैलंगू—नाल्लाउम्मीते। अरबी—जाजअलसिल। फारसी—तातूरह। अंगरेजी—इस्टेमूनियम।

धतूरेका वृक्ष अधिकसे अधिक दो ढाई हाथ का ऊँचा होता है। फूल सफेद और लम्बे आकार के होते हैं। धतूरा पाँच प्रकारका होता है। सबके फूलोंका रंग भिन्न २ होता है। किन्तु फल सबके एक समान गोल और काँटेदार होते हैं। धतूरा मादक, अग्निकारक, वातजनक, कड़ुवा, कषला, गरम, विषनाशक, पीड़ा निवारक, निद्राकर्ता और मूत्रवर्द्धक है। धतूरेको पीसकर नेत्रके ऊपर चारों ओर लेप करनेसे नेत्रका तारा फैलता है।

बिवाई की दवा

धतूरेका बीज और जवाखारको कड़वे तेलमें पकाकर बिवाई पर मलनेसे वह अच्छी हो जाती है।

मसूड़े की दवा

धतूरा, मजीठ, गोखरू, चमेलीकी पत्ती, कटेयाली, लोद, खैरसार और मुलहठीके क्वाथमें कड़ुवे तेलको पकाकर उस तेलका कुल्ला करनेसे मसूड़ेके समस्त रोग अच्छे होते हैं।

पगफूटनी की दवा

धतूरेका बीज, हल्दी, साँभरनोन और तिल्ली

को जलमें महीन पीसकर इन सबके बराबर गौका मक्खन और इससे चौगुना गौमूत्र सबको इकट्ठा करके आँचसे पकाओ। जब जल और औषधियां जलकर घी मात्र ठीक रह जावे, तब उसे छान कर पैरके तलुओंमें मर्दन करो तो पैरका फूटना बन्द हो जावे।

पीपल

संस्कृत–पीपली, मागधी, कृष्णा, वैदेही, चपला, कणा, शौंडी, कोला और तंडुला। हिन्दी–पीपली, पीपर। बंगला–पीपुल मराठी—पिंपली। कर्नाटकी—पिप्पली। गुजराती–लिंडा, पीपल पोपर। तैलगू–पिप्पलु। फारसी—फ़िलफिलदराज। अरबी—डार-फ़िलफ़िल। अंग्रेजी—लांगपेपर।

यह एक गुल्म जातिकी औषधिका फल है। मालव आदि देशोंमें अधिक होती है। पंसारियोंके यहाँ मिलती है। यह दो प्रकारकी होती है। एक छोटी दूसरी बड़ी। छोटी पीपर अधिक गुणकारी होती है। पीपल अग्नि दीपनकर्ता; बलकारक तथा पाकमें मीठी है। इसका स्वाद चरपरा है। यह स्निग्ध, वात और कफको हरण करनेवाली तथा

हल्की होती है। दस्तकारक, श्वाँस, खाँसी और उदर रोग को नष्ठ करती है।

खाँसी और ज्वरमें

पीपलके चूर्णको शहदमें मिलाकर खानेसे मेद, कफ, श्वाँस, खाँसी और ज्वर दूर होते हैं।

मन्दाग्नि की दवा

पीपलके चूर्णको गुड़में मिलाकर खानेसे जीर्णज्वर, मन्दाग्नि, खाँसी, अजीर्ण, हृदयरोग, पाण्डु और कृमिरोग दूर होते हैं, पर गुड़ पुराना होना चाहिये।

निद्राके लिए

पीपलीका चूर्ण मधुके साथ खानेसे नष्ट हुई निद्रा फिर आ जाती है।

यह वीर्यको बढ़ाती, दाह और ज्वरको दूर करती है। दमा, रक्तातिसार, प्यास और वमनको रोकती तथा वात, रक्त और फोड़ोंको लाभदायक है।

पुनर्नवा—गदहपुर्ना

संस्कृत—श्वेत पुनर्नवा, श्वेतमूला, दीर्घपत्रिका, शोथघ्नी।

हिन्दी—विषखपरा । बंगला—श्वेत पुनर्नवा । मराठी—पुनर्नवा । गुजराती–साटोडी ।

इसको कई जातियाँ होती हैं, जैसे सफेद, लाल तथा नीला । इनमें सफेद फूलवालेको विष-खपरा और लाल फूल वालेको साँठ या गदहपूर्ना कहते हैं । इसके पत्ते चौलाईके साकके समान एवं गोल, पर लाल किनारेदार होते हैं । यह कंकरीली और पथरीली जमीन पर अधिकतासे उत्पन्न होती है । यह प्रसर जातिको वनस्पति है तथा इसका क्षुप पृथ्वी पर फैला हुआ रहता है ।

यह कटु, किंचित्मात्र कषैलो, अत्यन्त अग्नि-कारक और वायुनाशक है । पाण्डु रोग, शोथ, वायुवृद्धि, कफाधिक्य, उदररोग, खाँसी, हृदयरोग, बवासीर और शूल रोगोंको यह नष्ट करती है । इसका समस्त अंग प्रयोगमें लेना चाहिये ।

यह तो हुस्ना श्वेत पुनर्नवा का वर्णन है । रक्त पुनर्नवा को संस्कृतमें रक्त पुष्प, शोथघ्नि, वृषकेतु और कपिल्लक कहते हैं । हिन्दी—सोंठ, गदहपूर्ना, मराठी—तावड़ीघेंदुली । गुज-राती—राती साटोडी । बंगला—लाल पुनर्नवा ।

इसका फूल लाल रंग का होता है। यह कड़वी, पाकमें चरपरी, शीतल, हल्की, वातकर्ता और ग्राही होती है। यह कफ और रक्त पित्तको दूर करती है। इसका भी सारा अंग प्रयोगमें लिया जाता है। मात्रा दोनों की बराबर है।

इसके अतिरिक्त जो नीली पुनर्नवा होती है वह भी गुणमें कड़वी, चरपरी गरम और कसायनी होती है। हृदयरोग, पांडुरोग, श्वास, बादी और कफ को हितकारी है।

वायुनाशक प्रयोग

(१) पुराने विषखपरा को छाल तथा जड़को घिसकर शहदमें मिला आँखकी फूली पर लगानेसे अधिक आँसू गिरना रुक जाता है।

बकराके दूधमें घिसकर लगानेसे आँखों पर का केश गिरना बन्द होता है और वहाँके केश फिर उग आते हैं।

तिमिर रोग की दवा

पुनर्नवाको जड़को भंगराके रसमें घिसकर

लगानेसे मोतियाबिन्द शांत रहती है। पहले हरें घिसकर फिर विषखपरा की जड़ घिसकर उसमें मिलाकर लगानेसे तिमिर रोग शान्त हो जाता है।

सर्प काटने पर

साँपके काटे प्राणीको विषखपरा का रस तुरन्त पिला देना अत्यन्त लाभकारी है।

वायुगोले की दवा

विषखपराके पत्ते और नमक मिलाकर खानेसे वायुगोला अच्छा होता है।

फालसा

संस्कृत—परूषक, अल्पास्थि परापर। हिन्दी–फालसा। बंगला–फलसा। का०–बेदहा। तैलगू–पुटकी। अंग्रेजी–एशियाटिक ग्रेविया।

फालसेके वृक्ष मध्यम आकारके होते हैं। इसके पत्ते बड़े पर बेलके समान एक-एक डालीमें तीन-तीन लगते हैं। फल दो-तीन एक साथ लगते हैं जो बच्चेपनमें हरे और पकने पर ऊदे रंगके हो जाते हैं।

कच्चे फालसे कषैले, खट्टे, पित्तकर्ता, कफनाशक तथा हल्के होते हैं। पके हुए फालसे पाकमें मधुर, शीतल, वृष्य भी, वृंहण और हृदयको प्रिय होते हैं। ये रुचिको बढ़ाते तथा पित्त को नाश करते हैं। मुसलमानी वैद्योंके मतानुसार फालसा, दिल, मेदा और जिगरके लिये हितकारी होता है। गर्म प्रकृति वालोंके लिये यह गर्मीके दस्तों और वमनको दूर करता है। हिचकी और प्यास को शान्त करता है। ज्वर की गर्मीको दबाता है। छातीमें दाह और पेशाब की जलन को मिटाता, सूजाक को अच्छा करता, पागलपन और छातीके धड़कन को शान्त करता है (१) इसके जड़ की छाल को टुकड़े २ करके सन्ध्या समय जलमें भिगो कर प्रभातमें छानकर पीनेसे पेशाब की जलन और पीड़ा का नाश होती है।

धनियाँ

संस्कृत–धान्यक, धानक, धान्य, धाना, धेनिक। हिन्दी–धनियाँ। बंगला–धनियाँ। मराठी–धणो, कोंकाथिवया। तैलङ्गी–काथमीलूँ।

गुजराती—धाणा। फारसी—कजबुर, कशनीजा। अरबी—तुख्मे कसनीज। इंगलिश—कोरिएन्डर फ्रूट।

यह एक क्षुप जाति का पौधा है। जिसका गुण कषैला, चिकना, मूत्रकारी और वमन तथा कृमिरोग नाशक है। त्रिदोष, ज्वर, तृषा, दाह, वमन, श्वांस, खाँसी और कृमिरोगमें भी इसका प्रयोग लाभप्रद है। पित्त का तो मानो शत्रु है। धनियाँ आंवला, अडूसा, दाख और पित्त पापड़ा को जलमें भिगोकर ठंडाईके समान पीस डाले और चार टंक छानकर पिलानेसे रक्त-पित्त-ज्वर दाह और प्यास सब दूर होता है।

नागरमोथा

संस्कृत—मुस्तक, मुस्त, क्रोड़, कसेरुक। हिन्दी—मोथा नागरमोथा। बंगला—मुथा। गुजराती—मोथा। कर्नाटी—भद्रमुस्त। तैलगू—तुगमुस्त। फारसी—मुश्क जमीन।

मोथा ठंडी जमीनमें होता है। एक प्रकार का हरित तृण है। इसकी कई जातियाँ होती हैं। परन्तु सबसे श्रेष्ठ नागरमोथा है। इसका पौधा ३ फीट

से अधिक लम्बा नहीं होता, ऊपरके सिर पर लम्बे पत्ते और लाल तथा भूरे रंगके फूल होते हैं। पथरीको तोड़ने, मुँह और शरीरकी दुर्गन्धि को दूर करने, बुद्धिको बढ़ाने और मैथुन शक्तिको उत्तेजित करने तथा मेदा और पट्ठों को बलिष्ट बनानेमें यह प्रधान गुण रखता है। इसका मंजन दांतोंको सुदृढ़ और चित्त को प्रसन्न करता है। यह शीतल, कफ-नाशक, पित्त-ज्वर, अतिसार, अरुचि प्यास और दाद तथा श्रम को भी दूर करता है। गुणमें शीतल, कड़वा, कषैला चरपरा, कांतिवर्द्धक विषघ्न और कफनाशक है। रक्त, पित्त कोढ़, और खुजलीमें भी इसका प्रयोग लाभदायक है। नागरमोथा, त्रिफला, लोद, मुलहठी और मिश्री को शीतल जलमें पीसकर धोनेसे रक्तज नेत्र रोग नष्ट होता है।

नारियल

संस्कृत--नारिकेल, दृढ़फल, लांगली, कूर्मसीर्षक, तुङ्ग, स्कन्धफल, तृणराज, सदाफल। हिन्दी--नारियल। मराठी-

नारलनाड़। गुजराती—नालाएर। तैलगू—ठकाया। का०—रमु। उड़िया—नड़िया। तामीरी—टेन्ना। अंग्रेजी—कोकोनट। अरबी—नारियल। फारसी—जोजहिन्द।

नारियल का वृक्ष ताड़के बराबर ऊँचा होता है। इसके पत्ते दो फुटसे लेकर चार फुट तक लम्बे आमने-सामने होते हैं। फूल, जैसा गेहूँ की बालमें से गेहूँ फूटकर निकलते हैं। किन्तु वह तीन पँखड़ियों वाला होता है और उसके भीतर वह छो केसर होती है। फलके बाहर कठोरता और बीचमें एक गिरा शीतल, दुर्जर, वस्तिशोधक, बलकारी, बात, पित्त, रुधिर और दाह रोग को हरण करनेवाली है। पित्त दोषमें तो यह अचूक लाभ पहुँचाता है। किन्तु पुरानी गिरी भारी, पित्तकर्ता विदाही और विष्टम्भी है।

नारंगी

संस्कृत—नारंग, नागरंगु, त्वक्सुगन्ध, मुखप्रिय। हिन्दी—नारंगी। मराठी—नारंग। कर्नाटी—माधवला। तेलगू—दयाकाया। तामिळी—किविल। उड़िया—दारंगी। अरबी—नारज। अंग्रेजी—आरेंज। लैटिन—सादट्रूमओरेटियम।

यह एक क्षुप जातिका पौधा है जिसके पत्ते नीबूके समान और फूल सफेद रंगके पाँच पँखड़ियों वाले होते हैं। नारंगी मधुर, खट्टी, दीपन और वातनाशक है। इसकी छालको हकीम लोग गरम कहते हैं। पर इसका रस खट्टा होनेके कारण शीतल और मिठासके कारण ठंड पहुँचाने वाला होता है। पित्त प्रकोपके कारण आनेवाली वमन को यह बन्द करती तथा पाचन शक्तिको बढ़ाती है। वमनके समय जब नारंगी का रस दिया जाय तो पहले खाँड़ अथवा शहदके साथ मिलाकर थोड़ी देर रखकर देना चाहिए। संतरा और नीबूकी छालको सुखाकर कूट पीसकर चूर्ण करले और पुनः मीठे तेलमें उसे भिगो दे। पश्चात् निचोड़कर वह तेल सर्दी की सूजन पर मालिश करनेसे विशेष लाभ होता है क्योंकि यह तेल गरम तथा रूखा है। फूल और पत्तोंसे भी इसी प्रकार तेल निकलता है, उसका भी गुण वैसा ही होता है।

नारंगीकी छाल खानेसे पेटके कीड़े मर जाते हैं। पित्त की अधिकताके कारण दर्द करता हुआ मस्तक और वमनके लिए नीबू का रस अचूक लाभ करता है। रक्तदोषमें नारंगी अत्यन्त लाभदायक है। नारंगोकी छाल का चूर्ण भग्नाशया और श्वेत चीनीका शीरा इन तीनों को मिलाकर देनेसे सन्धिवात, दर्द और बदहजमी दूर होती है। नारंगीके अर्कमें सेंधानमक, कालीमिर्च पीस-कर पीनेसे पित्त और दाह शान्त होता है। नारंगी का अर्क ४ तोला, सफेद इलायची ५, मिश्री १ तोला पीसकर देनेसे पित्तजनित दाह शान्त हो जाता है। पुराने नासूर पर नारंगीका गूदा सेंक कर बाँधनेसे घाव शीघ्र भर जाता है। कपड़ोंमें संतराका फल रखनेसे कीड़े नहीं लगते। विष-प्रकोपमें भी यह उत्तम लाभ पहुँचाती है। नारंगी पित्तनाशक और रक्तशोधक है।

नीबू

संस्कृत—निंबू, निंबूक । हिन्दी—नीबू । बंगला—पाति-

लेवू। कर्नाटकी-कचिले। फारसी-लेमु। अंग्रेजी-लेमन्स। लैटिन-लेमोनएसिड।

नीबू खट्टा, वातनाशक, दीपन, पाचनकर्ता तथा हल्का होता है। नीबू कृमिनाशक, तीक्ष्ण, उदर पीड़ाको हरनेवाला तथा अरुचि, मंदाग्नि, क्षयरोग, वातव्याधि, कण्ठावरोध और विसूचिका रोगमें लाभदायक है। मीठे नीबूका गुण स्वादु, गुरु, वात, पित्तनाशक, विषघ्न, विष तथा रक्तदोष नाशक है। बलकारक, पुष्टिदा, अरुचि, तृषा और वमनका निवारक है। नीबूका अचार खानेसे अजीर्ण दूर होता है। इसके अचार कई प्रकार के होते हैं। पर नमकीन अचार ही अधिक लाभकारी है। नीबूके रसको सायंकालमें खानेसे प्रातःकालमें होनेवाली अजीर्णकी वमन दूर होती है। संधिवात सदृश रोगोंमें नीबूका रस जवाखार और शहदको मिलाकर दिया जाता है।

नीम

संस्कृत—निम्ब, पिचुमर्द, पिचुमन्द, तिक्तक, अरिष्ट, परि-

भद्र। हिन्दी--नीम। बंगला--निम। मराठी--कटुनिम्ब। कर्नाटी--वेव। गुजराती--लिंवडी। तैलगू--वेपा। अर०--आज़ाददरख्त। फारसी--दरख्त हक। अंग्रेजी—निम्बट्री।

नीम का वृक्ष बड़ा होता है। पत्ते छोटे और कँगनीदार और अनीदार होते हैं। फूल श्वेत रंगका छोटा तथा पाँच पंखड़ियोंवाला झुमकदार होता है। फल अर्थात् निबौरी खिरनीके समान होती है। इसकी लकड़ी पीले रंग की होती है इसके बीज ज्वरघ्न हैं। बसन्त ऋतुमें इसमें फूल लगते हैं। नीम शीतल, हल्का, ग्राही, पाकमें कटु, वात हरणकर्ता, हृदय को अरुचिकारी और श्रम-शान्ति कर्ता है। तृषा, खाँसी, ज्वर, कृमि, व्रण, पित्त, कफ, वमन, कुष्ट और प्रमेह रोगोंमें इसका प्रयोग अत्यन्त लाभदायक है। नीम अथवा निबौड़ी खानेमें कडुवी और पाकमें कटु, दस्तावर तथा कृमि और प्रमेहको दूर करने-वाली है। अवस्थानुसार छाल और पत्ते प्रयोगमें लिए जाते हैं। इसकी मात्रा दो माशे की होती है।

नीमका पत्ता और गेहूँके चोकरकी पुल्टिश

बाँधनेसे फोड़ेकी गाँठ बैठ जाती है। शीतलाके घाव पर नीमका पत्ता पीसकर लेप करना चाहिये। नीमके पत्तों का रस पान करनेसे पेटके कीड़े निकल जाते हैं। नासूर रोग पर नीमके पत्तों और तेलकी पुल्टिश बाँधनेसे दर्द दूर हो जाता है और घाव अच्छा हो जाता है। कुष्ट रोग और गाँठ युक्त फोड़ेके ऊपर नीम का तेल लगाना चाहिये। कुष्ट रोगीको चाहिये कि १ तोला नीम का तेल नित्य सेवन करे। नीमके पत्तों का बफारा देनेसे घाव और घावकी सूजन अच्छी हो जाती है। नीमके कच्चे पत्तोंकी पुल्टिश बाँधनेसे फोड़ा शीघ्र फूट जाता है। नीमके पत्तों का क्वाथ कालरा (हैजा) के आक्रमणमें लाभकारी है। नीमके कोमल पत्ते ७, काली मिर्च ४, दोनों को पीसकर सेंधा नमक डालकर पीनेसे ज्वरका प्रकोप शान्त होता और फोड़े फुन्सीके घाव अच्छे होते हैं। नीमकी पत्तीका अर्क पीनेसे रुधिर दोष नष्ट होता है। नीमकी मींगी, रसौत और कपूर को

बराबर मात्रामें लेकर पीस डाले, उस लुब्दी को बवासीर रोगके मस्सों पर लगानेसे दर्द और खुजली शान्त हो जाती है। नीमकी पत्ती और मोमको सरसों अथवा अलसीके तेलमें जलाकर, घोटकर मलहम बना ले। इस मलहमके लगानेसे फोड़ेके घाव भर जाते हैं।

नील

संस्कृत—नीली, नीलिनी, तूली, कालदोला, श्रीफली, तुच्छा, ग्रामीण, मधपर्णिका, कालकेशी, नीलपुष्पा। हिन्दी—नील, लील। मराठी—गुली। गुजराती—गली। कर्नाटी—हिरिप नीली। तेलगू—नीलीजेट्ट। अंगरेजी—इंडिगो।

नीलका वृक्ष मेथीके शाक-वृक्षके समान होता है जिसमेंसे नील रंग निकलता है। नील रेचक, कड़वी, बालोंको उत्तम और मोह, भ्रम नाशक है। जिनके बाल सफेद हो गए हों उन्हें चाहिए कि बालों पर पहले मेंहदीके पत्तों को पीसकर लगावे। ऐसा करनेसे जब बाल लाल हो जाँय तब फिर उनपर नीलके पत्तों को पीसकर लगा दें।

फिर तो बालका रंग ठीक-ठीक काले भौंरके समान हो जाता है। मात्रा दो माशे की है।

पटोल या परवल

संस्कृत—पटोला, कूलक, राजीफल, पांडुफल, राजेय, अमृतफल, बीजगर्भ, प्रतीक, कामभंजन। हिन्दी—परवल। बंगला—वछतालता, पटोल। मराठी—कटुपडवल। तैलगू—कोम्बुपुडले। तामिली—सेसपसला; कर्नाटी—मोरहठी।

यह एक प्रकारका लता वृक्ष है। इसके पत्ते तीन या चार इञ्च लम्बे और दो इञ्च चौड़े, कुछ नोकीलेदार और काली हरियाली लिए होते हैं। फूल सफेद होता है। परवल पाचक, हल्का गरम खाँसी, रक्त और ज्वर तथा कृमि दोष को दूर करता है। परवल की जड़ पीसकर पीनेसे सुख पूर्वक दस्त आते हैं। परवलकी लता कफका हरण करनेवाली, पत्ते पित्तनाशक और फल त्रिदोषको नष्ट करने वाले हैं। परवल की जड़ का क्वाथ पिलानेसे पित्तकी मसूरिका अच्छी हो जाती है।

पान

संस्कृत—ताम्बुवल्ली, ताम्बूल, नागिनी, नागवल्ली।

हिन्दी—पान, नागरवेल का पान। गुजराती—नागवेल। फारसी—तम्बोल। अंग्रेजी—बिटिललीफ।

पानके कई भेद हैं और सब अपने-अपने भेदानुसार कुछ न्यूनाधिक्य गुण रखते हैं। प्रत्येक प्रान्तों का पान भिन्न-भिन्न ढङ्ग आकार-प्रकार का भिन्न-भिन्न गुण और स्वाद का होता है, जिन सबका वर्णन यहाँ नहीं हो सकता। ताजा तोड़ा हुआ पान खानेसे मुख रोग तथा जड़ताका नाश होता है। बात, पित्त तथा कफ—वृद्धिकर्ता, जलन उत्पन्नकर्ता, अरुचि को बढ़ाने वाला तथा रक्त रोगों का उत्पन्नकर्ता और (वमन) लाता है। पका हुआ पान रुचि उत्पन्न करता है, शरीरके वर्ण को उत्तम करता है और त्रिदोष का नाश करता है। पान की नसें खानेसे शिथिलता आती है और रक्त सूख जाता है। सूखे और गले हुए पान चर्मरोग, दाँतोंके रोग और मुँहके रोग पैदा करते हैं। पान की जड़ खानेसे व्याधियाँ उत्पन्न होती हैं। पान का अग्र

भाग अर्थात् फुनगियों को खानेसे भी विकार उत्पन्न होते हैं। पानका फल हृदयको हित करने-वाला, सुगन्धयुक्त, कफ और बात का नाश करने-वाला है। पान कत्था, कफ और पित्तनाशक है। चूना बात कफका नाशक है। सुपारीमें भी वही गुण है। अतएव कत्था, चूना और सुपारीके साथ पान खानेसे तीनों दोषों का नाश होता है, शरीर हल्का और मुख सुगन्धयुक्त होता है। प्रातःकालका खाया हुआ पान उस दशामें बहुत लाभकारी होता है जब उसमें सुपारी कुछ अधिक मात्रामें हो। दोपहरमें कत्था और रातमें चूना अधिक श्रेयस्कर है। पान की पहली पीक विषके समान है। दूसरी पीक भारी और दस्तावर है। अतएव पान खाकर पहली और दूसरी पीक अवश्य थूकनी चाहिए। इसके बादकी सभी पीकों को निगल जाना लाभदायक है।

जुलाब लेने तथा भूख लगने की दशामें अधिक पान न खाना चाहिये। यदि उस दशामें

पान खाया जाय तो शरीर, आँख की रोशनी, बाल, दाँत, कान, बल और अग्नि नाश होता है। ऐसी दशामें शोष भी हो जाया करता है। पित्त, बात और रुधिर की वृद्धि होती है।

निर्बल, दाँतों की बीमारी, आँखके रोगी मनुष्योंको अथवा विष खाये हुए एवं मूर्छित, नशा खाकर मतवाले तथा मुँह नाक, कान आदिसे खून निकलने वाले रोगीको पान खाना हानिकारक है।

(१) पान का पत्ता हर्रे की छाल और कूटको जलमें पीसकर शरीरमें मालिश करनेसे शरीर की दुर्गन्धि जाती रहती है।

प्याज

संस्कृत—पलाँडु, यवनेष्ट, दुर्गन्ध, मुखदूषक। हिन्दी—प्याज। बंगला-पेयाज। मराठी-कांदा। कर्नाटी-लोहिबीउल्ली। गुजराती-डुंगरो। तेलगू-नीरउल्ली। फारसी-अस्कील, वसुलल्फार, उन्सल्, अस्कीलल्अविमज, अंगरेजी-एलियम।

यह क्षुप जातिका पौधा है जो खेतोंमें बोया जाता है। इसका वृक्ष लगभग दो फुट लम्बा

होती है। पेड़में पत्ती होती है जो हरे रंग की पीली और गोल होती हैं। इसी पेड़की जड़ की गांठ को प्याज कहते हैं।

प्याज पित्तनाशक, कफ दोषको नष्ट करने वाली, शीतल, गाढ़ी नींद लानेवाली दीपन और अत्यन्त उत्तेजक है। यह स्वभाव को कोमल करती, वायुको शमन करती, पेशाब और मासिक स्रावको आरंभ करती और वायु-नाशक है। सर्दीसे उत्पन्न हुई सूजनोंमें प्याज को पकाकर बाँधना चाहिए। खट्टी डकार और जल-विकार को नष्ट करती है।

धातु पुष्टि की दवा

प्याज सफेद तथा लाल दो प्रकार की होती है। लाल प्याज शीतल और पित्त कफ को नाश करने वाली है। प्याज का रस ५ तोले और शहद ५ तोले लेकर आग पर चढ़ाकर औटानेसे जब तारदार चाशनी बन जाय, तब उतार लेना चाहिए। इस चाशनी को सेवन करनेसे धातु पुष्ट होती और शक्ति बढ़ती है।

नेत्र हितकारी सुर्मा

प्याजके रसमें १ छ० कलमी शोरा डालकर मंद-मंद आँच पर ऐसा पकाना चाहिये कि, जब प्याज का रस जलकर केवल शोरा मात्र शेष रह जावे, तब उसे उतार शीशीमें बन्द कर रख दे। नेत्रोंकी धुन्ध मिटानेके लिए यह अचूक सुर्मा है।

श्वेत दागों पर

प्याजका रस निकालकर बारम्बार पिलानेसे कै दस्त शीघ्र बन्द होती है। शरीरके गंज और श्वेत दागों पर प्याज का अर्क मलनेसे यह रोग अच्छा हो जाता है। प्याज खानेसे भूख बढ़ती है।

पित्तपापड़ा

संस्कृत–पर्पट, पर्पटक, वरतिक्त। हिन्दी–पित्तपापड़ा, दवनपापड़ा। बंगला–क्षेतपापड़ा। गुजराती–खडसलोओ, पीठपापड़ो। अरबी–शहतरज। फारसी–शाहतरा। अंगरेजी–जस्टिस। याप्रोकंवेस।

सूखा पित्तपापड़ा पुराने ज्वर और वात रोग और बालों को हितकारी है। भूख को बढ़ाने वाला, स्वभाव को कोमल करने वाला और इसके पत्तोंका रस मेदे को बलिष्टकारक है।

मसूरिका पर

पित्तपापड़ा, नीमकी छाल, पटोल, खस, दोनों चंदन, कुटकी, आँवला, अड़ूसा और जवासे का क्वाथ मिश्रीके संयोगसे पिलाओ तो पित्त को मसूरिका अच्छा हो।

ज्वर की दवा

पित्तपापड़ा ४ मा०, काली मिर्च ७, दोनों को पीसकर फंकी लगा गरम जलका घूँट पीनेसे ज्वर शान्त होता है। यथा—

पित्तपापड़ा १ तो०, काली मिर्च सात दाने को पीसकर पानीमें औटाकर सेंधानोन मिलाकर पीनेसे सब प्रकार का ज्वर अच्छा हो जाता है।

पवाँर

इसे संस्कृत में चक्रमर्द, प्रपुन्नाट, दद्रुघ्न; मेषलोचन, पद्माट, एडगज, चक्री और पुन्नाट कहते हैं। हिन्दी में पमाड, चकवड़, हरमल, बं०—चाकुन्दा, म०—टांकला, का०—चगचे, के०—तरवटा, गू०—कुवाडीओ, तै०—ताटेयमु, फा०—संजिसबोया, ला०—कश्या आवेटा।

यह क्षुप जातिकी बनस्पति है। इसके फल

पीछे होते हैं। इसमें फली लगती है जिसमें काले रंगके बीज निकलते हैं।

यह गुणमें लघु, स्वादु, रूक्ष, पित्त बात-नाशक और हृद्य तथा शीतल होता है। कफ, श्वास, कुष्ट, दाद, कृमिरोग इनको नष्ट करता है।

पमारका फल ऊष्ण और कटु तथा कोढ़, खुजली, दाद, विषरोग, बादी, गोला, खाँसी, कृमि और श्वास इन सबको नष्ट करता है।

दाद और खुजली की दवा

पवाँरके बीज लेकर उन्हें पानीमें भिगो देवे। जब सड़ जाय तब पीसकर मले। फिर उसी जलसे स्नान करे।

छीप की दवा

पवाँरके बीज जौकुटकर दहीके पानीमें मिलाकर दो-तीन दिवस रक्खे। फिर शरीर पर मलकर नहा डाले।

पालक

पालक्या, वास्तुकाकारा, छुरिका और चीरतच्छदा इसके

संस्कृत नाम हैं। हिन्दी—पालक, बं—पालेक, म०—मालख, का०—पालक्य, फा०—इस्फनाख, इं०—स्पाईनेज।

यह गुणमें वातकर्ता, शीतल, कफहारी, दस्तावर, भारी और विष्टम्भकारी होता है। यह मद, श्वास, रक्तपित्त और कफको दूर करता है।

दाद को दवा

पालक, जुही को जड़ नीबूके रसमें रगड़कर मले और इनके पत्ते भी रगड़ना गुण करता है।

बनप्सा

यह एक पहाड़ी घास है। इसके पत्ते और जड़ काममें लाए जाते हैं। यह पित्तके दोषोंको मलके रास्तेसे बाहर निकालता है। प्यास और हृदयकी गरमीको शान्त करता है। छाती और गले की खरखराहट को मिटाता है। सूजनोंको पचाता है। मसाने की जलनको शान्त करता है।

खाँसी की दवा

खाँसी के लिए हितकर और नींद लाने वाला है। बनप्सा, गावजबाँ. मुलहठो, लसौड़ा और काली मिर्च तथा मिश्री का क्वाथ बना कर तीन

दिन पीनेसे जुकामके कारण शरीर तथा शिरका दर्द, रुकी हुई सर्दी और उससे उत्पन्न ज्वर दूर हो जाता है।

बरगद

संस्कृत–वट, रक्तफल, शृङ्गी, न्यग्रोध, स्कंधज, ध्रुव, क्षीरी, बहुपाद, वनस्पति। हिन्दी–बड। बंगला–बट। कांगड़ी–आल। उड़िया—बोरू। तेलगू—मूरोलचट्टू। फारसी—दरख्ते रेशा। अंग्रेजी—बेनियंट्री।

बरगद का वृक्ष बहुत बड़ा होता है। इसके पत्ते भी लम्बे चौड़े और मोटे होते हैं। फल छोटे और गोल तथा लाल रंगके होते हैं। इसकी शाखाओं से लाल अंकुर निकलते हैं। कोमल अवस्थामें इसको बड़की दाढ़ी कहते हैं। जब यही खूब बढ़ जाती है, तब बरोह कही जाती है। यह बढ़ते २ जमीनमें पहुँचकर जमजाती है और इसप्रकार बरोहके भी वृक्ष हो जाते हैं। और तब यह बरगदके वृक्षको बहुत दूर तक फैला देती है। बरगदके वृक्षसे बड़ा और सघन छायावाला कोई भी वृक्ष नहीं होता।

गुण—बरगद शीतल, भारी, कषैला, कफ और पित्तको दूर करता है तथा देहका वर्ण उज्वल करता है। यह वर्णरोग, विसर्प और दाहका भी नाशक तथा दस्तोंको बन्द करनेवाला है। पित्त और वात्त दोषको दूर करता और फोड़े फुन्सियोंको अच्छा करता है। इसका दूध सूजनों को पचाता है, धातुको पुष्ट करता है। बवासीर और प्रमेहको लाभ पहुँचाता है। स्वप्नदोष पेशाब और पखानेके बाद वीर्य निकल जानेको तथा धातु दोषोंको भी नष्ट करता है।

धातुपुष्ट की दवा

यदि किसीका वीर्य (धातु) पेशाबके मार्ग से बाहर निकल कर चूनेके समान जम जाता हो तो बरगदका दूध बताशेके अन्दर भर कर प्रातः काल बासी मुँह खानेसे अवश्य लाभ पहुँचता है। और यदि नित्य प्रातः बरगदका दूध खाया जाय तो धातु अत्यन्त पुष्ट होकर स्तम्भन शक्तिको बढ़ाता है।

स्तनोंको कड़ा करना

बरगदका ताजी बरोहको पीस कर स्त्रियोंके लटके तथा ढीले हुए स्तनों पर लेप करनेसे शीघ्र ही बहुत कड़े हो जाते हैं।

सुखण्डी की दवा

बरगद का दूध बताशेमें खिलानेसे बच्चोंका सुखण्डी रोग अच्छा होता है।

बहेड़ा

संस्कृत—विभीतक, विभीतकी, अक्ष, कर्षफल, कलिद्रुम, भूतवास, कलियुगालय। हिन्दी, बंगला—बहेड़ा, बहेरा। मराठी—बेहेड़ा। तमिली—तानिकाईक। का०—तारे। गुजराती—बेहेडां। फारसी—बलेलज, बलेलय। लैटिन—टस्मोनेलिया बेलेरिका। अंग्रेजी—बेलेरिक माइरबालम।

यह शाखी जातिके वृक्षका फल है। बहेड़ा का वृक्ष ऊँची जमीन में होता है। इसके पत्ते महुएके समान और फूल बहुत बारीक होते हैं। भारतवर्षमें बहेड़ेका वृक्ष प्रायः सभी स्थानोंमें पाया जाता है। बहेड़ेका रस मीठा और पाकमें कषैला है। यह फल पित्तको हरण करने वाला, खाँसी

का नाशक, नेत्रहितकारी, बालोंको उत्तम दृढ़कर्ता और कृमि रोग तथा स्वर-भेदको नष्ट करता है। प्रयोगमें बहेरेकी छाल और फल काममें आता है।

अफरा की दवा

मुसलमानी वैद्य इसे अग्निवर्द्धक, पाचक, खुलासा दस्त करनेवाला, बदहजमी और अफरा (पित्त) से जो मस्तक पीड़ा होती है। तथा उससे आँख दुखती हो, इस पर लेप करनेसे लाभ होता है।

नेत्र रोग में

आँखें दुखती हों तो बहेड़ेको शहदमें घिसके लगावें या लेप करें।

तथा—

जलंधर, दस्त, बवासीर, कोढ़ और खाँसी की बीमारियोंमें देनेसे लाभ होता है। यह भेदनाशक और शुक्र दोष हरता है।

तथा अन्य—

बहेड़ेके पेड़की छालका काढ़ा कोढ़ और पाण्डुरोगको दूर करता है।

हाथ-पाँव की जलनमें

बहेड़ेके बीज को पानीमें घिसकर चुपड़नेसे हाथ-पाँव का दाह मिट जाता है।

नेत्रों की ज्योति बढ़े

साढ़े तीन माशे बहेड़ा और इतनी ही खाँड़ मिलाकर सबेरेके समय गरम पानीके साथ फाँकनेसे आँखों की ज्योति बढ़ती है।

श्वास खाँसी की दवा

एक समूचा बहेड़ा लेकर उसके ऊपर घी चुपड़ दे और आटेमें बन्द कर पुट पाक की रीतिके अनुसार पका दे। पीछे बहेड़ा निकालकर उसकी छाल को सेवन करे। यह अकेले ही अत्यन्त प्रबल श्वास और खाँसी को दूर करता है। थोड़ी-थोड़ी छाल मुँहमें डाल कर चूसना चाहिए। औषधि सेवन की अवस्थामें खटाई, मिर्चा तथा स्त्री प्रसंगसे परहेज करना आवश्यक है।

बादाम

संस्कृत—वाताद, वातवैरी नेत्रोपमफल। हिन्दी—बादाम। तैलगू-बेदम। अरबी-लौज। अंगरेजी-स्वीटअलांड।

इसके वृक्ष महुए की तरह काबुल और

मालावारमें अधिकतासे होते हैं। पत्ते लम्बे और गोल होते हैं। इसकी मिंगी, मधुर, वृष्ण, वात-पित्तनाशक, स्निग्धोष्ण, कफवर्द्धक तथा रक्त पित्तवाले रोगियोंको हितकर नहीं है। यह मस्तिष्क और शरीर को बलवान् तथा सुन्दर और सुदृढ़ बनाता है। आँखों की रोशनी को बढ़ाता है, कण्ठको कोमल बनाता, हृदयको लाभ पहुँचाता, वीर्य पैदा करता और गाढ़ा कर बलवान बनाता है। सूखी खाँसी को यह हितकर है। सुजाकके लिये यह हितकारी तथा वायुका शमन करता है।

कच्चाबादाम—भारी, सीरक, पित्तको उत्तेजित करनेवाला तथा कफ और वायुके दोषों को नाश करता है। पका बादाम—मधुर, वृष्ण, स्निग्ध, पुष्टिकारी, वीर्योत्पादक, कफ उत्पन्न करनेवाला तथा रक्त पित्त और वात पित्तको नाश करता है। सूखा बादाम—मीठा और धातु को बढ़ानेवाला, अत्यन्त बल को बढ़ानेवाला, किंचित् पित्त को उत्पन्न करनेवाला तथा कफके दोषों और वात पित्त को नाश करता है।

बादाम का तेल, बाजीकर, मस्तकके समस्त रोगोंको नाश करनेवाला और दिमागको बलवान् बनानेवाला होता है। यह पित्त, बात और दाह को नाश करता है। मुखाकृति को सुन्दर और चमकदार बनाता, प्रमेह उत्पन्न करता तथा शीतल है।

एक प्रकार का कड़वा बादाम भी होता है जो सूजनों को पचाता, शरीर को शुद्ध करता, दूषित खूनको जलाता, सूखी और तर दोनों ही खांसियों को लाभदायक, छातीकी खरखराहट और फेफड़े की सूजन को मिटाने वाला, जिगर की बिमारियों और कामलामें हितकर है। यह पथरी को तोड़ता है। ४॥ माशा बादाम शहदमें रगड़कर खिलाने से पागल कुत्ते का काटा जहर नष्ट होता है।

बायविडंग

संस्कृत—विडंग, कृमिघ्न, जन्तुनाशन, तंडुल, वेल्ल, अमाघा और चित्रतंडुला। हिन्दी—वायविडंग, बंगला—विड़ंग। मराठी—गुज०—बायडींग, कारकुनी। कर्नाटकी—पायुवीडङ्ग। तामिली—वायविल। तेलगू—वायविडंथमु। फारसी—वीरंजकावली। अंगरेजी—वेम्रेंग।

बायविडंगका स्वाद उत्तम, कुछ कषैला और

कुछ सुगन्धियुक्त होता है। माताके दूधमें अथवा गौके दूधमें बायविडंगके थोड़े दाने मिलाकर देनेसे बालकोंके पेटमें बादी का रोग नहीं उत्पन्न होता। बायविडंग पसारियोंके यहाँ मिलता है। यह कृमिनाशक, विरेचन, गुल्म-शूल-नाशक, खाँसी और श्वास रोगको भी हरण करनेवाला है। इसका जुलाब भी लिया जाता है।

(१) इसको पानीमें मिलाकर पीनेसे पेटके कीड़े निकल जाते हैं।

(२) बायविडंगके ऊपरकी छाल, साबूदाना और मक्खन एक साथ मिलाकर देनेसे दस्तोंका आना बन्द हो जाता है।

(३) इसको नीबूके रसमें मिलाकर देनेसे आंव का पड़ना बन्द हो जाता है।

बाँस

संस्कृत—वंश, वेणु, शतफली, त्वचिसार, तृण-ध्वज। हिन्दी और बंगला—बाँस-श। मराठी—वाँबू। कौ०—वेलू। तैलगू—वेन्ने-ग्रक्। तामिली—मंगल्। फारसी—कसव। अंगरेजी—बम्बूकेन।

बाँसका वृक्ष बहुत लम्बा और पतला गांठ-

दार होता है। वृक्षका फल घासके फूलके समान होता है। बाँसके कई भेद हैं। स्थाना-भावके कारण सब नहीं लिखे जा सकते। गुणमें सभी समान हैं। बाँस—खट्टा, कषैला कुछ कडुवा और शीतल है। मूत्रकृच्छ, प्रमेह, बवासीर, पित्त, दाह और रुधिर रोगोंमें इसका फल प्रयोग किया जाता है।

बिजौरा

संस्कृत में इसे बीजपूर, मातुलुङ्ग, फलपूरक कहते हैं। हिन्दी में बिजौरा, बंगला में टावालेबू, मराठी में महालुङ्ग, गुजरात में बीआरू, तेलंग—दवाकावा, कर्नाटी—मादवाला, उड़िया—कलंबा, अरबी—उतरंज, फारसी—तुरंज, लाटिन—साइट्र-समेडीका कहते हैं।

इसका वृक्ष छोटा, पत्ते नीबूके समान छोटे-छोटे कँगनीदार होते हैं। फल, लम्बा, गोल, अनीदार और खरदरी छाल का होता है। यह रसमें स्वादु खट्टा, दीपन, हल्का, रक्त, पित्त, श्वाँस, खाँसी और तृषा को हरण करता है। यह कण्ठ, जिह्वा और हृदय को शोधन करता तथा हितकर है।

बात शूल को दवा

सोंचर नोन १ टंक, जीरा ३ टंक, कालो मिर्च ४ टंक, सबको चूर्ण कर अम्लवेतके रस की सात पुटमें बिजौराके रस की सात पुट देकर चार-चार माशे की गोलियाँ बना ले। उस गोली को गरम जलके साथ देनेसे बात शूल दूर होता है।

ब्रह्मदंडी

इसे भारतवासी अनेक भाषाओंमें ब्रह्मदण्डी हा कहते हैं।

इनके पत्तों और फलों पर काँटे होते हैं। कफ और सूजन की बिमारियोंमें इसे देते हैं। खारिश, खुजली, दाद आदि चर्म रोगोंमें इसका काढ़ा बड़ा गुणकारी है।

संस्कृत--ब्राह्मी, ब्रह्ममंडूकी, कपोतबंका, सरस्वती, सोमवल्ली। हिन्दी--ब्राह्मी। बंगला—ब्राह्मीशाक। मराठी—ब्राह्मो। फारसी--जरनब। ला०—हैड्रोकोटाइलएसिआटिका।

ब्राह्मीकपोत वंकाच-सोमवल्ली सरस्वती,
मंडूकपर्णी मांडूकीत्वाष्ट्री-दिव्या महौषधी।

यह पहाड़ी जलाशयों और नदियोंके किनारों पर मिलती है।

मंडूकपर्णी

ब्राह्मीकी एक जाति मंडूकपर्णी भी है। इसे संस्कृतमें महौषधि, माण्डुकी, दिव्या, त्वाष्ट्री। हिन्दीमें ब्रह्ममाण्डुकी, मडुकपानी। बंगला—थुलकुडी।

ये दोनों ब्राह्मी प्रसर जातिका औषधि है। दोनों शीतल, तर, कड़वी, हलकी, स्मरण शक्ति को बढ़ानेवाली, कषाय, मधुर, स्निग्ध होने पर स्वादिष्ट, आयु को बढ़ाने वाली, स्वर को शुद्ध करने वाली रसायन है।

ज्वर, सूजन, प्रमेह, रक्तदोष, विषदोष, पांडु, कोढ़ आदि इससे दूर होते है। इसके स्वरस की मात्रा दो माशे है। इसका दर्प दूर करनेवाला मलयाचन्दन और गुलाब जल है। दालचीनी इसकी प्रतिनिधि है।

प्राचीन महर्षियोंने यह सिद्ध किया है कि, इस बूटीके सेवनसे स्मरणशक्ति बढ़ती है। अतः विद्यार्थियोंके बड़े काम की है। उन लोगों को भी लाभदायक है कि जिनका दिमाग कमजोर है।

इसके पत्तों का घीमें घोंटकर पिलानेसे स्वर-भंग दूर होता है। और इसके पत्तोंके रसमें कूट और शहद मिलाकर पागलों को देते हैं।

बावची (बाकुची)

संस्कृत—सोमवल्ली, सोमराजी, शशिलेखा, सोमा, कृष्णफल अवल्गुज। बाकुची। हिन्दी—बावची। बंगला—सोमराज। मराठी—बाँवचा। कर्नाटी—बवचिगे। तैलगू—तिप्पतोगे। तामिली—तोगिविहलु। ला०—सोरालिआ कोरिलीफोलिआ।

यह क्षुप जातिकी औषधि है। इसके पत्ते मोटे २ गोल और कंगूरेदार होते हैं। बालों की फूलोंका गुच्छा होता है। बावचीके काले २ चपटे दाने इन्हीं बालोंमें होते हैं।

यह मधुर, तिक्त और पाक करने पर कटु, रसायन, विष्टंभनाशक, कफनाशक, रक्त-पित्त-नाशक, रूखी, रोचक, सारक और शीतल है।

ज्वर, प्रमेह, कृमिरोग, कुष्ट, श्वाँस को दूर करती है। इसकाफल पित्त पैदा करता है। यह बालों को लाभदायक है। त्वचाके रोगों को दूर करता है।

खाँसी, सूजन, वादी, वमन, कफ, कुष्ट और कमलका नाशक है। औषधिमें बीज ही लिया जाता है। इसकी मात्रा १ माशे की है।

श्वेत कुष्ट की दवा

कुछ वैद्योंके मतसे यह दस्तावर और उत्तेजक है। बाबचीके बीजका तेल श्वेत कुष्ट पर बड़ा फायदा करता है।

बालछड़ (जटामासी)

संस्कृत—जटामासी, भूतजटा, तपस्विनी मांसी। हिन्दी—जटामासी। गुजराती—बालछड़। फारसी—सुबुंल।

इसका पौधा सुगन्धित होता है और कुछ कड़वी होती है। पहाड़ी धरती पर होती है।

यह कड़वी, कषैली, स्मरणशक्तिवर्धक शक्ति देने वाली, कान्ति बढ़ाने वाली स्वादु, शीतल और त्रिदोष दूर करने वाली है।

रक्त विकार, दाह, मृगी, कोढ़, ज्वर और समस्त चमड़ेके रोगोंमें इसका व्यवहार लाभदायक है। जटामासी का तेल बालोंमें लगाते हैं। इससे दिमागमें ताकत होती है, सर दर्द और जुकाम को लाभ होता है। बाल काले और लम्बे हो जाते हैं।

जिसे गालों का रंग बदलना हो वह जटा-मासीको पीसकर उबटनमें मिलाकर मले। गाल साफ हो जावेंगे। जिनकी आँख की पलकें गिर गई होवें वे जटामासी को हरे धनियेके पानीमें पीसकर लेप करें।

बाराहीकन्द (बिदारीकन्द)

संस्कृत—बिदारी, स्वादुगंधा, इक्षुगंधा, क्षीरशुक्ला, वाराह-वदना, बदरी। हिन्दी—विदारीकन्द। मराठी—भूयकोहल। का०—नेलकुम्बुल। गुजराती—फगगलानो कद। तेलगू—नेल-गुम्बुडू। ला०—आईपोमियाडिजीटेडा।

यह नीची धरतीमें होता है। इसकी गाठों पर कांटोंके से मोटे२ बाल होते हैं। इसीसे इसका नाम बाराहकंद पड़ा है। यह मधुर, स्निग्ध, शीतल, बल-कारक और भारी है। आयु को बढ़ाने वाला स्वरदोष दूर करने वाला, वीर्य्य-वर्धक, स्तनोंमें दूध उत्पन्न करने वाला, बल बढ़ाने वाला। रक्त पित्त वादी और दाह को दूर करता है। इसकी जड़ को सूतमें बाँधकर बाँह या गलेमें बाँधनेसे तिजारी ज्वर जाता रहता है।

यह पहाड़ी जमीन पर होता है। इसकी बेल पर जो कन्द लगते हैं, वे बहुत जहरीले होते हैं। उन कन्दों को तीन-चार बार पानी में उबालकर तब व्यवहार करना चाहिये। यह दवा बड़ी तेज है। इसकी तेजी दूर करने के लिए घी पिलाना चाहिये।

बाँदा

संस्कृत—वन्दा, वृक्षरुहा, वन्दाक, वृक्षादनी। हिन्दी–बांदा। बंगला—परगाछा, बांदरा। मराठी—बादांगुल। गुजराती—गुन्दी। तेलगू–वमनिनिके। लाटिन–लोरेन्थस, लोंगिफोलियम।

यह एक प्रकार का पौधा है जो वृक्षों के डालियों पर उगता है। इसके पत्ते जैतून के वृक्ष की तरह गोल होते हैं और फूल तथा पत्ते लाल होते हैं। यह जिस पेड़ पर उगता है, उसी पेड़ के गुण के समान गुणकारी हो जाता है।

यह शीतल, कड़वा, कषैला और मीठा होता है। कफ, विष, पित्त दाह और भ्रम का नाशक है। बलकारक और रसायन है। जिसके मुखसे खून गिरता हो वह इसको अंजीर के साथ औटा कर पीये तो खून बन्द हो जाता है। इसी प्रकार

खूनी दस्त और बवासीर वाले रोगी यदि रविवार के दिन सूर्य निकलने के पहले इसे कमर में बाँध लेवें तो बड़ा लाभ होता है। इसके पत्तोंको जलाकर दाद पर छिड़कने से दाद नष्ट हो जाता है।

यदि स्त्री गर्भवती न होती हो तो जो बाँदा अनार या बेल के पेड़ पर उगा हो उसे लाकर और दूध के साथ औटाकर मासिक धर्मके निपटने के पश्चात् तेरह दिनतक बराबर पिलाने से गर्भ धारण की आशा हो जाती है।

बोल—बीजाबोल

संस्कृत—हीराबोल, बीजाबोल। गुजराती—हीराबोलाई। फारसी—मुर। बंगला—बीजाबोल। मराठी—बीजाबोल।

यह एक प्रकार का गोंद है जो गूगल की तरह होता है और अरब में पैदा होता है। इसका सबसे बड़ा गुण यह है कि जिस स्त्री को मासिक धर्म न हो तो उसको इसके सेवन से ऋतु धर्म जारी हो जाता है। सूँघने से सिर का दर्द जाता रहता है। दो माशे खा लेने पर पेट के कीड़े मर जाते हैं। गुलाब जल के साथ सेवन करने से दस्तों की बीमारी में फायदा पहुँचता है।

बेर (बैर)

संस्कृत—कर्कंधु, काल, फेनिल, कुवल, घोटा, सौवीर। हिन्दी—बेर। बंगला—कुलस। म०—बोर। उड़िया-कुडि। गुजराती-बोरडी। कर्नाटी-येरनु। तैलङ्गी-रेगुचेट्टा। तामिली—रेयंति। अरबी—जुजब। लाटिन—झिझिफस जुजबा। फारसी—सिदर, कुनार।

बेर का वृक्ष भी बड़ा और काँटेदार होता है। पत्तियाँ छोटी-छोटी और गोल होती हैं। फूल पीले रंग के गुच्छेदार होते हैं। उन्हीं गुच्छों में फल का गुच्छा होता है।

बेर गर्मी को शान्त करता, खट्टा, गरम और तृषा को शान्त करने वाली है। यह आंतों और मेदे के कोड़ों को मारती और इसका पानी दद्रु रोगको सुखकर है। इसकी लकड़ी का बुरादा रक्त प्रवाहको रोकनेवाला है। इसके पत्तोंका लेप गरमीका सूजनको पचाता और पकाता है। इसके पत्तोंका काढ़ा पीनेसे दिमाग तर रहता है। बेरकी जड़ कई प्रकार के काढ़ों में ली जाती है, जो ज्वर रोगोंको शान्त करती है।

बबूल

इसे संस्कृत में बब्बूल, किंकिराट; सपीतक और आभाषपद मोदिनी, हिन्दी—बबूर, कीकर, बं०—बाबला, म०—बाँभूल, गु०—बावला, क०—पुलई, तै०—बलवत्तडु, कौ०—गुड्डा, अं०—एकाश्याट्री कहते हैं।

एक बबूलका भेद जालबब्बूल होता है।

गुण—बबूर कफको नष्ट करता और ग्राही है। यह कोढ़, कृमिरोग और विषविकारोंको नष्ट करनेवाला है।

बबूरका गोंद होता है जो संग्राही, शीतवीर्य जलन, वातनाशक, भग्नसंधायक और रुधिरके तेजीको बन्द करनेवाला है।

गुण—रक्तातिसार, रक्तपित्त, प्रमेह और प्रदर को दूर करता है।

राजनिघंटुमें लिखा है कि—बबूरकी कलियोंमें से काला रंग निकलता है, औषधि तरीकेसे छालका सत्व चिकना और ग्राही तरहसे व्यवहारमें आता है। जाड़ेमें आँव पड़ती हो तो इसके पत्ते दिये जाते हैं। फलियोंको खाँसीके रोगमें देते हैं। बबूल का गोंद भी बहुत उपयोगमें आता है तथा नरम

डालियों की छाल अधिक रेशेवाली है। इससे कागज बनता है।

इसे फारसीमें अमुधीलाव् अथवा मुधीलाव् कहते हैं। यह पीलापन लिये सफेद रंगका चमकता और पानीमें सब पिघल जाता है। यह स्वच्छ चिकना, मिश्री बनाने योग्य होना चाहिये—यह मखजनउल अदवियामें लिखा है।

मुसलमान हकीम

बबूलके गोंदको दवाकंसे तरीके उपयोग करते हैं और इसको छातीकी पीड़ा मिटानेवाला, कुव्वत देनेवाला और नम्रता देनेवाला मानते हैं।

अंग्रेजी दवा में

जो मत हैं उससे कोई गुण नहीं मिलते। बबूलकी फलियोंका रस निकालकर उसका सत्व निकालते हैं। उसको फारसी तथा अरबीमें अकाकिया कहते हैं। यह पदार्थ भारी, कठोर और खुशकारक बालवाला होना चाहिये। इसके छोटे टुकड़े को उजेलेमें देखा जाय तो कुछ-कुछ नीलास लिए दीखते हैं। यदि वह टुकड़ा बड़ा हो तो

इसका रंग काला देखनेमें आता है। यह शीतल, ग्राही और पाचक गिना जाता है। यदि आँखोंमें से अत्यन्त कीचड़ और राध निकलती हो तो इसको आँजते हैं। इसे पानीमें गलाके मुख पर लगानेसे चमड़ों का रंग सुधरता है। इसको अण्डे को सफेदीके साथ मिलाके जली हुई चमड़ी पर लेप करनेसे उत्तम असर करता है। अकाकियेके चूर्णको बुरकनेसे घाव होनेसे जो नस कट गई है उनसे बहता हुआ रुधिर बन्द होता है।

धन्वन्तरि निघण्टु

में लिखा है कि बबुलका छाल अत्यन्त ग्राही है तथा पाचन-शक्ति बढ़ानेके लिए वैद्य देते हैं। तथा अंग्रेजी दवा ओककी छाल बदलेमें ली जाती है। इसका क्वाथ घाव धोनेमें बर्तनेसे जल्दी अंकुर लाके भर जाता है। बबूलके गोंदमें लाल किस्म का गोंद अत्यन्त गुणकारी गिना जाता है। यह खाँसी और संधिवातके सदृश रोगमें बर्ता जाता है तथा पेशाबमें शक्करके समान पदार्थ निकलता हो तो यह खाया जाता है। जिस नासूरमेंसे पीले

रंगका पानी बहता हो उसके वास्ते कोमल बबूल के पत्तों की पुल्टिश अत्यन्त गुणकारी है। फली भी खाँसीके रोगमें उपयोगी है। देशी लोग बबूल को गोंदको तिलके साथ मिलाके खाते हैं।

मुखपाक या जीभकी जलन पर

बबूलकी कोंपल पीसकर मलना सब प्रकार-के मुँह आनेको गुण करता है।

सूजाक की दवा

बबूलकी कोंपल एक तोले, गोखरू एक तोले, दोनों काशोरा निकालकर थोड़ा बूरा मिलाकर पीवे।

वीर्यको गाढ़ा करे

बबूलकी कच्ची फली, मौलसिरीकी छाल, शता-वर और मोचरस समभाग लेकर और सब की बराबर बूरा मिलाकर चूरन बनावे। मात्रा एक हथेली भर।

मूत्रकृच्छ्रकी दवा

बबूलकी कच्ची फली छायामें सुखाकर, कूट-छानकर घी में भूनकर थोड़ा बूरा मिलाकर सबेरे अठन्नी भर खाया करे।

रक्तस्रावकी दवा

बबूलका गोंद भुना हुआ बराबरका गेरू

पीसकर प्रातःकाल नौ माशे खावे।

कुष्टकी दवा

बबूलकी छाल ३ तोले ८ माशे जौकुट करके जलमें भिगोकर प्रातःकाल मलकर-छानकर नित्य इसी प्रकार पीवे।

हाथ-पाँवमें अधिक पसीना आनेकी दवा

बबूलकी सूखी पत्तियाँ पीसकर हाथ पाँवों पर मले।

बालकके चिनगकी दवा

यदि बालक मूत्र करते समय रोने लगे तथा बार-बार अपनी इण्डी पकड़कर खींचे तो जानना चाहिए कि बालकको चिनग रोग है। उसके दूर करनेका उपाय यह है कि बबूलके गोंदकी चार-पाँच डली कपड़े में बाँधकर पानीमें भिगो देवे। अनन्तर उस पानीमें मिश्री मिला दिन भरमें पाँच बार पिलावे।

बंशलोचन

इसके नुगाक्षिरी आदि नाम हैं। बंग भाषामें बंशलोचन, गु० वाँसकपूर, फा० बवासीर, अं० दी मात्रा आफ दी बम्बु है।

यह मोटे और पुष्ट बाँसके भीतरसे निकलता

है। यह एक प्रकारका पत्थर है। जब यह सफेद रस बाँसमें सूख जाता है तब इसके कंकर बन जाते हैं। यह ठण्ढा, मधुर, पुष्ट, बलवर्द्धक, प्यास, क्षय, ज्वर, दमा, खाँसी, पित्त, रुधिर विकार और कमल वायु रोगको शान्त करता है तथा पाण्डु, दाह, कामला, व्रण, और वातज मूत्र-कृच्छ्रको दूर करता है। इसकी मात्रा ६ रत्ती है।

बच

इसके उग्रगन्धा आदि नाम हैं। गं० बच, म० वेखड़ फा० सोसन, अं० अकोरस केलोमस कहते हैं।

यह गुल्म जातिकी वनस्पति की लकड़ी है इसका रंग काला और सुगन्धित होता है। कलकत्ते में यह असली मिलती है। सफेद बचको खुरासानी बच कहते हैं।

बच गरम है, वमन लाती है। अग्निको प्रदीप्त करती है। यह निबन्ध, उदराध्मान, मृगी, शूल, कफ, उन्माद, मूत्ररोग, कृमीरोग और वायु रोगको हरण करती है। इससे मल मूत्रका कोप दूर होता है। इसकी मात्रा १ माशा है।

बड़ा बचको लोग कुलींजन और कुलंजन

कहते हैं। यह पानकी जड़ है। कफनाशक है, खाँसीको दूर करती है, रोचक है हृदय और मुख को निर्मल करती है तथा कण्ठको सुधारती है।

गुल्म शूलकी दवा

बचादि चूर्ण बनाना

बच, हर्रकी छाल, सेकी हींग, सेंधा नोन, अमलवेत, जवाखार और अजवायन इनका दो टंक चूर्ण उष्ण जलके साथ सेवन कराओ।

विरोजा

इसके कुंदुरु आदि नाम हैं।

यह मीठा है, तिक्त है, तीक्ष्ण और कड़ुवे रसवाला है। त्वचाको हितकारी है और पसीना, ज्वर, वात, पित्त, कफ, दाह, मुखरोग और प्रदर रोगको हरता है। इसका लेप ठण्ढा है। इसकी मात्रा ४ रत्ती है। इसका प्रतिनिधि दोनों बहमन अथवा रूमी मस्तगी है। इसका दर्पनाशक उन्नाव है। यह शल्यकी वृक्षका गोंद है।

बेल

सं० बिल्व, हिं० बेल, बं० बेल बिल्व, म० बेल, बेलफल, गु० बिलोबिलू, अं० बंगाला क्विन्स।

बेलके वृक्ष बड़े-बड़े होते हैं। इसकी डालियों में काँटे होते हैं। पत्ते तीन-तीन एक डालीमें होते हैं। फूल सफेद और सुगन्धदार होते हैं। ग्रीष्म ऋतुके आरम्भमें इसके पुराने पत्ते झड़ कर नये पत्ते निकल आते हैं। इसकी लकड़ी चन्दन की तरह सफेद रंगकी होती है। इसकी जड़ दश-मूलकी प्रथम औषधियोंमें से एक है।

ज्वरकी दवा

बेलके पत्तोंका ताजा रस शहदमें देनेसे ज्वर जाता रहता है और दस्त भी साफ आते हैं। बेलकी जड़का काढ़ा पिलाने से ज्वर जाता रहता है और हृदयकी धड़कन दूर होती है।

आँखकी दवा

इसके पत्तोंकी लुगदी दुखती आँख पर बाँधनेसे दर्द और सूजन भी दूर होती है।

दस्त संग्रहणीकी दवा

बेलके कच्चे और सूखे हुये चूर्णको खाँड़के साथ फाँकनेसे दस्त और संग्रहणी दूर होती है।

(१) लू लगने पर बेलका शर्बत पिलाना चाहिये।

(२) बेलका मुरब्बा, अतिसार और बहुत पुरानी संग्रहणी तथा रुधिर विकारको दूर करता है।

गुल्म रोगकी दवा

कच्चा बेल और गिलोयका निरन्तर सेवन करनेसे वात-गुल्मका रोग दूर हो जाता है।

सर्प काटने पर

बेलकी जड़ और कैथकी जड़को पीसकर पिलानेसे सर्पका विष उतर जाता है।

बहरेपन की दवा

बेल-फलको गोमूत्रमें पीसकर और तेलमें पकाकर उस तेलकी बूँद कानमें टपकानेसे बहरापन जाता रहता है।

पेटके कृमि पर

बेलके पत्तोंका अर्क पीनेसे पेटके कीड़े मर जाते हैं।

अतिसारकी दवा

बेलकी छाल और आकको छालका काढ़ा कर शहद और मिश्री मिलाकर पीनेसे सब प्रकारके अतिसार दूर हो जाते हैं।

देहकी दुर्गन्धि दूर हो

बेलके पत्तोंका रस देह पर मलनेसे देहकी

दुर्गन्धि जाती रहती है।

हैजे की दवा

बेल और सोंठका काढ़ा देनेसे उबकाई और विसूचिका जाती रहती है।

देहकी जलन पर

बेलकी कच्ची गिरीको तिलके तेलमें ७ दिन तक पड़ी रहने दे। फिर इस तेल को देह पर और तलुओं पर मर्दन करके स्नान करे तो जलन मिट जाती है।

इस प्रकार बेल अनेक रोगोंमें लाभदायक है।

भाँग

संस्कृत—भंगा, गंजा, मातुलानी, विजया, जया, मादिनी। हिन्दी—भाँग, भंग। बंगला—सिद्ध। मराठी, गुजराती—भाँग। फारसी—कनब, जुजवआजम। ला० केनेबिष इन्डिका। अंग्रेजी—इन्डियन हेम्प।

यह एक क्षुप जाति का पौधा है। इसके पत्ते लम्बे, कँगूरेदार और नीमके पत्तेके समान पर इससे छोटे होते हैं। भाँग, गाँजा और चरसका रस इसी वृक्षमेंसे निकलता है। यह वादी को साफ करती, कोढ़ नाश करती, मेदा उत्पन्न करती, बल और

वीर्य को बढ़ाती, अग्निकारक, कफनाशक और रसायन होती है, साथ ही यह रुचि उत्पन्न करती मलको रोकती, अन्नको पचाती, निद्रा अधिकलाती, कामदेवको बढ़ाती और वातको नाश करती है।

(१) भाँग दूधके साथ बवासीर पर लेप करने से बवासीर को आराम करती है।

(२) भुनी हुई भाँग का चूर्ण शहद्के साथ खानेसे अतिसार संग्रहणी और मंदाग्नि दूर होतीहै।

(३) इसके पत्ते घोंटकर पीनेसे गालों पर लाली छा जाती है।

(४) भाँग का पूरा किन्तु छोटा पेड़ पीसकर घाव पर लगानेसे घाव आराम होता है।

(५) चोटकी पीड़ा दूर करनेमें इसका लेप बहुत ही लाभदायक है।

(६) भाँग सेवनसे स्तंभन शक्ति बढ़ती है।

(७) बवासीरमें जब रोगी व्याकुल हो तब इसका धुआँ देनेसे तत्काल शान्ति मिलती है।

(८) इसके पत्तोंको सूँघनेसे छींक आती है।

(९) भाँगकेपत्तोंकारससीरपरमलनेसेजूमरजाताहै।

(१०) कानमें डालनेसे कान का दर्द और कीड़े मर जाते हैं।

(११) खाँड़के साथखानेसे वीर्य गाढ़ा होताहै।

(१३) इसके पत्ते पीसकर अंडकोष पर बाँधने से सूजन दूर होता है।

(१४) इसका बीज पेशाब अधिक लाता, वीर्यको सुखाता, धातुको फाड़ता, आँखोंकी रोशनी कम करता और स्तंभन करता है।

भिलावा

संस्कृत—भल्लातक, अरुष्कर, अग्निक, अग्निमुखी, भल्ली-वीरवृक्ष। हिन्दी—भिलाए, भिलावा। बंगला—भेला। उड़िया—भल्लीय। तै—शलगूनकोट्टई। मराठी—बिबवी। कर्नाटी—गौडवी, कौरबीज। को०—बिब, बिबे। गुजराती—भीलामूँ। फारसी—बिलादुर। अरबी—हबुलकस्व। अंग्रेजी—मार्किंगटन।

भिलावाके पेड़ बड़े२ तथा इसके पत्ते घूमाके समान होते हैं। यह कषैला, गर्म हल्का, बात, कफ, उदर रोग, कोढ़, बवासीर, संग्रहणी, गुल्म, ज्वर, मन्दाग्नि, प्रमेह, क्रिमि तथा व्रण रोगों को नाश करता है। इसका फल स्निग्ध, मीठा और कृमि रोगोंको दूर कर दाँतों को स्थिर करनेवाला है। इसके फलमें जो गुण हैं, वे ही छालमें भी हैं।

पक्का भिलावा पानीमें छोड़नेपर जा डूब जाये वही उत्तम होता है। इसकी मज्जा मधुर होती है। यह बृहण वीर्यको उत्तम करनेवाली, जठराग्निको प्रदीप्त करनेवाली, शोथ, अरुचि, दाह और पित्तको भी नाश करनेवाली है। भिलावाकी डंठल मधुर, कषैली वातको कुपित करनेवाली, स्वादिष्ट, पित्त का नाश करनेवाली, जठराग्नि दीपक तथा बालोंको हितकारी है।

भिण्डी

संस्कृत-भेंडा। हिन्दी-भिंडी, रामतरोई। बंगला-भिंडा शाक। गुजराती-भींडा, रामभंडा। लाटिन—हिबिस्कस एस्क्यूलेन्ट्स।

इसका पेड़ हाथ डेढ़का होता है। पत्ते कटे हुए हथेलीके समान होते हैं। यह हिन्दुस्तान के हर हिस्सेमें पैदा होती है। इसकी भाजी स्वादिष्ट होती है।

यह ग्राही, पौष्टिक, बलवर्द्धक, शुक्रोत्पादक और कफकारक है। खाँसी और मन्दाग्निमें बड़ी लाभदायक है। जिस पुरुषको चाहे जिस कारणसे पुरुषत्व खो गया हो, यदि वह पाव भर भिण्डीकी

जड़का चूर्ण गायके दूधके साथ सेवन करे तो फिर पुरुषत्व प्राप्त कर लेवे ।

वीर्यदोषकी दवा

प्रमेहके रोगियोंको चाहिये कि भिंडीकी जड़ को दूधमें औटाकर उसमें घी और खाँड़ मिलाकर सेवन करें तो सब प्रकारके वीर्यदोष नष्ट हो जावेंगे।

सूजाककी दवा

किसी प्रकारका मूत्र और वीर्यमें दाह होता हो तो भिंडोका शर्बत सेवन करनेसे दाह नष्ट हो जाता है। भिंडीकी जड़के साथ काली मिर्च और इलायची मिलाकर पीनेसे कठिन सूजाकको लाभ होताहै।

भुइँआँवला (भद्रआँवला)

संस्कृत—शिव बहुपुत्रा, बहुवीर्य्या, बहुफला, तामलकी। हिन्दी—भुइँआँवला, जरआँवला । बंगला-भुइँआमला । मराठी—भूयआँवली । गुजराती—भोआमली । का०—आरुनेल्ली । तैलगू—नेलाऊषीरके ।

यह कड़वा, कषैला, मधुर और शीतल होता है । कफ, खुजली, रक्तपित्त, खाँसी, प्यास और घावको लाभदायक है । इसका केवल फल लिया जाता है, जिसकी मात्रा दो माशेकी होती है ।

यह गर्म मुल्कोंमें होता है, इसके पत्ते लजाधुरके पत्तेकी तरह होते हैं और वर्षामें उत्पन्न होता है। इसका फल खट्टा और कड़वापन लिये होता है।

(१) कैसा हो पुराना बुखार क्यों न हो इसका पंचाङ्ग पिलानेसे जाता रहता है।

(२) यदि कहीं खुजली हो तो इसके हरे पत्तोंको पीसकर उसमें नमक मिलाकर लगाने से खुजली दूर हो जाती है।

(३) जलोदरके रोगियों को इसका पञ्चांग पिलाना चाहिये। इससे खूब पेशाब आता है।

(४) जाड़ाके बुखारवालेको यदि इसकी नई पत्तियाँ और मिर्चको एक साथ पीसकर पिलाया जावे तो बड़ा लाभ हो।

(५) इसकी जड़को चावलके पानीके साथ उस स्त्रीको देनेसे जिसका मासिक स्राव बहुत बढ़ गया हो, तुरत घट जाता है।

(३) इसके कोपलोंको मेथीके दानेके साथ देनेसे पेचिस दूर हो जाता है।

महाराष्ट्री

संस्कृत—महाराष्ट्री । हिन्दी—मरहठी । मराठी—मराठी । गुजराती—मरेठा । फारसी—बाबुनगाउ । अरबी—उकवाहान । अंगरेजी—पेनिरायल ।

इसका पौधा एक हाथ लम्बा, फूल पीले रंग का होता है। गुणमें चरपरी तीक्ष्ण गरम है। बात और कफके रोगोंमें लाभदायक है। यह अकरकराके समान स्वादयुक्त तथा गुणकारीभीहै।

खाँसीकी दवा

महाराष्ट्रीकी ठोंड़ी पानमें रखकर खाने से खाँसी अच्छी होती है।

जीभकी सूजनमें

महाराष्ट्रीकी ठोंड़ी दोनों लवणके साथ रगड़ कर जीभपर रखे तो जीभकी सूजन दूर होती है।

मंजीठ

इसके मंजिष्ठा, विकसा, जिंगी, कालमेषिका, मंडूकपर्णी, भंडीरी, मंडी, योजनवल्ली, रसायनी, अरुणा, काला, रक्तांगी, रक्तपुष्टिका, भंडीतकी, गंडीरी, मंजूसा और वस्त्ररंजना ये संस्कृत नाम हैं। हिं० मजीठ, बं० मंजिष्ठा, म० मंजिष्ठा, ता० मंजिल फा० सनास, अ० फुबह नुखिवग उरुकुस्सुवागीन, इं० मडरूट, ला० रूबीया।

यह लता जातिकी औषधि है। बहुत लम्बी बेल और पत्ते कुछ लम्बे मेढकके रंगके होते हैं। इसकी उत्पत्ति नेपाल, अफगान और ग्रीकके मुल्क में होती है। वहाँ इससे कपड़े रँगते हैं और यह खेतीमें बोई जाती है। मजीठकी जड़ लाल रंग की होती है। यही प्रयोगमें ली जाती है।

गुण—मजीठ मीठी, कड़वी, कषैली, भारी और उष्णवीर्य है।

प्रयोग—मजीठके सेवन करनेसे स्वर और वर्ण उत्तम होता है एवं विषदोष, कफ, सूजन, योनिरोग, कर्णरोग, रक्तातिसार, कुष्ट, रुधिरके दोष, विसर्प और प्रमेह रोगको शमन करती है।

लक्ष्मीविलास तैल बनाना

मजीठ, देवदारु, भोंड (वृक्षविशेष), दोनों कटियाली, बच, पत्रज, शुद्ध गंधक, हर्रकी छाल, बहेड़ेकी छाल, कपूर, आँवला और नागरमोथा ये सब दो दो टके लेके क्वाथ बना लो। यह क्वाथ १ सेर भर तेलके साथ पकाकर तेल मात्र रह जानेपर इस तेलमें छड़, मूर्वा, मैनफल, तज,

चम्पाकी जड़, शमलतंतु, पिपलामूल और सोंचर नोन ये दो दो टके भर तथा लोबान (ऊद), गंधा विरोजा, असगन्ध, नख (जो कि अष्टांगमें सुगन्धि विशेष होती है) और छड़ टके-टके भर और इलायची, लौंग, चन्दन, जूहीके फूलोंकी कली, कंकोल, अगर और केशर ये पैसे-पैसे भर और दो टंक कस्तूरी इन सर्व औषधोंका बारीक चूर्ण करके डाल दो। इसको मन्द-मन्द आँचसे पकाते-पकाते औषध मिलाकर तेल मात्र रह जानेपर दो टंक कपूर डालकर छान लो। अब इस तेलका मर्दन करो तो सर्व वातरोग, समस्त प्रमेह, शोथ, गुल्म, ज्वर ये सर्वरोग दूर होवेंगे।

दाँत दर्दमें

मजीठ लगावे।

मस्तककी पीड़ामें

मजीठको मस्तकपर बाँधे।

खुजली और फोड़ेकी दवा

मंजीठ, त्रिफला, कुटकी, वच, दारुहल्दी, गुर्च और नीमकी छालके दो टंक चूर्णका क्वाथ १ मंडल

(चालीस दिन) पर्यन्त पिलाओ तो वातरक्त, कुष्ठ, पामा (खुजली) और फोड़े ये सब दूर होंगे। यह लघु मंजीष्ठादि क्वाथ है।

मसूर

संस्कृत—मंगल्पक, मसूर, मंगल्पा और मसूरिका। हि० कपूर, मसुरा—री, तै० मसूर पुष्पु, ता० मिसूर पुरपुर, फा० बनोसुर्ख, अ० अदस, अं० लेंटिन, ला० हरंगेलेन्स।

गुण—पाकमें मधुर, संग्राही, शीतल, हलकी, कफपित्त निवारक, रक्तदोष नाशक, रूक्ष, बादी-कर्ता और ज्वरघ्न है।

मुँह आनेपर

मसूर जलाके उसकी बराबर सफेद कत्था मिलाके पीसकर मुँहमें बुर्के।

बिगड़े हुए घावकी दवा

मसूर जलाकर भैंसके दूधमें मिलाकर दोनों समय घावपर लगावे तो अशुद्ध घावको गुण करे।

बरसाती दाने (फोड़े) की दवा

मसूरके छिल्के जलाकर, आँवला जलाकर उसकी बराबर मेंहदी, कवेला, थोड़ा नीला थोथा, दवना, थोड़े तेलमें मिला पीसकर दानोंपर मले।

झाईं की दवा

मसूर नींबूके रसमें पीसकर लगावे।

मरिच

इसे संस्कृतमें मरिच, वेल्लज, कृष्ण, ऊषण और धर्मपत्तन कहते हैं। हि० कालीमिरच, गोलमिरच, नं० मरिच, म० मिरें, क० मेणसु, तै० मरिया-मरियन; अ० फिलफिल्ले अवीदक, गु० मरी, तिखीं, फा० फिलफिले अस्वद, स्याहगिर्द, इं० ब्ल्याक पेयर, ला० पाईपरनिग्रम।

यह गुल्म जातिकी औषधका फल है। काली मिरच दो प्रकार की प्रायः देखनेमें आती है। एक पूरबी और दूसरी दक्षिणी मरिच उत्तम होती है और कोई धुली हुई मिरचोंको सफेद मिरच कहते हैं। परन्तु सफेद मिरच की जाति ही पृथक् है।

मिरच का रस चरपरा है। गुणमें तीक्ष्ण, अग्निदीपक, कफ, बात हरणकर्त्ता, उष्णवीर्य, अतएव पित्तकर्त्ता, रूक्ष, श्वाँस, शूल और कृमिरोगको दूर करती है। आर्द्र (गीली) काली मिरच पाकमें मधुर और अत्यन्त गरम नहीं है। चरपरी और किञ्चित, तीक्ष्ण, गुणविशिष्ट, कफ, निःसारक और पित्तकर्त्ता नहीं है।

मिर्च कफके जालकोकाटनेकेलिए तलवारके समान है। सन्निपात ज्वरको नाशकर्त्ता, रक्तपित्तको बढ़ाने वाली, वादीकी हिचकी को दूर करती है। गांठ, गलगंड, अरुची, कानका शूल इनको नष्ट करती है।

नेत्र रोगोंमें

काली मिरच, कच्ची खाँड़ और घी इनको मिलायके खाय तो समस्त नेत्र रोगों को नष्ट करे।

खाज और कोढ़ की दवा

काली मिरचके साथ जौ मिलाय गोमूत्रमें पीसकर लेप करनेसे विस्फोट (खाज) और कोढ़ दूर होता है।

इसकी मात्रा १ माशे की है। यदि सेवन करनेसे अवगुण करे तो मिश्री, घी, दूध, शहद और चावल यह सब इसके दर्पनाशक अर्थात् इसके अवगुणको दूर करनेवाले हैं। मिरचको प्रतिनिधि पीपल है। मिरचके अभावमें पीपल लेनी चाहिये।

मूली

इसे संस्कृतमें लघुमूलक, शालमर्कट, विस्र, शालेय मरुसंभव, चाणक्यमूलक, तीक्ष्ण और मलकपोतिका। गु० मूला, क० मूलंगी तै० शूतिदंपा, फा० तुख, इं० रेडीश कहते हैं।

मूली दो प्रकार की होती है। एक छोटी, दूसरी बड़ी। छोटी मूली-कटु, उष्ण, रोचक, हल्की पाचक त्रिदोष नाशक और स्वर-शोधक है।

यह ज्वर, श्वास, नासिका रोग, कंठ पीड़ा और नेत्र रोग को नाश करती है।

बड़ी मूली—रूखी, गरम, भारी और त्रिदोष प्रकटकर्ता है। यदि इसको तेल डालकर बनावे तो यह त्रिदोषनाशक हो जाती है।

कर्ण रोगमें मूली का तेल

मूलीके पत्तोंका रस तीन भाग। एक भाग मीठे तेलमें औटावे, जब रस जलकर तेल मात्र रह जाय, तब उसी तेलको कानमें टपकावे।

गला बैठने पर

मूलीके बीज कूटकर गर्म पानीमें पीसकर लेप करे।

कंठमाला की दवा

मूलीके बीज बकरी के दूध में पीसकर लेप करे।

दाद की दवा

मूलीके बीज नीबूके रसमें खरल कर गोलियाँ बनाकर लगाया करे। तथाच—

मूलीके बीज, सीताफलकी पत्तियोंके रसमें

पीसकर गोलियाँ बनाकर लगावे।

जलंधर की दवा

मूलीके पत्तोंका रस पीना चाहिये।

खूनी बवासीरकी दवा

मूलीके पत्ते काटकर छायामें सुखावे। फिर कूट-छानकर एक हथेलीभर बराबर बूरा मिलाकर फंका बनावे और चालिस दिवस पर्यन्त फाँके।

पेशाबकी पथरीमें

मूलीके पत्तोंका रस चार तोले आठ माशे निचोड़कर तीन माशे अजमोद फाँककर उसीसे निगल जाय।

बिच्छू काटनेपर

मूली नोन मिलाकर घावपर रखे और यदि मूलीको बिच्छूपर रखे तो मर जाय।

मुंडी, महामुंडी

मंडी, भिक्षु, श्रावणी, तपोधना, मुंडतिका और श्रवणशीर्षका इसके ये संस्कृत नाम हैं। हिं० छोटी बड़ी गोरखमुंडी, बं० मुडुरी, भुँइकदम, का० कियोबोलतर, तै० वोडसरपुचेट्टु, ता० कोदउ, अ० कमादरयूस, ला० स्फिरेंथ सहंडिकम कहते हैं।

यह प्रसर जातिकी लखड़ी है। काली जमीन में तथा जलप्राय स्थानमें बहुत होती है। इसका

छत्ता पृथ्वीमें फैला हुआ रहता है। फूल गोल कनेरी रंगका होता है।

यह पाकमें कड़वी, उष्णवीर्य, मधुर, हल्की, स्मरणशक्तिवर्द्धक होती है।

प्रयोग—गलगंड, अपची, मूत्रकृच्छ्र, कृमि, योनि-रोग, पाण्डु, श्लीपद, अरुचि, अपस्मार, प्लीहा, मेदरोग और गुदाकी पीड़ाको निवारण करती है।

इसका सर्वाङ्ग ग्रहण किया जाता है। मात्रा ६ माशेकी है।

मेथी

इसे संस्कृतमें मेथिका, मेथी, पीपनी, बहुपत्रिका, बोधिनी, हुवीजा, जाति, गंधफला, बल्लरी, चक्रिका, मन्था, मित्रपुष्पा, कैरवी; कुंचिका और बहुपर्णी कहते हैं। हिं० मेंथी, ता० वेमद्धयम, गु० कदम, फा० तुख्मेशसपीत, अ० बजरुल हुल्वा, क० मेंथयक, तं० मेतुलु, इं० फेनग्रीक, ला० ट्राइगोनेला।

यह गुणमें वायुनाशक, कफनाशक, ज्वरघ्न, रुचिप्रद, अग्निदीपक और रक्तपित्त प्रकोपक है।

आयुर्वेद ग्रन्थोंमें—मेथीमें दर्द नष्ट करनेकी, पाचन करनेकी, उसी प्रकार कामोत्तेजन करनेकी शक्ति है। बदहजमी, अरुचि, स्त्रियोंका अतिसार

और संधिवातके दर्दमें खानेको मेथीमोदक वगैरह नामसे उसके लड्डू बनानेकी विधि कही है और उसमें बहुतसे खुशबूदार पदार्थोंका एक भाग और सबके बराबर मेथी लेनी कही है।

यूनानी हकीम—मेथीके बीजोंको गरम, फोड़े पकानेवाले, खुश्क, दस्त खुलासा लानेवाले, पित्त निकालनेवाले और पुरानी खाँसी तथा तिल्ली और कलेजा मोटा हो गया हो, ऐसे रोगोंमें अत्यन्त गुणदाता मानते हैं। बाहर और भीतर की सूजनके लिए और जली हुई चमड़ीके ऊपर तथा बाल झड़ते हों उनको रोकनेको मेथीके पत्तों की पुल्टिश बहुत ही गुणकारी है।

प्राचीन ग्रीक वैद्य डायोसकोराइडीस—सूजनके दर्दोंमें मेथीके चूनकी पुल्टिश बाँधनेकी प्रशंसा करता है।

दक्खिनके वैद्य—मेथीके बीजोंको प्रथम अग्निपर, सेंकके फिर पानीमें मिलाय ऐंठनके रोगोंमें देते हैं।

सुश्रुत संहितामें—मेथी पित्तशोणित और बादीनाशक है (अर्थात् पित्त काटकर रुधिरका

सुधारनेवाली (पौष्टिक) स्तन्य अर्थात् स्तनमें रुधिर शुद्ध कर दूध उत्पन्न करती है।

यूनानी हकीम—मेथीको मूत्रज और आर्तव दोषहर मानते हैं और संधिवातमें प्रसूतमें स्त्रियोंकी भूख कम हो गई हो तो मेथीके लड्डू खानेको कहते हैं।

मेथीका काढ़ा बवासीरको गुण करता है।

मेथीका चूर्ण २ सेर लेकर १ सेर तेलमें एक महीना भर भिगो रक्खे। अनन्तर ४ सेर गुड़ अथवा लाल शक्करकी चाशनी करे। मेथीको आँच पर उस तेलमें भूनकर चाशनीमें डाल दे, और भूना हुआ गोंद पाव भर, सोंठ, मिर्च, पीपली, दो-दो तोला डाले। इसमेंसे दो तोलासे ४ तोला तक सरदीमें खाय तो कमर और घुटनों का दुखना अकड़ना आदि वायुके सभी रोग दूर हो जाते हैं। यह मेथी पाक बहुत गरम होता है। ग्रामीण लोग प्रायः इसका सेवन किया करते हैं।

लकवा पर

मेथी डेढ़ छटाँक, गुड़ आध पाव, गेहूँ की भूसी पाव भर, सहजने की छाल आधी छटाँक

लहसुन डेढ़ तोला, गाय का दूध डेढ़ सेर, इनको खीर बनाकर खानेसे लकवा जाता रहता है।

मेथी—इसके दीपनी आदि नाम हैं, फारसी में तुखमें शमपीत डाक्टरी नाम फेजग्रीक है। यह बलिष्ट और दीपनहै, विषके कीडोंको खातीहै। वीर्य दोष, गोला, शूल, ज्वर, कफ इनको हरती है। रक्त व पित्तको कुपित करती है। वाजीकरणको हितकर है। इसकी मात्रा दो माशेकी है। वनमेथीमें मेथीसे कमती गुण है। मेथीमें पीड़ा हरनेकी ताकत है। अजीर्ण, अरुचि, स्त्रियोंके अतिसार और संधिबातमें इसके लड्डू हितकर हैं। यूनानीमें इसके बीज गरम, फोड़े पकानेवाले खुश्क दस्तावर हैं। तिल्ली, पुरानी खाँसी, खाँसीसे कलेजा फूलना इनको गुण करती है। सुश्रुतमें कहा है कि मेथी स्तनोंमें रुधिर को शुद्ध कर दूधको बढ़ाती है। पित्त, शोणित और बादी को हरता है।

मेथी—इसके मेथिका आदि नाम हैं। यह दीपनी और उष्ण है। हृदयको बल देती, विष्टाके कृमि, गोला, कफ और वायु को नष्ट करती है।

मर्यादवेल

संस्कृत—मर्याद वल्लि। हिन्दी—मर्यादबेल।

यह बेल धरती पर फैली हुई पाई जाती है और बारहो महीने मिलती है। वर्षा ऋतुमें बहुत पील रंगक आकारमें घण्टा का तरह होता है। फल गोल अनीदार होते हैं।

गुणमें—भारी, ग्राहक, तीक्ष्ण, शीतल, रेचक और बातकर्त्ता है।

१—इसकी जड़ या फूलको पीसकर गाँठों पर बांधनेसे गाँठ बैठ जाती है।

२—जड़ वा पत्तेको अगरके साथ पीसकर मस्तकपर लेपकरनेसे मस्तककी पीड़ा दूर होती है।

३—इसका काढ़ा खाँसी को दूर करता है।

४—इसके पत्तों पर रेंडीका तेल लगाकर सेंककर पेटपरबाँधनेसे उदरशूल अच्छा होजाता है।

५—जलोदर रोगमें इसके पत्तों का रस पिलाते और पेट पर बाँधते हैं।

६—इसे पीस छान कर खांड़के साथ देनेसे प्रमेह अच्छा होता।

७—किसी-किसीके मतसे इसका प्रयोग स्त्रियोंमें गर्भ धारणके लिये करना लाभदायक है।

८—इसके फलोंकी पुल्टिस फोड़ोंको बैठाने और पकानेके लिए लगाते हैं।

मटर

संस्कृत कलाय, बर्तुल, हरेणुक। हिन्दी मटर। मराठी बटाणे। गुजराती बटाण। तैलगू पेद्दहर्च। ला० पाइसम सेटीवियम। अंग्रेजी फील्डपी।

यह छोटी बड़ी दो प्रकार की होती है। मधुर, स्वादु, पाकमें रूखी और वितल है। वात पैदा करती और बिकार उत्पन्न करती है।

झाईं की दवा

जिसकेमुखपर झाईं आदि हो वे इसका उबटन करें।

सूजन पर

उँगलियोंकीसूजनकोमटरकेकाढ़ेसेधोनालाभदायकहै।

मूसाकर्णी

संस्कृत आखुकर्णी पर्णिका। हिन्दी मूसाकर्णी। बंगला इंदूरकाणिपाना। मराठी लघु उन्दिरकानी। कर्नाटी बल्लीहरुहे। गु० उन्दरकनी।

यह बेल तीन चार फीट लम्बी होती है।

चौमासेमें बहुत होती है। बारहों महीने मिलती है। इसके पत्ते चूहेके कानकी तरह होते हैं। इस कारण इसका नाम मूसाकर्णी है। इसका सर्वाङ्ग दवाके काममें आता है।

गुणमें कटु, तिक्त, कषाय, शीतल और हलकी। मूत्ररोग, कफरोग, कृमिरोगमें लाभदायक है। शूल-ज्वर, मूत्रकृच्छ्र, प्रमेह, अफरा, कोढ़, कामला भगन्दरमें लाभदायक है। चूहेके काटने पर इसका रस लगानेसे विष दूर हो जाता है। इसकी पुल्टिश फोड़े पर बाँधते हैं।

१—पेशाब न उतरता हो तो इसे काली मिर्चके साथ पीस छानकर दे।

२—बच्चोंके पेटमें कीड़े हों तो इसका रस उन्हें दे, कीड़े मर जायँगे।

३—नाकड़े (पीनस) के रोगमें इसके पत्तों का रस भाँगरेके रसमें मिलाकर नास लेवे।

४—सर्पदंशमें इसका रस पिलाते हैं।

५—कानके दर्दमें रसको गरम कर तेल मिलाकर कानमें छोड़ते हैं।

६—मस्तक पोड़ामें इसके पत्ते मस्तकपर बाँधते हैं।

दाँतोंके कोड़े मर जायँ

इसके रसको शहतमें मिलाकर कुल्ली करनेसे दाँतोंके कोड़े मर जाते हैं।

मालकांगनी

संस्कृत ज्योतिष्मती, कठभी, कंगुनी, ककुन्दनी। हिन्दी मालकाँगनी। बंगला लताफटकी। मराठी मालकांगोणी। का० कौगुएरडू। तैलङ्गी-बावजी। गुजराती मालकांणी। लाटिन सिलास्टसपेनीक्यूलेटा।

मालकांगनी का तैल निकालने की विधि

मालकांगनीको कूट गजीकी थैलीमें भर उसका मुँह सुईसे सीकर ताँबेके बासनमें रखकर उसके नोचे कोयलोंकी आग सुलगावे और थैलीके ऊपर एक भारीसा पत्थर रख दे तो तैल निकल आवेगा।

१—मन्दाग्नि को मिटाता है।

२—अजीर्णता का नाश करता है।

३—पक्षाधात और मृगी रोग दूर होते हैं।

४—इसके तैलके व्यवहारसे सन्धिवात और बादीके रोग मिट जाते हैं।

५—इसका तैलबुद्धिको बढ़ानेवाला है।

और ६—हाथ पर मलनेसे आँखों को बड़ा लाभ पहुँचाता है ।

मूँगा

संस्कृत प्रवाल। हिन्दी मूँगा। मराठी प्रवाल गुजराती परवाला। अरबा बुसुर अहमर। फारसी मिरज। लाटिन कोरेलमरूब्रम। अंग्रेजी रेड कोरेल।

मूँगा समुद्रमें होता है और भोरके सूर्य की भाँति लाल चमकता है ।

मूँगा भस्म दमा वाले रोगी को लाभ पहुँचाती है।

बहरेपन की दवा

इसको रोगनबलसाँ में मिलाकर कायमें छोड़ने से बहरा सुनने लगता है ।

औषधियाँ

गोंदके साथ खिलानेसे बवासीर मुख द्वारा खूनका आना, मेदेका घाव आदि दूर हो जाते हैं।

मकोय

संस्कृत काकमाची, बायसी, ध्वांक्षमाची । हिन्दी मकोय, कवैया । बंगला काकमाची, गुडकामाई। मराठी लघुकावली। का० का० कामोणी। गुजराती पीलुडी। अरबी एनबुस्सालव। फारसी रोवातरीख। अंगरेजी नाइट सेड। ला० सोलेनमनइर।

यह क्षुप जाति का पौधा है। इसके पत्ते

गोल, लम्बे नोकदार होते हैं। फल छोटी मटरके बराबर गुच्छेदार तथा फूल सफेद, छोटा, पाँच पंखड़ी का होता है। फल आरम्भमें हरा तथा पक जाने पर लाल रंग का होता है।

गुणमें मकोय त्रिदोष नाशक है। स्निग्ध, उष्ण, वीर्यवधक, स्वरशोधक, कटु, चरपरा और आँखों को सुखदायक है।

कुष्ठ, बवासीर, शोथ, ज्वर, प्रमेह, हिचकी, कै और दिल की बीमारियोंमें इसका व्यवहार लाभदायक है। इसकी जड़ और पत्तों का स्वरस दो माशे की मात्रामें बनाकर लेना उचित है।

सूजन की दवा

सूजन पर इसका रस सोंठ डालकर करके लगावे।

तिल्ली की दवा

जिसकी तिल्ली बढ़ी हो वह इसका साग खावे।

जुकाम की दवा

जुकाममें जब आँख नाकसे मल ज्यादा गिरने लगे तो इसके सूखे पत्तों का धूआँ सूँघे।

नेत्र रोगमें

आँख दुखने पर इसके हरे पत्तों को पीसकर उसमें फिटकरी डालकर आँखों पर बाँधे।

मुख कंठकी सूजन पर

इसके पंचांग का कुल्ली करनेसे मुख और कंठ का सूजन तथा दर्द दूर हो जाता है।

जलोदर की दवा

यदि गुदा सूज गई हो, पेटमें मरोड़ हो, मुखसे रुधिर गिरता हो तो इसका साग खिलावै। जलोदरके लिये इसका शाक वा स्वरस बड़ा लाभकारी है।

मैनफल—मदन

संस्कृतमें इसको मदन, पिंडी, विषपुष्पक, शल्यक और राठ कहते हैं। हिन्दीमें मैनफल, बंगलामें मयनाफल, तामिलीमें मडुकक्रय, तैलगूमें वसन्त कडिमीकेट्टू, मराठीमें गोलफल, गुजरातीमें मीढल, फारसीमें अजीजुल्क, ला० में रेंडिया डयमेटोरम् कहते हैं।

यह पहाड़ी देशोंमें होता है। इसका आकार मझोला होता है। पत्ते लम्बे, गोल, खुदरते और आमने-सामने होते हैं। फूल—सफेद कुछ पीलापन लिये, पाँच पंखड़ीवाला होता है। फल आखरोट

की तरह पकने पर पीले होते हैं। गुणमें मधुर, कटु, उष्ण लेखन, लघु, कै लाने वाला, मुख, नाक, आँख आदिसे जल उत्पन्न करने वाला, घातक, रूखा, कफकारक है। सूजन, वायगोला, कोढ़, फोड़ा और मांस वृद्धि को मिटाने वाला है।

१—कै लानेके लिए मैनफलके गिरी का चूर्ण फँकाते हैं।

२—मरोड़में भी लाभदायक बताते हैं, मरोड़में अफीमके साथ देवे।

प्रसव के लिये

कहते हैं कि प्रसवकालमें मैनफलकी धूनी। प्रसूती को देनेसे सद्यः प्रसव होता है।

सिरदर्द को दवा

आधी शीशीके दर्दमें सूर्य निकलनेके पहले मैंनफल को गायके दूधमें रगड़कर सूँघा देवे।

फोड़े की दवा

फोड़े को पकाना हो तो रवंद चीनीके साथ मैंनफल को पीसकर फोड़े पर बाँधदें।

अन्न में कीड़े न लगें

अनाजको चौमासेमें कीड़ेसे बचाना हो तो इसका फल ढेरोंमें गाड़ दे, कीड़े न लगेंगे।

मोरशिखा

संस्कृत—सहस्राहि, मधुमच्छदा, मयूरशिखा। हिन्दी—मोरशिखा। फारसी—असनानेअसलान्।

मोरशिखाके छोटे-छोटे पौधे होते हैं जो प्रायः पक्की दीवारों की दरारों अथवा सूखी भूमि पर पाये जाते हैं। इसके पत्ते कटीले तथा सिरे पर मोर की कलँगीके समान चोटी होती है।

अतिसार की दवा

यह हल्की तथा पित्त कफ अतिसार को नष्ट करती है।

बवासीर की दवा

छः माशा मोरशिखा और पाँच मिर्चों का कल्क नित्य लेप करनेसे सब प्रकारके बवासीर को लाभ होता है।

सिर दर्द की दवा

इसके बीजकी मींगी और लौंगको बराबर ले घिसकर आँच पर गरम कर मस्तक पर लगावे

तो सिर दर्द और माथे का ठनक अच्छी होती है।

तथा च—

मोरशिखा का फल या इसका अतर सूँघनेसे भी सिर का दर्द दूर होता है। इसका सर्वाङ्ग ग्रहण करना चाहिये।

महाशतावरी

संस्कृत—शतावरी, बहुसुता, भीरु, इन्दीवरी, वरी, नारायणी, शतपदा, शतवीर्या, पीवरी, महाशतावरी। हिन्दी—छोटी शतावर, शतमूली, सहस्रमूली। फारसी—बूजादाँ। अरबी—शकाफुल मिश्रा।

इसकी बेल होती है। इसके पत्ते सोयेके सागसे मिले हुए बारीक होते हैं। फूल सफेद होता है। इसकी जड़ दवाके काममें बर्ती जाती है। महाशतावरी, छोटीसे कुछ मोटी तथा सफेद उत्तम होती है।

यह भारी, शीतल, कड़वी, स्वादिष्ट रसायन, मेदाको बढ़ानेवाली, अग्निकारक, पुष्टिकर, स्निग्ध, नेत्रोंको हितकारी, वीर्यकर्त्ता, स्तनोंमें दूध कर्त्ता, बलकारक और बातनाशक होती है। यह गोला, अतिसार, रक्त, पित्त और प्रमेह को शान्त करती

है। इसका दर्पनाशक बड़हर और शहद है। इसकी मात्रा ७ माशे की है। इसकी प्रतिनिधि सफेद बहमन।

महुआ

संस्कृत—मधूक, गुड़पुष्प, मधुपुष्प, मधुश्रव, वानप्रस्थ, मधुष्ठिल। हिन्दी—महुआ। बंगला—मोल महुया, जलमोल। मराठी—मोहाचा वृक्ष, मोहोवृक्ष। गुजराती—महुड़ों। तैलगू—ईषा। तागिली—कठई लुपो। अंग्रेजी—इलूपा ट्री। फारसी—सफब्ल, अवीविही।

यह गुणमें मीठा, शीतल, भारी बल और शुक्रकर्त्ता तथा बात पित्तनाशक है। तृषा, रुधिर-विकार, दाह, श्वास, क्षत और क्षय को भी दूर करता है।

मिरगी की दवा

महुयेकी आधी गुठली और ढाई काली मिर्च पानीमें पीसकर नौबतके साथ नाकमें टपकावे तो फौरन चेत हो जावे।

महुये को मुखमें रखे तो तृषा दूर हो।

पागल कुत्ता काटने पर

महुआ और कुचला पीसकर लेप करे।

वातरोगमें

महुये का तेल मालिस करें।

राई

संस्कृत—राई, राजिका, तीक्ष्णगंधा, आसुरी। हिन्दी—राई। बंगला—सरिपा। मराठी—महुरि। क०—सासि राई। तैलगू—वर्णालु। अरबी—खरदल। अंग्रेजी—मस्टर्ड।

राई कफ पित्तका नाश करनेवाली, रक्त-पित्त को मिटाने वाली, तेज, सूखी, अग्निवर्धक है। कोढ़ खाज और कीरोंके रोगों को लाभदायक है। राई मसालेके काममें आती है। शरीरके विविध स्थानों परकी दर्द दूर करनेके लिए राईका चूर्ण गरम जलमें फेटकर पलस्तरकी तरह लगाते हैं।

रामफल

इसे महाराष्ट्रमें रामफल। हिन्दी—लवली या लोता कहते हैं। इसका पेड़ ऊँचा और पत्ते अशोककी तरह होते हैं। फल कई रसका, बीज सरीफेके समान होता है।

यह स्वादिष्ट, मीठा बात और कफ पैदा करनेवाला खट्टा होता है। इसके सेवनसे दाह, प्यास, थकवाट, और भूख जाती रहती है। इसकी छाल ग्राही और बलकारक है। फल पेटकी कोड़ियों का नाशक है।

पके हुए रामफलको छील कूटकर रस निचोड़ ले, पावभर रसमें मुलहठी, इलायची, शत गिलोय बंशलोचन और मिश्री मिलाकर पीनेसे गर्म बादी, धातु गिरना, सुजाक आदि को लाभदायक है।

रेंड़ खरबूजा

अंगरेजी—पपीता। हिन्दी—रेड़ खरबूजा, अंड खरबूजा।

यह रेड़के पेड़ ऐसा बड़ा होता है पर इसमें शाखाएँ नहीं होती। पत्ते चौड़े और फल बिजौरे के समान होते हैं।

कच्चा फल हाजमे के लिए बड़ा उत्तम है। इसके दूधको सुखाकर चूर्ण करके खिलानेसे मेदे और आँतोंको बड़ा लाभ होता है। जिगर और तिल्लीके रोगियों को देनेसे बड़ा फायदा होता है। हृदयकी जलन इससे मिट जाती है। इसका पानी दादका बड़ा फायदा करता है। पक्का फल दस्ता-वर होता है।

रीठा

इसे संस्कृतमें अरिष्टक, मागल्य, कृष्णवर्ण, जर्थसाधन, रक्तबीज, पीतफेन, फेनिल और गर्भपातन कहते हैं। हिन्दी-रीठा,

म०--रिठा, तैतिळ--कुकुड, अरीठा। फारसो—फिंदकहिन्दी, अ०-बुन्दक, ला०—सेपिस्त इमार्जिनट्स, अं०-सोपवेरी, सोपनट।

यह वृक्ष विश्वपत्र, मंजरीका फूल और गुच्छ-फलवाला होता है।

गुण—यह त्रिदोषनाशक, स्कन्दादिग्रहोंको जीतनेवाला और गर्भको गिराता है।

अधकपारी की दवा

रीठेके छिल्केको पानीमें खूब मले। जब झाग निकले गरमकरके ढाई बूँद दोनों नथनेमें टपकावे।

वमनकी दवा

रीठेकी मिंगी एक घंटा तक पानीमें भिगोवे, जब नरम हो जाय, तब चबाये। उसके टुकड़े गले से नीचे उतर जायँ तो वमन बन्द हो जाती है।

लोध

इसे संस्कृतमें लोध, तिरिटक, शावर और गालव कहते हैं। हिं० लाध, पठानी लोध, म० लोध्र, गु० लोदर, पटिया लोदर, फा० मगाम, ला० सिम्पलोकोस रासीमोसा।

लोधका वृक्ष होता है जिसके जड़की छाल प्रयोगमें ली जाती है।

लोध, ग्राही, हल्को शीतल, नेत्रोंको हित-कारी, कफ पित्तनाशक और कसाय होता है।

प्रयोग—रक्तपित्त ज्वर, अतिसार, और शोथ रोग को दूर करता है। विशेष करके इसमें विषनाशक गुण हैं। मात्रा ५ रत्तीसे लेकर ५ मांशे तक।

संस्कृत ग्रन्थोंमें लोधको शीतल और ग्राही मानते हैं और आँतड़े, आँख तथा नासूरके घावमें उपयोगी गिनते हैं। मसूड़े नरम हो गये हों अथवा उनमेंसे रुधिर निकलता हो तो छालका क्वाथकर कुल्लेकरनेसे रक्तस्राव बन्द हो जाता है।

बच्चेकी नाभी व ठुड्डी पक जाने पर

लोध, हल्दी, फूल प्रियंगु, इनसबको शहदमें बारीक पीसकर ठुड्डीके ऊपर लेप कर देवे तो लाभ होगा।

गर्भ रक्षा

लोध, मुलहठी बराबर पीसकर नौ माशा भर लेके गायके दूधमें मिलाकर पीनेसे गर्भ स्थिर रहता है

लहसन

उधर "कन्दरी" के प्रकरण में लहसन के नाम आदि लिखे हुए हैं। यहाँ 'लहसन' से दवाइयाँ लिखी जाती हैं।

कान की सूजन पर

लहसनकी जड़ पीसकर गुनगुना २ पतला लेप करे।

बहरेपन की दवा

लहसनमें बकरीका पित्ता मिलाकर थोड़े तेलमें गुनगुनाकर कानमें टपकावे तो कानका बहरापन दूर हो।

कई रोगोंकी दवा, लहसन कल्प

दूध या घृत या तेल या मांस रसके साथ १४ दिन पर्यन्त खिलाओ तो सर्व प्रकारका बात विषम-ज्वर, शूल, गोला, अग्निमांद्य, प्लीहा, मस्तक रोग और वीर्यके सर्व रोग दूर होंगे।

वायु रोगमें

टके भर लहसनका रस और १ टके भर तेलमें सेंधा नोन डालकर पिलाओ तो वायुके सर्व रोग दूर होंगे।

लहसन पाक

समस्त वायु रोगकी दवा

पैसे भर लहसनको जीरे के सदृश कतर के पैसे भर दूध और धेले भर पानीमें पकाओ। दूध पानी सूख जानेपर लहसनको खरल करके लुगदी बाँध लो। इस लुगदीको अधेले भर घी के साथ आँच देकर लाल हो जानेपर निकाल लो। अनन्तर आधी रत्ती कस्तूरी, चार रत्ती लौंग, १ माशा जायफल, एक माशा दालचीनी, २ स्वर्णपत्र (सोनेके वर्क) और उपर्युक्त निर्मित लहसन की लुगदी यह सब पीस के दो पैसे भर मिश्री की चासनीमें डाल दो, तदनन्तर इसको चार गोली बनाकर १ गोली प्रातःकाल (और अधिक वायु का रोग हो तो १ गोली पुनः सायंकाल को) खिलाओ तो सर्व वायुजन्य वेदना शान्त हो जायगी। यदि वात-व्याधिकी विशेष तीव्रता हो तो उक्त क्रमानुसार २२ तथा ३६ दिन पर्यन्त इसी गोलीका सेवन कराओ तो समस्त वातरोग दूर होकर शरीरको पुष्टता और क्षुधा प्राप्त होगी।

ये गोलियाँ जितनी चाहो उक्त प्रमाणसे ही बनाओ।

गुदाकी सूक्ष्म कृमि नाश होवें

लहसन, काली मिर्च, सेंधा नोन और हींगको पानीमें पीसकर गुगदाके भीतर लेप करो तो सूक्ष्म कृमि नाश होवें।

आमवात की दवा

दो टंक लहसनका रस, दो टंक गौ के घी में नित्य पिलाओ तो आमवात दूर हो।

लिसोड़ा

इसके श्लेष्मान्तक, पिच्छिल और भूतवृक्षक ये संस्कृत नाम हैं। हि० लिसोड़ा, लिसोरा और लमेरा कहते हैं। म० भोकर ता० विड़ि, तै० नावेरु, उ० ग्रहु, फा० शिपिस्तां, सरपिस्तां, अं० नेरोलिण्ड सेपिस्टन, ला० कोर्डिया एगस्टीफोलिया।

यह गुणमें मधुर, कषाय, कडुवे, बालोंकी सुन्दरता कारक और कफ-पित्तनाशकहै। प्रयोग विष विस्फोट और कुष्ट रोग को नाश करता है। यह कलेजे को अहितकर है। इसका दर्पनाशक उन्नाब है।

लौंग

इसे संस्कृतमें लवंग, देवकुसुम, श्रीसंलक और श्रीप्रसून कहते हैं। हि० लौंग, बं० लवंग, गु० लपींग, तै०—किरमवेर, अ०—करनफल, फा० मेहक. इं० कलब्ज, ला० काफ़िओफिईलस।

यह यवद्वीप, बलीद्वीप, चीन, यूरप आदि स्थानों में यहाँ से जाती है।

यह गुणमें कटु, तिक्त, हल्की, नेत्रोंको हितकारी, शीतल, दीपन, पाचन और रुचिकारी है।

यह कफ, पित्त, रुधिरके विकार, तृषा, वमन, अफरा, शूल, खाँसी, श्वास, हिचकी और क्षयरोग को शीघ्र दूर करती है। मात्रा ३॥ माशेकी है। दालचीनी, कुलिंजन और जायफल इसकी प्रतिनिधि है और अरबी बबूलका गोंद इसके अवगुण को दूर करता है।

यह रसयुक्त, नवीन, लम्बी, लाल और काले रंगको तथा मोटी लौंग उत्तम होती है। यह प्रायः मशालेमें डाली जाती है।

हिन्दुस्तानी वैद्य लौंग को गरम, पाचक, कफ कष्टकर्ता, कुपित आमको मिटानेवाली मानते हैं। उसी प्रकार पेटको ऐंठन नष्टकर्ता तथा प्यास बन्द करनेको और वमन तथा वायु आदिके दूर करनेको औषधके तरीके पर देते हैं।

यूनानी हकीम लौंगको खुश्क और गरम

गिनते हैं और देहके बाहरी भागमें लगानेको अथवा विष खाकर आवे तो इसको विषके प्रभावको न्यून करनेको तथा माथेके दुखनेको नष्ट करनेकी इसमें शक्ति है। तथा इसके चूर्णको खाने और लगानेसे मसूड़े मजबूत होते हैं। श्वास सुगन्धित निकलता है, कफ बैठ जाता है तथा पाचनशक्ति बढ़ती है।

अंग्रेजी औषधोंमें लौंगको गरम जागृतकर्ता तथा पेटकी पीड़ाको नष्टकर्ता मानते हैं तथा बद-हजमी और अन्य-अन्य बीमारियोंमें अनेक पदार्थों के साथ मिलाकर देते हैं।

गर्भवती स्त्रियोंकी उलटीमें

यदि उलटी होती हो तो लवंग को गरम जलमें भिगोकर उस जलको पिलावे।

नजलेकी दवा

लौंग पीसकर तालू पर लगावे तो सर्दीका नजला दूर होवे।

तथाच—

दो लौंग और चार रत्ती अफीम पानीमें

पीस गुनगुना कर मस्तक पर लगानेसे नजलेकी पीड़ा को दूर करता है।

लवंगादि चूर्ण

लौंग, कंकोल, कालीमिर्च, शख, चन्दन, तगर, कमलगट्टा, कालाजीरा, इलायची, अगर, नागकेसर, सोंठ, पीपली, चित्रक, नेत्रवाला, भीम-सेनी कपूर, जायफल, बंशलोचन और इन सबसे आधी मिश्री इन सबका महीन चूर्ण कर नित्य १ टंक खिलाओ तो राज रोग, मन्दाग्नि, कास हिचकी संग्रहणी, अतिसार, भगन्दर, प्रमेह ये सब दूर हों।

लाल मिरचा

सँस्कृत–कटुवीरा। हिन्दी–लाल मिरचा, मिर्चा। बंगला–लंका। मराठी–मिरची। अरबी–फिलर अहमर। फारसी–फिलर सर्ख। लाटिन–कंप्सिलम। अंगरेजी–डीपेयर।

इसका पौधा मकोय की भाँति और फूल सफेद होते हैं। शुरूमें फलका रंग हरा और पकने पर लाल हो जाता है। यह सारे हिन्दुस्तानमें उत्पन्न होता है और बहुत खर्चमें आता है।

इससे पित्त और दाह उत्पन्न होता है। यह जठराग्नि को बढ़ाता है। लाल मिरचेसे कफ,

आँव और शूल उत्पन्न होता है। इसके बीजों का तेल गठियामें बहुत लाभदायक है।

यदि किसीको पागल कुत्ता या स्यार काटे हो तो उसके घावमें पिसी हुई लाल मिरच भर देने से विष दूर हो जाता है।

काटे हुए सर्पके विषसे मनुष्य यदि अचेत हो गया हो तो पिसी हुई लाल मिर्च रोगीके मुखमें छिड़क देवे तो वह इससे सचेत हो जायगा।

जहाँ पर बिच्छूने डंक मारा हो, उस स्थान पर लाल मिरचे को पानीमें पीसकर लेप करनेसे आराम होता है।

लाल मिरचा कपूर और हींग की गोली बनाकर हैजेमें देते हैं। रेवतचीनी, सोंठ और मिरचा इन तीनों को बराबर-बराबर लेकर गोली बनाकर सेवन करनेसे कब्ज जाता रहता है।

लाल मिरचके बीजके तेल को अम्हौरियों पर लगानेसे अम्हौरियाँ मर जाती हैं।

जिनको मल द्वारा खून जाने की बीमारी (रक्तातिसार) हो गई हो तो इसके बीजों को तेलमें

डालकर जला डालें और उसे छान लेवें, इस तेल को दस बूँद खाँड़में मिलाकर खिलानेसे लाभ होता है।

जिसको तिजारी का बुखार आता हो उसे चाहिये कि इन लाल मिरच को पानीमें भिगो कर मसल डाले और छानकर दो बूँद आधी छटाँक जलमें डालकर सेवन करे तो लाभ होगा।

शतावर

सं०—सतावरी, वसुसुता, सतवीर्य्या, नारायणी, पीवरी, महासतावरी। हिं०—छोटी सतावरी, शतमूली, सहस्रमूली। मराठी—सानी कांटेसरु। गुजराती—सत्तावलि। अंग्रेजी—शकाकुलमिश्री। फारसी—बूजीदा। लाटिन—ऐस्पेड सेरशिमोसस।

सोवेके सागके समान महीन पत्ते होते हैं। इसमें सफेद फूल लगते हैं। इसकी जड़ ली जाती है। शतावर मोटी और सफेद उत्तम होती है।

गुण—भारी, शीतल, कड़वी, स्वादिष्ट, रसायन, मेधावर्धक, अग्निकारक, पुष्टिकर, स्निग्ध नेत्रों को हितकारी, वीर्यकर्त्ता, स्तनोंमें दूधकर्त्ता, बलकर्त्ता और वातनाशक है।

प्रयोग—यह गोला, अतिसार, रक्तपित और

प्रमेह रोगको शान्त करे। इसके दर्पनाशक बड़हल और शहत हैं। बवासीर, संग्रहणी और नेत्ररोग शांत करती है।

सम्हालू

हिं०—सम्हालू, निर्गुंडी, मेउड़ी, सेदुआरि। बं०—निसिन्दा; म०—निगुंडी, निगड़ी, वनय। को०—निगूड़। का०—करियल्लीकि। गु०—निगोड़, नगड़। तै०—तेलवा, बीली। ता०—नोकची। फा०—सान्वालि। ला०—वाइटेक्स निगंडा।

सम्हालूके पत्ते नीमके पत्तेके आकारसे कुछ बड़े तथा अनीरदार होते हैं। काले रंगवाले सम्हालू को निगुण्डी भी कहते हैं। इसके पत्ते अरहरके पत्ते के आकारके बहुत मुलायम और गुलगुले होते हैं। इसके पत्तोंको पुस्तकमें रखनेसे पुस्तकमें कीड़े नहीं लगते। पेड़ तीन चार हाथ बड़ा होता है।

गुण—स्मरणशक्ति को बढ़ानेवाला, कषैला, चरपरा, हल्का, बालों को लाभदायक, नेत्र को हितकारी। आम, बात, शूल, कृमि, कोढ़, श्वांस, अरुचि तथा कफ ज्वर को दोनों प्रकार का सम्हालू लाभ पहुँचाता है। इसकी जड़ दवाके काममें आती है। दो माशे की एक खुराक होती है। इसके पत्ते

भी कृमि आदि कीड़े और वात कफ को हरण करते हैं।

कुत्ता काटने पर

सम्हालू और करफस अनारकी कली तीन-तीन माशे घोटकर पिलानेसे कुत्ता काटने का विष उतर जाता है।

सर्प बिच्छू दूर हों

जिस घरमें साँप और बिच्छुओंके रहने की आशंका हो उस घर वालों को चाहिये कि घरमें सम्हालूकी पत्तीकी धूनी देवें। दो चार दिन लगातार धूनी देनेसे साँप बिच्छू घर छोड़कर आपसे आप भाग जावेंगे।

स्वप्नदोष की दवा

यदि किसीको अधिक स्वप्नदोष होता हो तो रातमें सोते समय बिस्तरके नीचे सम्हालूके पत्तोंको रखकर सोवे स्वप्नदोष नहीं होगा।

सरेसाम की दवा

सम्हालूका बीज खानेवाला मनुष्य नपुंसक हो जाता है। बीजोंको घिसकर लगानेसे सरेसाम और दिमाग की सूजन दूर होती।

वात रोग की दवा

गठियाके रोग पर सम्हालूके पत्तोंका काढ़ा पीनेसे बड़ा लाभ होता है। सूजन और प्रसूति का रोग भी जाता रहता है। सूजन और गाँठ पर गरम पत्तों को बाँधनेसे गाँठ की सूजन को तत्काल लाभ पहुँचाती है।

सनाय

इसे संस्कृतमें स्वर्णपत्री, कल्याणी, हेमपत्रिका, रेचिका, स्वर्णनी, हि० सनाय, सोनामुखी, इं० टिनेवेलीसिना, ला० सिनाइडाका कहते हैं।

पलासके और कबूतर की जिह्वाके समान लम्बे बारीक पत्ते और रंगमें कुछ-कुछ पीली हो ऐसी उत्तम होती है।

यह गुणमें दस्त करानेवाली और मल को निकालने वाली है।

यह मन्दाग्नि, विषमज्वर, अजीर्ण, प्लीहा, बद्धगुद, कलेजेके रोग, पांडुरोग की दवा और कफका हरण करनेवाला है। इसकी मात्रा दो तोलेकी है। प्रतिनिधि निशात और दर्पनाशक बिहीदाना और ईसबगोल है।

नष्ट आर्तव में

(१) सनाय की धूनी देवे।

(२) सनायकी पत्ता या बीजका जुलाब लेवे।

(३) इसके सेवनसे बुढ़ापेमें सफेद बाल काले होते हैं।

जलन्धर की दवा

सनायके ताजे फलके रस को खाँड़के साथ मिलाकर जलंधरके रोगमें देवे।

त्वचा का रंग बदले

सनाय को पत्ती का लेप करे।

सरफोंका

इसे संस्कृतमें शरपुंखा, सितसायका; सितपुंखा, श्वेतपुंखा और शुभ्रपुंखा कहते हैं। हिं० सरफोंका, म० कंट उन्हली, का० मुलुग्गोगी। गु० शरपुंखा।

यह दो प्रकारका होता है। परन्तु दोनों गुणमें समान हैं तथापि सफेद सरफोंका अत्यन्त गुणकारी और रसायन कर्ममें उत्तम है।

बवासीर की दवा

सरफोंका एक भाग तथा भाँगके पत्ते दो भाग मिलाकर देनेसे दुखती बवासीर नष्ट होती है।

(१) काली मिरचके साथ देनेसे पेशाब अधिक उतरता है तथा (२) मुख्य करके प्रमेह को नष्ट करता है।

सहजना

इसे संस्कृतमें शोभाञ्जन, शिग्रु, तीक्ष्णगंधक, अक्षीव और मोचक कहते हैं। हिं० सहज़ना, बं० सजिणा, म० शेवगा, फा० अरस्विनबणदहूविननु गु० सरगवा, तै० मुलङ्गा, ता० मौरंग, कं० होसरेडीशट्टी।

इसके तीन भेद हैं। श्याम, श्वेत और लाल। सहजनेके बीज को श्वेत मिरच कहते हैं और लाल रंगके सहजने को मधुशिग्रु कहते हैं।

यह गुणमें कटु और पाकमें भी कटु है। यह तीक्ष्ण, गरम, मधुर, हलका, दीपन, रोचन, रुक्ष, खारीगुणयुक्त, कड़वा, दाहकर्त्ता, संग्राही, शुक्रकर्त्ता, हृदयको प्रिय, नेत्रोंको हितकारी और रक्तपित्त को कुपित करता है।

प्रयोग—यह बादी, कफ, बिद्रधि, सूजन, कृमि, मेदरोग, अपची, विष, प्लीहा, गोला, गंड-माला और व्रण को नष्ट करता है।

घोर पीड़ामें

सहजने की छाल और पत्तों का स्वरस देवे।

तथा च—

सहजनेके बीज तीक्ष्ण, गरम, विषनाशक, बलनाशक और वात कफनाशक हैं।

सिर दर्दमें

सहजनेके पत्तियोंका रस निचोड़कर नास लेवे।

इसकी छाल तथा फली प्रयोगमें ली जाती है। मात्रा ४ माशे की है।

सम्मतियाँ

हिन्दुस्तानी वैद्य—सहजनेको गरम, तीक्ष्ण, मूत्रवर्द्धक और त्वचा पर लगानेसे चमड़ा को लाल करनेवाला मानते हैं। सहजनेके बीजों को भी गरम मानते हैं और उसको श्वेत मरिचके नाम से बोलते हैं।

हारीतसंहितामें—सहजनेकी दो जाति कही है। लाल और सफेद चमड़ीको लाल करनेसे लाल की अपेक्षा सफेद अधिक गुणवाला है तथापि भीतरी खाजके उपयोग करने को लाल जातिका अधिक पसन्द आता है तथा यदि कलेजा और तिल्ली की

गाँठ मोटी हो गई हो तो इसको देते हैं। शरीरके भीतरी भागमें गहरी सूजन हो तो जड़की छाल का क्वाथ करके सूजनके ऊपर सेक करनेके काम आती है तथा पेशाबकी थैलीमें पथरीके वास्ते भी परमोपयोगी है। इस वृक्षका गोंद तिलके तेल में मिलाकर कान में टीस मारता हो तो डालनेसे आराम होता है।

मुसलमानी हकीम लिखते हैं कि सहजनेके फूल गरम हैं और उनके देने से सर्दी मिट जाती है। सूजन उतर जाती है। पाचन शक्ति बढ़ती है। पेशाब अधिक उतरता है तथा पेशाबकी थैलीमें पथरीका उत्पन्न होना बन्द होता है तथा श्वासके रोगमें उत्तम लाभ करता है। जड़ का चूर्ण डालकर बनी हुई पुल्टिस बाँधनेसे सूजन बिल्कुल उतर जाती है, परन्तु चमड़ीमें खुजाल चलकर पीड़ाको उत्पन्न करती है। इसकी फली शाकमें तथा कढ़ी आदिमें डालते हैं और इसका अचार भी बनाते हैं। इसके सेवन करनेसे पेटमें कीड़े कदापि नहीं पड़ते।

डाक्टर एन्सली कहता है कि सहजनेके वृक्ष की जड़ २० ग्रेनकी मात्रामें लकवाकी बिमारी तथा बारम्बार आनेवाले ज्वरमें दी जाती है तथा मृगी और स्त्रियोंको होनेवाली हिस्टीरिया बीमारि में उत्तम असर करती है। बीजमें से निकला हुआ तेल संधिवातके रोगमें संधियोंके ऊपर चुपड़ते हैं। खिचाव अथवा शूल होता हो तो इसकी जड़का क्वाथ करके जलन्धरके रोगमें देते हैं।

डाक्टर रीड कहता है कि सहजनेके पत्ते छाल और जड़में खिचाव बन्द करने की शक्ति है। पत्तोंका रस निकाल उसमें काली मिर्चोंको पीस मृगी आनेवालेके नेत्रोंमें चुपड़ते हैं तथा निमक मिलाकर छोटे-छोटे बच्चोंके पेटमें अफरा आनेपर दिया जाता है। फोड़ेपर पत्तोंको पीसकर बाँधते हैं। जल्दी पकाता है। छाल और जीरा चावलके जलमें पीसकर मुखमें रखे तो मसूड़ोंका फूलना और दाँतोंमें टीस मारना कम होता है।

सहजन के पत्तों को गरम कर नासूर और नहरुवा पर बाँधा जाता है।

सिर दर्दमें इस वृक्ष का गोंद कनपटी तथा बद और गुह्येन्द्रियके रोगमें लेप किया जाता है।

चरकसंहितामें—इस वृक्षकी छाल और जड़को शिरोविरेचन और पसीने निकालनेवाली माना है।

सुश्रुतसंहितामें—इसको कफ-मेद-निवारक, मस्तक-शूलनाशक और गुल्म तथा विद्रधिनाशक माना गया है।

तन्द्रा और अति निद्रामें

सहिजनेके बीज, सेंधानोन, सरसों कूट इनको बकरेके दूधमें पीसकर नास दो।

सोंठ

इसे संस्कृतमें शुंठी, विश्वा, विश्व नागर, विश्वभेषज, उषण, कटुभद्र (यानी चरपरे पदार्थोंमें श्रेष्ठ), शृङ्गबेर और महौषध कहते हैं। हिं० सोंठ, सुंठ, बं० सुंठ, म० सुंठ, गु० शुंठ्य, तै० शोंठी, फा० लंजबील, अंग्रेजी डाईजिंजर कहते हैं।

यह गुल्म जातिकी वनस्पतिका कन्द है। रेतीली जमीनमें और जलके किनारे बहुत होती है। पूरब आसाम आदि मुल्कसे आती है। इसकी अनेक जाति है। परन्तु इसमें घाट की सोंठ उत्तम होती है। जिसमें रेशे (तुष) अधिक

हो उसको न लेवे। मोटी रेसेको तोड़नेमें नरम और जो सफेद होती है वही लेनी चाहिये।

सोठका रस चरपरा है। गुणोंमें स्निग्ध और हलकी, बीर्यमें उष्ण और विपाकमें मिठी है।

गुण—यह रुचिकारी, आम वातका नाशक, पाचन करता, कफ वात और मलादिकके रुकने को नाश करता, बलकारक तथा सर (मलादिक प्रवर्तक) वमन, श्वास, शूल, खाँसी, हृदयके रोग श्लीपद, शोथ, बवासीर, अफरा, उदर और वादी के रोग इनको नष्ट करती है।

(१) सोंठके चूर्ण को गरम जलके साथ फाँके तो पीड़ायुक्त आम वातका नाश करती है, बुद्धि को बढ़ाती और शिरके तथा गले की सरदी को नष्ट करती है।

इसकी मात्रा दो माशे की है। दर्पनाशक कपूर और शहद हैं। सोंठके अभावमें अदरक ली जाती है।

ज्वरमें श्वासका उपाय

सोंठ, मिर्च, पीपल, नागरमोथा, काकड़ा-

सिंगी, भारंगी और पोहकरमूलके १ टंक चूर्ण का क्वाथ प्रतिदिन सात दिवस पर्यन्त पिलाओ तो ज्वर का श्वास दूर हो।

सौंफ

इसे संस्कृतमें शतपुष्पा, शताह्वा, मधुरा, कारवी, मिश्रि, अतिलम्बी, सितच्छत्रा, संहिता और छत्रिका कहते हैं। हिं० सौंफ, बं० शुलफा, मौरी, म० बालन्तशोप, बड़ी सोप; क० कासब्बसिगे, गु० वरीयाली, फा० एमयानज, एजयाना, वादियाँ, अं० पीम्पेनेल अनीसम्।

यह चैत्र, वैशाखमें फूलती है और दूर-दूर तक इसकी सुगन्धि जाती है।

यह गुणमें हल्की, तीक्ष्ण, पित्तकर्त्ता, दीपन, चरपरी, गरम, ज्वर, वादी, कफ, व्रण, शूल और नेत्रके रोगों को हरण करती है। सोआमें भी सौंफके समान ही गुण है। विशेष करके योनिशूल, मंदाग्नि, हृदय को हितकारी, मलकी बद्धता, कृमि और शूल को हरण करती है।

यह रूखी, गरम, पाचनी, खाँसी, वमन, कफ और वादी इनको हरण करती है।

जोड़ोंके रोगोंकी चिकित्सामें

सौंफ कासनीके बीज, मकोय, हंसराज प्रत्येक सात माशे, सौंफकी जड़, कासनीकी जड़, मुलहठी की जड़ प्रत्येक नौ माशे, बाबूनेके फूल, गुलकन्द तीन तोले औटाकर पीये।

सर्व शरीरकी हड़फूटनको दूर करे

काबली हड़का वक्कल, कालीहड़, सौंफ काली मिर्च, पीपल, कंजाकी मिंगी, कालीजीरी प्रत्येक एक भाग, मुनक्का ५ भाग कूट छानकर गोलियाँ बनावे। मात्रा ७ माशे।

सिंघाड़ा

सिंघाड़ेमें दोनों ओर बड़े-बड़े काँटे होते हैं यही कारण है कि संस्कृतमें इसका नाम भृङ्गाटक है।

इसका फल एक काले मोटे छिलकेसे ढका रहता है, जिसको छील कर निकाल देनेसे भीतरसे सफेद रंगका सिंघाड़ा निकल आता है, परन्तु जब यह अच्छी तरह पक जाने पर छिला जाता है तो इसके गरीका ऊपरी भाग कुछ लालिमा लिये सफेद रहता है। परन्तु भीतरकी गरीका रंग

चाहे कच्चा हो वा पक्का सदा सफेद निकलता है। इसकी गरी कच्ची वा पका कर दोनों प्रकारसे खानेके काममें आती है। इसको सुखाकर पीस लेने पर आँटा बन जाता है, जिससे पूड़ी वा हलुआ बनाया जाता है।

सिंघाड़ा पुष्ट, ग्राहक और हल्का, वीर्यवर्द्धक, वातकारक, कफवर्द्धक, दाहनाशक और मीठा होता है।

१—सिंघाड़े की बेल को पीसकर दाद पर लगानेसे दाद रोग नष्ट हो जाता है।

२—सिंघाड़े का हलुआ खानेसे वीर्य की वृद्धि होती है।

३—सिंघाड़ेका हलवा दूधके साथ सेवन कराने से गर्भवती स्त्रियें का रक्तस्राव बन्द हो जाता है।

हल्दी

संस्कृत—हरिद्रा, कांचनो, वरवर्णिनी, कृमिघ्नी, हलदी, योषित्प्रिया, हट्टविलासिनी और जितने रात्रिके संस्कृत नाम हैं सब हल्दीका नाम जानना। हिन्दी—हल्दी, हरदी। बंगला—हरिद्रा। मराठी—हलद। का०—अरसिन। तेलगू—पांसुपु। गुजराती—

हलदर। फारसी--अरुकुलसवागैन, जर्दचोब। इंगलिश--टरमेरिक। लाटिन–करक्युमालोगा।



यह एक तरह की कन्द है और मसालेके काममें आती है।

गुण—कटु, रुक्ष, तिक्त, गरम और वर्ण-कर्त्री है। इसके सेवनसे कफ, पित्त, त्वचादोष, रक्त-दोष, प्रमेह, सूजन, पाण्डु रोग और व्रण ये नष्ट हो जाते हैं। दो माशे की एक मात्रा होती है।

बनहरिद्रा (बनहल्दी)

हिन्दी--बनहल्दीका कन्द, जंगली हल्दी। मराठी--राम हलद। गुजराती--बनहलदर।

झह वात, रक्त और कोढ़ को नष्ट करने का दवा है। इसको मात्रा दो माशे की है।

कपूरहल्दी

संस्कृत—दार्वमेदा, आम्रगन्धा, दारुकर्पूरा, सुरीमत्, पद्मपत्रा, सुरतारका। हिन्दी—आँवाहल्दो। बंगला—आमआदा। मराठी—आँवेहलद। कनाटी—हलीलरसोन। तैलङ्ग—कारुपासुपु। अंग्रेजी—मेगोजिजर। लाटिन—कर्क्यूमा एरोमेटिक।

कपूरहल्दी, शीतल, पित्त हरण करने वाली, वातकर्त्ता, कड़वी मीठी और सब प्रकार की खुजली को नष्ट कर देती है। इसकी जड़ को लेकर दो माशे की एक खुराक बनाकर दवाके काममें लावे।

दारुहल्दी

संस्कृत—पर्जन्या, दार्वी, पर्जनी, दारुहरिद्रा, कटकटेरी, पचंपचा, पीता, कालेय, पीमद्रु, हरिद्र, कतिक, पीतदारु। हिन्दी—दारुहल्दी। बंगला—दारुहरिद्रा। गुजराती—दारुहलद्दर। का०—मरनरिसिन्। तैलङ्गी—पासुपु। अंगरेजी—पीपाक। लाटिन—ब्रेवेरिस।

इसकी तासीर गरम होती है। यह कटु, तिक्त, स्वेद पैदा करने वाली, विषघ्न तथा कफ पित्त-नाशक है। प्रमेह, खुजली, त्वचाके दोष, घाव या

सूजन, कर्णविकार, मुखरोग तथा नेत्र रोग को नाश करती है। इसकी लकड़ी दवाके काममें लाई जाती है। मात्रा दो माशे की होती है।

१—हल्दी, चूना तथा शहद इनको मिला-कर लेप करनेसे चोट चपेटसे उत्पन्न सूजन जाती रहती है।

२—हल्दीको गरमा कर यानी भून कर दाँत के तले दाबनेसे दाँतका दर्द छूमन्तर हो जाता है।

३—हल्दीको घिस कर आँख पर लगानेसे आँख की ज्योति बढ़ती है।

४—हल्दी को पानीके साथ खूब महीन पीस कर उसमें थोड़ा पानी मिला आग पर चुरा कर चोट पर लेप करनेसे चोट की सूजन और दर्द घट जाती है।

५— हल्दी को पीस कर उसमें घी नमक मिला कर आग पर चुरा लेवे। फिर बासी मुँह गरम-गरम चाटे तो खाँसी जाती रहे।

६—भूनी हुई हल्दीमें सोंठ और खाँड़ मिला-कर फाँकनेसे जोड़ों का दर्द अच्छा होता है।

७—हल्दीका लड्डू खानेसे गठियाकी बीमारी अच्छी होती है।

हर्रे

हर्रेके संस्कृतमें १५ नाम हैं। हरड, हड, हर्र।

हरड शाखी अथवा वनस्पति जातिका एक वृक्ष है। इसकी उत्पत्ति प्रायः ठण्डे और पर्वतीय देशोंमें होती है। इसके दो-दो पत्ते आमने-सामने और मोटे तथा अमरूदके पत्तोंके समान और कोमल तथा लाल रंगके होते हैं। इसका फूल बारीक और मौरके समान होता है। फल १ या १॥ इंच का लम्बा होता है। इसको सुखानेसे इसके ऊपर का छाल सूखकर खड़ी पाँच रेखा हो जाती है।

बड़ी हरड़ तौलमें २ से ५ तोले तककी होती है। हर्र जितनी ही नवीन होगी उतनी ही लाभदायक होती है। प्रयोगमें हर्रकी छाल ली जाती है। विजया, रोहिणी, पूतना, अमृता, अभया, जीवन्ती और चेतकी ये हरड़की सात जातियाँ हैं। समस्त रोगोंमें विजया हरड़ ही उत्तम लाभ देती है। हर्र अग्निवर्द्धक, त्रिदोष-नाशक,

बल बुद्धि वर्द्धक, मल-शोधक, कड़वी, कषैलो और रक्तपित्त नाशक है।

(१) हर आँवला और बहेरा को रात भर भीगने दे। फिर प्रातःकाल उसी जलसे नेत्र धोनेसे नेत्रके सब प्रकारके राग नष्ट हो जाते हैं। इसका अर्क पीनेसे कफ और खाँसी भी दूर होती है।

बालकके ज्वर की दवा

एक-एक माशा हर्र की छाल, नागरमोथा और मुलहठा का क्वाथ बराबर ७ दिन तक पिलानेसे बालक का ज्वर नष्ट होता है।

मूत्रकृच्छ्र की दवा

गूदा गोखरू, पाषाणभेद छः माशा और अडूसे के ५ टंक चूर्णका क्वाथ मधुके साथ नित्य पीनेसे दाह वाला मूत्रकृच्छ्र नष्ट होता है।

ज्वर सन्निपात की दवा

बड़ी हर्र की छाल, सोंठ और नागरमोथा इनका दो टंक चूर्ण प्रतिदिन ५ दिन तक खिलाने से सन्निपात ज्वर और अतिसार नष्ट होता है।

हंसराज

संस्कृत—मराठी। हिन्दीमें हंसपदी। बंगला—गोयालेलता। फारसी—परस्योआशाँ मेडिननहेयर। अरबी—शारुलजिबाल। लाटिन—एडीऐन्टम लून्यूलेटम कहते हैं।

इसके पत्तों का आकार हंसके पैरके आकार का सा होता है। इसका पौधा छोटा और डंठल स्त्रीके बालोंके समान काले रंगके होते हैं।

नासूर की दवा

जिसकी आँखमें नासूर हो उसे चाहिये कि इसके पत्तोंको गारकर उससे निकले हुए रस को आँखों की कोवेंमें डाल देवे। क्रमशः दो चार दिन ऐसा करनेसे आँखों का नासूर जाता रहता है।

१—इसको उबालकर अंडकोष पर बाँधने से अंडकोष की सूजन जाती रहती है।

२—इसको पत्तों को पीस लेवे फिर घीमें मिलाकर लेप करे तो सिर का गंज जाता रहे। यदि किसीके सिर पर बाल न जमता हो तो चाहिये कि सोसन का तैल शराब और हंसराज को पीसकर इन तीनों को एकमें मिला लेवे और फिर उस

स्थान पर लगावे और कुछ दिन इसी तरह लगाता रहे तो बाल उग जावें।

कुत्ता काटने पर

ताजी यानी हरी हंसपदी को पीसकर लेप करे तो बावले कुत्ते का काटा घाव, पुराना घाव तथा सिर की गंज ये सब अच्छे हो जाते हैं।

कवची यंत्र

कुप्पीके आकारकी एक काँच की शीशी लेकर कपड़े पर चिकनी मिट्टी का लेप कर या कपड़े का मिट्टीमें सानकर तर लगा डालें। इसी क्रममें कई तह लगाते जावें। जब उसका नम्बर ३ वा सात की गिनतीमें पहुँच जाय तो तह लगाना बन्द कर देवें। शीशीके ऊपर इस तहके लगानेसे यह लाभ होता है कि आँच पर चढ़ानेसे शीशीके टूटने-फूटने का भय नहीं रहता।

जब इस प्रकार शीशी तैयार हो जावे तो उसमें औषधि भरकर बालुका यंत्र वा किसी अन्य यंत्रमें बैठा देवें। बस इसी मिट्टी सने कपड़े की तह चढ़ी शीशी को कवची यंत्र बोलते हैं। इसका

रस बड़े काम का होता है। इसका जारण मारण आदि सभी कामोंमें प्रयोग करते हैं।

लवणयंत्र

एक शीशी जिसको आतिशी कहते हैं बाजार से खरीद कर उस पर करीब एक अंगुल मोटा कपड़ मिट्टी करे और फिर उसे धूपमें भली भाँति सुखाकर इस शीशी को एक बड़े बर्तनके मध्यमें रख उसके चारो तरफ नमक भर देवे, फिर बालुका यंत्रकी तरह आँच देना शुरू करे, क्रमशः रस तैयार हो जायगा। इसी यंत्र को लवण यंत्रके नामसे पुकारते हैं। इससे रस बनाने का काम लिया जाता है जो बहुतसे रोगों पर गुणकारी होता है।

दोला यंत्र

देखकर एक मिट्टी का घड़ा बड़ी गर्दनका खरीद लावे वा न मिले तो आर्डर देकर किसी कुम्हारसे बनवा लेवे और उस घड़े को स्वच्छ जलसे आधा भर दे। फिर औषधि को पारेमें मिलाकर उसके ऊपर भोजपत्र का तीन तह कसकर लपेट देवे और उस पोटलीके ऊपर कच्चा डोरा लपेट

कर बाँध दे ताकि भोजपत्र की तह खुल न सके। तब ऊपरसे तीन तहवाला कपड़ा लपेटकर पोटली बना डाले। इस पोटली को एक सिरेसे बाँधकर उसके दूसरे सिरेमें एक इतनी बड़ी मजबूत लकड़ी बांध देवे कि वह घड़ेके मुँह पर दोनों तरफ कुछ बढ़ी रहे यानी लकड़ी घड़ेके भीतर न जा सके। फिर पोटली को इस रीतिसे लटका देवे कि वह पानीमें अच्छी तरह डूबी रहे, परन्तु घड़ेकी पेंदी न छू सके। बस मिट्टीके घड़े को एक बड़े चूल्हे पर चढ़ाकर नीचेसे आँच देना प्रारम्भ करे। चूँकि पोटली उपरोक्त यंत्रमें झूलता रहता है इसी कारण इसका नाम दोला यंत्र पड़ा है। इसका एक और नाम है जिसको स्वेदन यंत्र कहते हैं।

बालुका यंत्र

एक मिट्टीके मोटे नाँदमें बालू भरकर उसमें दवा भरी शीशीका मुँह बंदकर इस प्रकार गाड़ दे ताकि उसकी गर्दन रेतके बाहर निकली रहे तब उस नाँदको चूल्हे पर चढ़ाकर नीचेसे आँच देकर रस तैयार करे। बस इसीको बालुका यंत्र कहते हैं।

विद्याधर यंत्र

एक हाँड़ीमें ग्वारपाठाके रसमें घोंटे हुए पारेको छोड़ देवे। फिर उस हाँड़ीके ऊपर एक दूसरी हाँड़ी लेकर इस सफाईसे रखे कि कहींसे छिद्र न रहे, बल्कि सन्धिके स्थान पर कपड़ा मिट्टी करके दो तीन तह चढ़ा देवे। जब यंत्र तैयार हो जावे तो पारेवाली हाँड़ी को आग जलाकर चूल्हे पर चढ़ा देवे। ध्यान रहे कि ऊपरवाली हाँड़ीमें बराबर पानी भरा रहे। समय समय पर देखता जावे कि ऊपरकी हाँड़ीका पानी ज्यादा गरम हो गया हो तो उसे कल्छुल आदि किसी बर्तनसे निकालकर बाहर फेंक देवे और हाँड़ीमें फिर दूसरा ठंढ़ा पानी भर दे। अभिप्राय यह कि ऊपर वाली हाँड़ी गरमाने न पावे। इस क्रमसे पाँच पहर तक आँच देकर फिर आँच देना बन्द कर दे। जब आग बुझकर शीतल हो जाय तो चूल्हेसे उतार लेवे। ऊपरकी हाँड़ीकी पेंदीमें पारा मिलेगा। उस पारा को होशियारीसे काछ लेना चाहिये। यही यन्त्र विद्याधर यन्त्रके नामसे विख्यात है।

गर्भ यन्त्र

यह गर्भ यन्त्रका दूसरा प्रकार है। इस यंत्र का एक प्रकार और होता है। परन्तु इसको सरल और साध्य समझकर इसे ही वर्णन करता हूँ। इस यंत्रसे पारेकी पिष्टि भस्म की जाती है। खड़िया मिट्टीका एक चार अंगुलका लम्बा-चौड़ा मजबूत गोल मुखका मूष बनाकर उस मूषके ऊपर एक भाग गूगल और २० भाग नमक पीसकर लेप करे। फिर मूषके अन्दर पारा रखकर मूषका मुख बन्द कर देवे। तब जमीनके अन्दर एक गड्ढा खोदकर कंडेकी आगमें मूषको रख देवे। इस तरह पारा आसानीसे भस्म हो जायगा।

गौरी यन्त्र

एक अच्छी सुडौल ईंट लगभग आठ अंगुल लम्बी हो तथा उसीके अनुपातसे चौड़ाई और ऊँचाईकी तैयारी करा लेवे। फिर ईंटको लेकर उसके मध्यमें एक गड्ढा बनावे और उस गड्ढेको काँचके से खुरचकर एकदम यानी अच्छी तरह साफ कर लेवे। फिर चूना पोत दें। तत्पश्चात् सोने-चाँदी वा

अभ्रकके सत्तमें घोंटा हुआ पारा उस ईंटके बनाये हुए गड्ढेमें भरकर उसके नीचे गन्धक बिछा देवे। तब गढ़ेके ऊपर कपड़ा रखकर उसका मुख कपड़ा मिट्टीसे बन्द कर उसमें आने ऊपलोंकी अग्नि देवे। पहलेवाले घड़ेके छेदपर जिसमें बाँसकी नली लगाई है, अगल-बगलसे मिट्टी लेप दे ताकि कोई सन्धि न रहने पावे। बस अर्क खींचनेका खासा यन्त्र तैयार हो गया। जिस चीजका अर्क खींचना हो उस चीजको घड़ेमें भरकर ऊपरसे घड़ेमें पानी भर देवे। फिर बस घड़ेका मुख भलीभाँति बन्द करके घड़ेमें नीचे आग लगाना शुरू करे। अग्नि की गर्मी से पहले घड़ेका जल बाँसकी लगी नलीसे दूसरे घड़ेमें भाप द्वारा जायगा, यही जल उस चीजका अर्क होगा। इस अर्कके ऊपर तेलकी तरह कुछ चीज तैरती रहती है, इसको सावधानी से ऊपरसे काढ़कर किसी दूसरे पात्रमें रख छोड़े। यही अतरस है। इस प्रकार अर्क दो-तीन बार खींचा जाता है। परन्तु पहली बारके अर्कके समान दूसरी वा तीसरी बारका अर्क नहीं होता। क्रमशः

अव्वल, दोयम तेयम दर्जे का हो जाता है। इस यन्त्र को कुछ लोग भपका भी कहते हैं।

संखिया का फूल उड़ाना

एक ईंट लो कि बहुत बड़ी और मोटी हो लेकर उसके बीचमें एक गोल गड्ढा बना लेवे। फिर संखियाको ग्वारपाठेके रसमें घोटकर उसकी लुगदी बना ले। इस लुगदी को ईंटके गढ़ेमें रखकर उसके ऊपरसे ताँबे की एक कटोरी औंधी रखकर चिकनी मिट्टी और कपड़ेके योगसे उसकी सन्धि बन्द कर दे ताकि धुआँ बाहर निकलने न पावे। इसके धुएँ से आँखको हर समय सावधानीसे बचाता रहे। ऊपर बतलाई ईंटको चूल्हे पर रखकर नीचेसे आग जला दे। औंधी हुई कटोरीके ऊपर भाँगरे वा मूलीके पत्तोंके रसमें कपड़ा भिगोकर फेरता रहे ताकि कटोरी गरमाने न पावे। इस तरह कुछ देरके बाद संखिया का फूल उड़कर कटोरीमें आ लगेगा। इस फूल को कटोरीसे निकालकर दवाके काममें लावे। यह फूल तिजारी वाले रोगीके लिये बड़ा गुणकारी होता है। तिजारी आनेसे पहले

आधी रत्ती पानमें धरकर सेवन करनेसे बुखार नहीं आता।

मृगांक का प्याला बनाना

सिगरफ मैनसिल, हरताल, आमलासार गन्धक, नौसादर और पारा इनमें हर एक चीजों को बराबर-बराबर लेकर पहले गन्धक और पाराको खरलमें रखकर धीरे-धीरे भली प्रकार रगड़ लेवे। जब उसमें कजली बन जाय तो उस कजलीसे उपरोक्त वस्तुओंको एक-एक करक डालता और घोटता जावे, जब सब घुटकर एक दिल हो जाय, तो एक आतिशी शीशीपर तीन-चार तह कपड़-मिट्टी चढ़ाकर सुखा लेवे। पश्चात् इन्हें बालुका यन्त्रमें रख अग्निपर चढ़ाकर दो प्रहर तक खूब आँच देता जाय। जब धुवाँका निकलना एक-दम बन्द हो जाय ते शीशीको आँचसे उतारकर अलग रख दे और एकदम ठंढी हो जानेपर दवा को शीशीसे बाहर निकाल लेवे। अब आपको जितना बड़ा प्याला बनानेका मंशा हो उतनी चाँदी लेकर उसमें चाँदीका चतुर्थांश दवा मिला

लीजिये और इन सबको आगपर चढ़ाकर पिघलावै। जब अच्छी तरह पिघल जाय तो साँचेमें ढालकर प्याला बना लें। बस प्याला तैयार हो गया। इस प्यालेमें प्रतिदिन दूधमें मिश्री मिलाकर खानेसे पुरुषत्व और बलकी वृद्धि होती है। यहाँ तक देखनेमें आया है कि वृद्ध आदमी भी जवान का सा आचरण करने लगता है।

प्रदरकी दवा

मैनसिल और शीशा इन दोनों चीजोंको आगपर चढ़ा देवे और उसमें अडूसेका रस रहर कर छोड़ता जावे और अडूसेकी लकड़ीसे घोंटता भी रहे। पश्चात् गजपुटमें रखकर फूँकना चाहिये। इस प्रकार तैयार हुए भस्मके सेवनसे प्रदर, प्रमेहका रोग नष्ट होता है।

बिरोजेका तेल निकालना

जिस औसतमें बिरोजेका तेल निकालनेका विचार हो उतना ही बिरोजा लेकर आगपर कड़ाही चढ़ाकर उसमें छोड़ देवे। जब बिरोजा कड़ाहीमें आँचसे अच्छी तरह पिघल जाय तो

उसमें ईंटके नन्हें २ टुकड़ोंको छोड़ देवे। ये टुकड़े बिरोजेको सोख लेंगे। फिर इन्हीं ईंटके टुकड़ोंको हाँडीमें भरकर ऊपरसे दूसरी हाँडी औंधाकर भली भाँति कपड़मिट्टी कर दे ताकि सन्धि न रहने पावे। तब इस हाँडीको चूल्हे पर चढ़ा दे। परन्तु ध्यान रहे कि हाँडी तिरछी रहे ताकि ऊपरवाली हाँड़ी टेढ़ी रहे। फिर ऊपर वाली टेढ़ी हाँड़ीमें एक छेद करके उसमें बाँसकी एक नली लगा दे और नलीके नीचे चीनी का प्याला रख दे। इस प्रकार सब चीज तैयार कर चूल्हेमें आग लगा देवे। आगकी गरमीसे नीचेवाली हाँड़ी से तेल उड़ २ कर ऊपर वाली हाँड़ीमें जायगा और नली द्वारा टपक २ कर प्यालेमें गिरेगा। ऊपरवाली हाँड़ी पर पानी का पोचारा देता जाय। यह तेल सूजाकके रोगियोंके लिये बड़ा उपयुक्त होता है। इसको दो तीन बूँद बताशे वा पानीमें मिलाकर सेवन करना चाहिए।

खूनी बवासीर की दवा

शामको इसबगोलको पानीमें भिगो दे और

सवेरे उठकर हाथसे मलकर छान ले। फिर उसमें अन्दाजसे थोड़ी सी खाँड़ मिलाकर खूनी बवासिर वाले रोगी को पिलावे। इस दवाके सेवन करनेसे चाहे कैसा ही खून जाता हो रुक जायगा और दाह तथा ज्वर भी घट जायगा। वा पिसी हुई नागकेशरमें मिश्री और लौना घी मिलाकर सेवन करे तो रुधिर आना बन्द होवे।

भस्मक रोग की दवा

आँगाके बीज का छिलका उतार दूधमें डाल कर खीर पका ले और फिर खीर को खावे तो भस्मक रोग दूर हो।

ज्वरनाशक दवा

तिजारी चौथिया और इकतरा आने वाले रोगी को पारी वाले दिन ज्वर आनेसे पहले ही अगस्तके पत्तों का रस सुँघा दे, ज्वर निश्चय पूर्वक छोड़ भागेगा।

तिमिरादी रोग की दवा

सेंधा नमक, हीरा कसीस, मैनसिल, शंख, सोंठ, पीपल, काली मिर्च और रसौत इन दवाओं को खूब बारीक पीसकर शहदके साथ गोली बना

ले। फिर जरूरत पड़ने पर आँखमें गोली को आँजे तो फूली काँच और तिमिर रोग नष्ट हो।

चन्द्रोदय का सेवन

चन्द्रोदय और लौंग समान भाग लेकर खलमें कूट डाले। जब खूब घुट जाय तो एक२ रत्ती की पुड़िया बना ले। जब किसी रोगी को देने की आवश्यकता हो तो इसको एक पुड़िया देवे। इसके सेवन करनेसे तृषा, वमन कब्जियत, अजीर्ण, हिचकी, मूर्च्छा और मूत्रस्राव का रोग दूर होता है। क्षुधा और कर्म शक्ति की वृद्धि होती है।

चन्द्रोदय, भीमसेनी कपूर, जायफल, काली मिरच और लौंग इन सबको एक २ रत्ती और कस्तूरी तीन चावल भर, इन सबको एकमें पीस कर एक शीशीमें रख लेवे और नित्य दो रत्ती पानीमें लगाकर बराबर महीने भर सेवन करे तो बालकी सफेदी, अजीर्ण और बुढ़ापेमें सब देहमें उत्पन्न हुआ सलवट तथा दूषित पानीसे उत्पन्न हुए रोग नष्ट होते हैं और भूख बढ़ती है।

रसकपूर

शोधा हुआ पारा, सफेद खड़िया, पुराने ईंटका चूरा, सफेद, बिना भूनी फिटकीरी, गेरू, बिलकी मिट्टी, कुम्हारके बर्तन रँगने की मिट्टी और खारी नमक इन सब दवाओं को अलग २ दो-दो पैसे भर खरीद लाकर हर एए को अलग २ पीस और कपड़ छान करके रख छोड़े। पश्चात् हर दवाओंके साथ अलग २ से पारे को दो-दो पहर तक घोंटे। जब इस प्रकार दवा तैयार हो जाय तो सबको डमरू यन्त्रमें भरकर चार पाँच पर्त कपड़ मिट्टी को चढ़ाकर घाममें तीन दिन सुखावे। सूख जाने पर यन्त्र को चूल्हे पर चढ़ा कर ३२ पहर पर्यन्त आँच देता रहें। जब आग अपने आप बुझ जाय तो यन्त्र को चूल्हेसे उतार ले। ऊपर की हाँड़ीमें सफेद रंग का पारा जमा रहेगा। यही रसकपूर है।

रसकपूर सेवन का नियम

कस्तूरी २ रत्ती, लौंग २ माशे, सफेद चंदन २ माशे, कशर ४ रत्ती और आधी रत्ती रसकपूर

इसको खरलमें घोटकर पानके रसमें एक चने बराबर गोली बना ले, बस इन्हीं गोलियोंमें से एक-एक गोली नित्य सेवन करे तो अग्नि बढ़े, शरीर पुष्ट हो, पुरुषत्वकी वृद्धि होवे और बिगड़ा हुआ उपदंश जाता रहे।

रससिन्दूर को

शुद्ध किये हुए पारेमें उससे दुगनी शोधी हुई गन्धक मिलाकर इनको खरलमें छोड़कर कजली करे। पश्चात् आतिशी शीशीमें रखकर सात पर्त कपड़ मिट्टी करके घाममें सुखा दे। जब सूख जाय तो शीशी को बालुका यन्त्रमें रखकर यंत्रके मुख को ईंटसे ढाक दे। फिर आँच देना प्रारम्भ करे। बराबर २८ पहर तक आँच देता जाय। पारा ऊपर आ जायगा। आग बुझने पर उतारकर शीशी फाड़ डाले और उसके भीतर की लाल चकतीको निकाल ले, बस यही रससिंदूर है।

रससिंदूर सेवन—विधि

दो रत्ती रससिन्दूरको दूध और मिश्रीके साथ नित्य सेवन करे तो श्वाँस, नपुंसकता, खाँसी

प्रमेह और वीर्यक्षीणता ऐसे कठिन रोगोंका नाश होकर शरीर पुष्ट हो जावे । इसका दूसरा नाम हरगौरी रस है। इसके सेवन करने वालेके समस्त रोग दूर हो जाते हैं।

परिशिष्ट-चिकित्सा

धातुक्षीणतापर जलका व्यवहार

(१) जलके व्यवहारसे भी असाध्य रोग आराम होते देख गये हैं। यदि आप कठिन तथा प्राचीन कब्ज और धातुक्षीणतासे पीड़ित हों तो नित्य प्रातःकाल नदी या पोखरेमें जाकर एक या दो गोता लगा लीजिये। उसके बाद खद्दर के गमछे से खूब रगड़ कर शरीरको पोंछ दीजिये। पश्चात् नाभी बराबर पानीमें खड़े होकर गमछेको पानी में भिगोकर दोनों हाथोंसे नाभीके दोनों तरफ पेड़ूपर उतनी देर मालिश कीजिये जितनी देरतक के मर्दनसे आपको पूर्ण ठण्ढक मालूम होने लगे। ऐसा करनेसे रोमकूपों द्वारा संचित मल विषोंका निस्सारण होने लगता है तथा आँतमें ठण्डक पहुँचकर गर्मीको शान्त करती है और इसके

आवर्त कार्यमें सहायता पहुँचकर कब्ज और धातु-क्षीणताको जड़मूलसे नाशकर देता है। इस विधिको धैर्यपूर्वक कुछ दिनके लगातार करते रहनेसे अपूर्व लाभ देखनेमें आता है। इसलिए तुरन्त घबड़ाकर इसे छोड़ नहीं देना चाहिये। यह अत्यन्त लाभप्रद विधि है तथा इसके व्यवहारसे कुने साहबके बताये हुए उदर-स्नानके समान लाभ होता है।

दूसरी विधि

(२) लिंगके मुण्डकी ऊपरवाली स्वचाको खींच लीजिये और एक-दो मिनटतक उसे वाम हस्तकी अँगुलियों तथा किसी मोटे कपड़े द्वारा रगड़ते रहिये और दाहिने हाथसे ठण्ढा जल उसी पर गिराते जाइये। इस स्नान को मेहनस्नान कहते हैं। कुछ दिनोंके प्रयोगसे मस्तिष्क प्रवाह, सिरमें चक्कर आना तथा धातुका अस्वाभाविक रूपसे निकलना बन्द हो जाता है। क्योंकि जिस त्वचाको आप रगड़ते हैं उस त्वचामें प्रायः शरीर की सभी मुख्य-मुख्य रगोंका सम्मेलन है।

(३) सोनेके समय रात्रिमें भोजन करनेके बाद ठण्डे जलसे हस्त, पाद तथा मुख-मण्डलको धोकर और सूखे गमछे से पोंछकर सोनेसे गाढ़ी निद्रा आती है और बुरे-बुरे स्वप्नोंको भी मनुष्य नहीं देखता है।

(४) भोजनके पूर्व या पीछे तुरन्त जल नहीं पीना चाहिये। ऐसा करनेसे अग्नि मन्द हो जाती है, परन्तु खानेके आधा घण्टा बाद जल पीनेसे पित्त उत्तेजित होता है और पाचन क्रिया में विशेष सहायता मिलती है।

(५) कब्ज होनेपर डेढ़ पाव सुसुम जल पीनेसे थोड़ी देर बाद साफ पैखाना होता है।

(६) शरीरमें अधिक मल संचय हो जानेपर दूसरी कोई वस्तु न खाकर थोड़ी-थोड़ी देरपर थोड़ा २ ठंढा जल पीनेसे शरीरके सारे मल निकल जाते हैं और शरीर एकदम शुद्ध हो जाता है।

(७) जलका व्यवहार हम लोग प्रायः प्रति-दिन सारे शरीरपर स्नानके रूपमें करते हैं। इस-लिए जो दैनिक स्नान हम लोग नित्य करते हैं उसे

खूब सोच-समझकर करना चाहिये। किसी तरहसे धातुपात होनेपर सारे शरीरका स्नान बड़ा ही लाभदायक है। गंगा, यमुना, सरयू या किसी बहती हुई नदीमें स्नान करना चाहिये। पानीमें प्रवेश करनेके पहले मस्तकको धो लेनेसे शरीरके निचले भागसे गर्मी ऊपरकी तरफअर्थात्मस्तिष्कपर नहींचढ़तीहै।

संसारमें बहुत गाँव हैं जिनकी बहती हुई नदियोंके जलमें स्नान करनेसे कितने प्रकारके महा भयंकर रोग भी सहज ही चले जाते हैं क्योंकि उनके जलमें नाना प्रकारकी औषधि मिली रहती है। बहुतसे लोग बहुधा कुयें पर भी नित्य स्नान करते हैं। उन लोगों को चाहिये कि स्नान करते समय अपने हाथकी हथेलियोंसे सारे शरीरको तेजीसे रगड़ते जाँय और साथ ही साथ यह भी धारणा मनमें बनाये रखें कि हम अपनी हथेलियोंसे सारे शरीरमें जीवनी शक्तिका संचार कर रहे हैं। ऐसा करनेसे रक्तसंचालन खूब तेजीके साथ होने लगता है और

बदनमें विशेष स्फूर्ति आ जाती है। हथेलियोंसे रगड़ लेनेके बाद गमछेसे खूब रगड़कर सारे बदनको पोंछ डालना चाहिये। इससे जो पसीना शरीरके रोम-कूपों द्वारा निकलता है और चमड़ेपर सूखकर मैल बैठ जाती है सो साफ हो जाती है और पुनः स्वच्छ वायु रोम कूपों द्वारा शरीरमें प्रवेश करने लगती है।

वायु-चिकित्सा

प्रातः तथा सायंकाल बस्तीसे बाहर जाकर शुद्ध वायुका सेवन करना चाहिये। वायु सेवन करनेका जहाँ पर अच्छा स्थान न हो वहाँ पर सबसे पहले कोई बाग, बगीचा या तालाबकी तलाश करनी चाहिये और वहीं जाकर कुछ देर तक सुबह-शाम टहलना चाहिये। इससे स्वास्थ्यमें विशेष लाभ होता है, क्योंकि वृक्षोंमें हम लोगोंके श्वास द्वारा त्यागी हुई जहरीली वस्तुको लै लेना तथा हम लोगोंकेफायदेके लिएशुद्ध आक्सीजन देने की शक्ति है। खुले मैदानमें सीधे खड़े होकर जोर से श्वास खींचना चाहिये और धीरे-धीरे छोड़ना

चाहिये। ऐसा करनेसे रक्तकी सफाईमें सहायता मिलती है, सोना चौड़ा होता है और फेंफड़ेकी बिमारी खासकर दमेमें जब किसी भी दवासे फायदा न पहुँचा हो तो इससे जरूर लाभ होता है। परन्तु स्मरण रहे कि पहले पहल श्वास-प्रश्वासकी क्रिया अधिक नहीं करना चाहिये। क्योंकि ज्यादा करनेसे छातीमें दर्द और जुकाम हो जाता है।

विशेष अन्नाहार कर लेनेसे यदि कोई कष्ट मालूम हो तो चौकोपर चित्त लेटकर श्वास-प्रश्वास की गति बढ़ा देनेसे तुरन्त आराम मिलता है।

धातुक्षीणतावाले रोगमें वायु सेवनसे सारे शरीरमें स्फूर्ति आ जाती है और जो हतोत्साह मालूम होता है डट कर जीवनमें काम करने के लिए जोश पैदा हो जाता है। वायु प्राणके लिए अत्यन्त लाभप्रद चीज है। इसके बिना किसीका थोड़ी देरके लिए भी जीना कठिन है। अन्नके बिना कुछ दिनोंतक, जलके बिना कुछ घण्टे तक जीवित रह सकते हैं, परन्तु वायुके

बिना कुछ मिनट तक भी प्राण बचाना मुश्किल है। इससे आप खूब समझ सकते हैं कि स्वास्थ्य के लिए वायु कितनी आवश्यक वस्तु है।

श्वास-प्रश्वास क्रियासे दमा, औक्सिजन फेफड़ेमें भरकर निमोनिया तथा जलवायु परिवर्तन कर पहाड़ी देशों जैसे धर्म्मपुर इत्यादि जगहोंमें रह कर थाइसिस (राजयक्ष्मा) सरीखे महा भयंकर रोगों का नाश प्रतिदिन देखकर कौन नहीं कह सकता है कि जो काम बड़े-बड़े उपायों तथा अमूल्य औषधियों के खानेसे साध्य नहीं है वह केवल शुद्ध तथा साफ वायुके सेवनसे बिना प्रयास ही सिद्ध हो जाते हैं।

धूप-चिकित्सा

प्रातःकाल स्नान कर धूपमें सूर्य्यकी तरफ मुँह कर कुछ देर तक बैठनेसे बड़ा कल्याण होता है। खुले बदन पर सूर्य्यकी किरणें छाती पर पड़ती हैं जो यक्ष्माके कीड़ोंको मार डालती है। बदन पर भी कुछ देरके बाद व्यवहारसे पसीना चलने लगता है जिससे सब रोम-कूप खुल जाते हैं और

उसीके सहारे शरीरस्थ मल निकल कर शरीर शुद्ध हो जाता है। धूप जीवनके लिए बहुत आवश्यक चीज है। परीक्षार्थ एक आदमीने दो सुग्गे पाले थे। दोनोंको ठीक समय पर उचित परिमाणमें भोजन दिया करता था परन्तु एक का पिंजरा कुछ न कुछ देरतक धूपमें रख दिया करता था जिससे वह सुग्गा स्वस्थ रहा करता था और दूसरेका पिंजरा सर्वदा छायामें ही रक्खा रहता था। कुछ दिनोंके बाद वह बिल्कुल पतला दुबला और कराल कालके मुखमें जाने लायक हो गया। इसलिये नित्य दो घण्टे धूपमें रहना मनुष्यके स्वास्थ्यके लिये अत्यन्त लाभदायक है क्योंकि पसीनेके द्वारा रक्तसे विष अर्थात् शरीर का आन्तरिक मल निकल जाता है और उससे जो धातु बनती है वह शुद्ध और साफ बनती है।

धूप मनुष्यके लिए ही नहीं बल्कि सारे प्राणी मात्रका पोषक है। बिना इसके कोई प्राणी जी नहीं सकता। प्रायः आपने देखा होगा कि जिस पेड़में धूप अच्छी तरहसे लगती ह वह खूब फूलता-

फलता है और जिनमें इनका अभाव रहता है वे ठिठुर तथा सिकुड़कर ही रह जाते हैं। इसी तरह जिस मनुष्यके शरीरमें धूप नहीं लगती उनका मुख-मण्डल पीला तथा स्नायु कमजोर हो जाती है। आजकल सभ्य संसार इससे बड़ा-बड़ा काम ले रहा है और प्राणियोंके कल्याणके निमित्त शरीर पर वैज्ञानिक रीतिसेउपयोगकर बड़े-बड़ेभयंकर रोगोंको दूर करता है। यहाँ पर मैं इनके व्यवहार सम्बन्धी लेख समाप्त करता हूँ परन्तु इनकी विशद व्याख्या "सूर्य-किरण-चिकित्सा" तथा "रश्मि-चिकित्सा" में करूँगा।

पथ्यापथ्य विचार

(१) भोजन करनेके थोड़ी देर बाद कुछ फल खाना चाहिये। धातुक्षीणतावाले रोगीको अनार, केला, अंगूर, सेव, मोनक्का और अंजीर बहुत हीलाभदायक सिद्धहुई है। पित्तप्रमेहमें तो प्रातःकाल मोनक्का तथा भोजन करनेके थोड़ी देरके बाद केला अनारसे सारा उपद्रव शान्त हो जाता है।

(२) मांस मछली, उड़द, सेम, कोंहड़ा अधिक मीठा, तेल, खट्टा और चटपटा पदार्थ एकदम निषेध है।

(३) परवल तथा सलजम विशेष लाभदायक है। रामतरोई और कद्दू भी खा सकते हैं।

(४) बहुत डाक्टरोंकी राय है कि दूध सेवन करनेसे प्रमेह और थाईसिस अगर छट भी गये हों तो पुनः उभर आते हैं। परन्तु बहुतसे डाक्टर असाध्यसे असाध्य अवस्था प्राप्त हो जाने पर भी केवल दूधके सहारे रोगियोंको रोगसे मुक्त करनेकी विधि बतलाते हैं। आयुर्वेदके ग्रन्थोंमें पालतू पशुओं और पक्षियोंका मांस तथा दूध ही प्रमेहका कारण बताया है। मेरे विचारके अनुकूल अगर कोई गायका दूध सेवन करना चाहे तो उसे चाहिये कि प्रातःकाल गायका दूध दुहकर तुरन्त गरमा गरम ही (सेवन करना) पी लेना चाहिये। इससे बड़ा ही उपकार होता है। अगर ऐसा इन्तजाम नहीं हो सके तो पीने के पहले थोड़ा गरम कीजिये क्योंकि अधिक ठण्ढे हो जाने

पर असाध्य तथा भयंकर रोगोंके कीड़ोंके प्रवेश करनेकी सम्भावना हो जाती है और गरम कर लेनेसे उसके जीवाणु नष्ट हो जाते हैं। परन्तु दूध को अधिक देर तक औटनेसे जलीय पदार्थ का नाश हो जाता है और गाढ़ा हो जाता है। ऐसे दूधके सेवनसे पाचनक्रियामें गड़बड़ी हो जाती है और फायदे के बदले नुकसान होने लगता है। धातु बलवान् बनने की अपेक्षा कब्ज तथा उदरामय हो जाते हैं, क्योंकि यह देखा गया है कि रबड़ी और खोआ बहुत देरमें पचता है।

भोजन करने के बाद तुरन्त सोना, सोने के समय अधिक जल का पीना तथा मीठी वस्तुका अधिक सेवन ये तीनों बातें धातु क्षीणतावाले रोगीको कदापि नहीं करना चाहिये तथा इसको विष समझकर सदा सावधान रहना चाहिये।

धातुक्षीणता रोगपर कुछ आयुर्वेदिक चुटकिले नुस्खे

१—बडका दूध १० बूँद नित्य प्रातःकाल बताशेके साथ सेवन करनेसे बड़ा लाभ होता है।

२—नित्य भोजनके संग आँवला पकाकर

खानेसे प्रमेह रोग दूर होता है।

३—त्रिफलेका चूर्ण ताजे जलके साथ नित्य प्रातःकाल सेवन करनेसे रोग छूट जाता है। अगर मिजाज गरम हो तो त्रिफलेको मधुके संग सेवन करना चाहिये।

४—नित्य प्रातःकाल मक्खनमें मोतीभस्म तथा मिश्री मिलाकर खानेसे रोग दूर होता है। पित्त-प्रमेहवाले रोगीके लिए यह अत्यन्त लाभप्रद है। इसे एकबार अवश्य सेवन कर परीक्षा करनी चाहिये।

५—कच्चा परवल कूँचकर निकाला हुआ रस छः आना भर और मधु चार आना भर मिला कर पीनेसे प्रमेह रोग आराम होता है।

६—गुर्चको कूचकर निकाला हुआ रस आठ आना भर और मधु चार आना भर मिलाकर पीनेसे धातुक्षीणता नष्ट होती है।

६—नित्य प्रातःकाल मक्खनमें वंशलोचन, मिश्री और लायची मिलाकर खानेसे बहुत फायदा होताहै।

८—तुलसीके सात-आठ पत्ते नित्य प्रातःकाल सेवन करनेसे बड़ा लाभ होता है।

९—गायके ताजे औटे हुए दूधमें जेठी मधुकी बुकनी मिलाकर पीनेसे प्रमेह रोग शांत होता है।

१०—उषाकालमें नित्य खुलकर चरने वाली बकरीका दूध पीनेसे सभी रोग छूटता है।

११—गाजरका हलुआ घीमें बनाकर खाने से बहुत फायदा होता है।

१२—जिन्हें प्रमेहका रोग हो और दिमाग में गर्मी मालूम होती हो, उनको चाहिये कि शीशम के पत्ते एक भर और मिर्च एक आना भर आधापाव जलके साथ पीनेसे कुछ फायदा होता है।

१३—सिंघाड़े का हलुआ दालचीनी और बंश-लोचन मिलाकरखानेसे धातुका गिरना बंद होता है।

१४—गर्मीके दिनोंमें ईसबगोल पानीमें फला-कर मिश्री मिलाकर पीनेसे गर्मी शान्त होती है। और धातुमें भी बहुत फायदा होता है।

१५—बीजदानाको फुलाकर मिश्री मिलाकर खानेसे धातु गिरना बन्द होता है।

१६—गायके औटे हुये दूधमें सोंठ मिलाकर

पीनेसे कफ तथा वायुके प्रमेहमें बड़ा लाभ होता है।

सज्जनों ! अभी तक आपको जितने उपचार, दवाइयाँ या नुसखे बताये गये हैं वे सब देखनेमें बहुत ही सरल हैं। इन तरीकों को आप बहुत आसानीसे काममें ला सकते हैं। जितनी होमियोपैथिक दवाओंको नामावली दी गई है वे सब हरेक होमियोपैथिक दवाखाने तथा आयुर्वेदिक दवाइयाँ पंसारी या किसी अच्छे औषधालयसे सुलभ तरीके से मिल सकती हैं। दवाका मूल्य बहुत ही कम है और गरीब, अमीर सब कोई इसे आसानीसे खरीद सकते हैं। ये दवाइयों के नुसखे देखनेमें जितने आसान हैं वैसे ही फायदा पहुँचाने में रोगरूपी शत्रु पर अमोघ अस्त्र हैं। बहुत लोग आजकल ऐसे हैं जो किसी महान् उपकारक औषधके भी नाम जान लेने पर या मूल्य कम होनेके कारण व्यवहारमें लानेसे हिचकते हैं। परन्तु ऐसा नहीं करना चाहिये। जिस औषधिको आप बहुत हल्का समझते हैं उसकी सकल बदलकर और शीशियोंपर लम्बे लम्बे लेबुल साटकर विदेशोंसे

दिन-रात आते हैं और डाक्टर लोग उसीका प्रयोग करते हैं। रोगी भी शाशियों की खूबसूरती और डाक्टरोंके प्रभावसे प्रभावान्वित होकर खूब चैनसे सेवन करते समय अपनेको भाग्यशाली समझते हैं। इसलिए हमने प्रत्येक दवाइयोंके विस्तृत गुण इस पुस्तकमें वर्णन कर दिये हैं जिससे उसके गुणोंके बारेमें आपको पूर्ण बोध हो और शान्तिपूर्वक तथा विधिवत् उसका सेवन कर सकें। इन औषधियों का प्रयोग अनेकों रोगियों पर किया गया है और आशातीत सफलता प्राप्त हुई है। होमियोपैथिक औषधिको ऐसे जगह पर रखना चाहिये जहाँ गंध, धूप, धूआँ तथा विशेष गन्दगी न हो। आयुर्वेदिक औषधिको बनाते समय पूर्ण सावधानीसे काम लेना चाहिये और झिल्ली, कृमि जो कुछ भी गंदापन देखा जाय उसे साफ कर लेना चाहिये। होमियोपैथिक दवाइयों को सेवन करते समय पान, सिगरेट, बीड़ी, शराब, चाय, कहवा या किसी प्रकारका मादक द्रव्य एकदम निषिद्ध है। भोजन करनेकी सामग्रियोंमें लहसुन,

प्याज, मरिच या विशेष मशालेकी बनी हुई चीजों
से परहेज रखना चाहिये। जहाँ तक हो सके ख
लक्षणों को मिलाकर दवा सेवन करनी चाहि
क्योंकि होमियोपैथिक विज्ञान द्वारा चिकित्स
करनेमें लक्षण ही प्रधान है। जनेन्द्रिय स
पीड़ाओंमें ऊँची शक्तिवाली दवाइयोंका
लाभकारी है। रोग नया होनेसे नीची श
दवा भी प्रयोग कर सकते हैं। परन्तु बह
शक्ति के ही लिए है।

मक्खनका गुण

नवनीत (मक्खन) शीतल, बलका
खट्टा, वीर्यवर्द्धक, श्लेष्माकारक, पित्त-वात
तथा शोथरोगी, क्षयरोगी, क्षीण, अत्य
वृद्ध और बालकोंको हितकर है।

॥ समाप्त ॥

मुद्रक—ज्ञान मुद्रणालय, सुधाकर रोड, खजुरी वार

मुद्रक स्वतन्त्र भारत प्रेस, वाराणसी।